

विद्यया ऽ
॥



राजकमल प्रकाशन

दिल्ली ६

पटना ६

विभाके ५२

जानकीवल्लभ शास्त्री

प्रथम संस्करण १९७१

© आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्री

राजकमल प्रकाशन प्रा० लि० पत्रबाजार सि० ६ द्वारा प्रकाशित
और माहारा प्रिंटिंग प्रेस वे १८ तवीन माहारा जिला ३२ द्वारा मद्रि
आवरण मुम्बैव दुगन

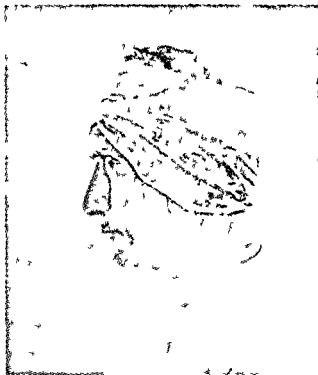
अपनी 'फजली' की उस करुण-घातर दृष्टि को,
जो चिरविदा के पूर्व—
मेरी, निरयक प्रायनाओं से पयराई हुई, आँखों से फिर फिर टपराई थी ।
'दु ख-सखेदनायंघ रामे चिंत-यमपितम् ।'

—जानकीवल्लभ शास्त्री

निराला निवेदन,
ध्यया-मदिव निशा वा
प्रथम प्रहर
१६ २ ६६



निराला



महाकवि
निराला



आचार्य
जानकीवल्लभ शास्त्री

तोड़ती पदपर

फिर तोड़ती पदपर ! —
रुखा उसी मैने इलाहाबाद के पथ पर —
वह तोड़ती पदपर ।

म
कोई न झापादार
पड वर, न अलके लले, बड़ी हुई, रकीकार
रामा मन, भर बेधा, भोवन,
नत नयेन, प्रिय, कारित सब,
गुरु ह्योडा अंक कइती बार बार प्रशय
साधने तर्कमालिका अदालिका, प्राफर,
बच रही थी भुप
गतिफि के दिन, दिवा का
उठी मूलसाती रूप;
रुई ज्ये जसली हुई — म,
गंदे निनगीं छा गई,
प्रेम हुई उपहर —
वह तोड़ती पदपर ।

देखते देखा मुझे तो लख बाँटे
उस सबन की मार देखा छिनतार,
- "दरमद" कोई नहीं,
दुकीं उरु उरु हीरे के
जो मार के राई बरिं,

रुजा सहजे खितार

रुनी नैने वह नही जो भी हुनी मडार।

एक रूप क बाद वह कोंपा हुया,

दलेक माये ह गिरी लीका,

लीन डाले कफ मे दिजा ज्वा केहा,

मे ताउती पलपर।

गीत

(बहार - लयन)

दिख लवा खितार लो।
बाधक दिख हाट, अपने
मडक पल मडकार दो।

अच्छा क कालिदल बिले,
गति पवन म मापे परपर
मीड - प्रभयवलि दुले
गीत परिफल बहे निफल
दिख बहार, बहार हो।

स्वप्न ज्वा सजि जिर
यह तदी, यह सरित, यह अर,
महे गगन, मनुदाय।

कुसुम बलयित - सरल - दुर्गजिल
हाय का उदहार हो।

38 Nanyalwahrah,
Lucknow

17 4. 36

प्रिय जानकी बलु मणि

सबके ऊँ आदर में पूरे मन [है]
है, फ. मैं मज नई [किसी] क्या
कांग्रेस में मैं मज याजित अर्थ [व]
हा गया है, आप आठ जाने को रिक्त
मंजिये या मुझे ईरु, मजने के लिए
लिखिये V आदर, नि ली

भस्मामंडी हाथीश्यामा, लखनऊ
२२ ३ ४९

१५५३३
आपका वल्लभ जी,

आपका पत्र तथा सगा
पत्नी पत्र से दिया मखन मिला।
भावना शब्द में पद्य है। आधुनिक
हिन्दी कविता जो बड़ी सुन्दर
वेदान्त में जल्द आचार्य की परीक्षा
देगे, जहाँ प्रश्नता की बात है।
आपका जल फल दे चला है।
मैं अपने जेना के विद्वान देसना
चाहता था, इतब रहा हूँ। हिन्दी
को आर्थक-से आर्थक शब्दों
अलग विषय के विद्वान सबक
चाहिये थे, मिलते जा रहे हैं।
साहित्य सबको लेकर है, इत्यादि
सबकी श्रेष्ठता अनन्त।

में आपको 'पबन्ध-परिभा' वाद में
 अनुवाद, वन्दना, कुछ नहीं
 गज सका। वन्दना में जोड़ा
 जोड़ा ३ जोड़ों में लिखकर
 लख बन्द कर दिया गया।
 भुमाकेन, फिर लिखें। आपके
 कुछ लिख मैं नहीं पढ़े। आरती
 और कमला मेरे पास नहीं
 हन्ती। आकर बन्द हो गईं।
 तसकाली लिख जाने की पाबन्दी
 पुरा नहीं की जा सका। इस
 लक्ष्य है, अद्वैतान्तक, चौक से
 सब को एकसाथ ही जो है।
 बहु को मृत्यु ही बड़ी बरत
 कैथा है। मैंने अद्वैतान्तक धारा
 और समाजवाद को इधर कुछ
 अध्यायन किया है, कुछ लिख
 रहा है। कितना सह दिन कट जाते
 हैं, शरीर आपका - निर्वाण

माहित रूप बदादुर धीमा पाठित धीमास्यणे,
 चतुर्वेदी एत ए।
 दारुमल्ल, सुभादाभाद
 २ १ ४३

प्रियर्था आचार्य

काठि कुंत आदिका वन मिला। उरु
 उदेलु हे गद्या। काठिवयी जी से आपके समाचार पूरा
 चका था। इस समय भी वरु पडी है। समुल्लु से
 उनका एक लेख समुद्र निकल रहा है, उरु उदेलु से
 आये हुए है।

आपके इस सफलता से वरु उदेलु
 होने का समाचार घटा भी नकीन निरुमल्लु से
 इस रेडि सुनागु उरु रेडि नकीन प्रगातिशीली-की
 सेठक थी। आये वरु वरुमल्लु के साथ सांख्यिक
 कार्यकलाप का भी उरु उदेलु से सुनाया।
 तथा भी मलेदिया से भी मीन मडुने
 तक कीमार रुडा और एक मन के करीक वगिन घट
 गद्या। उन दिमा। येनकुट के पास रहता था। अब
 स्वस्थ है। आय पन्नेह सेर वजन इस समय भी कम
 है।

'मिले मरु बकरिहा' और कुकुर मता
 पुसिकाए निकल चुका है। 'आजिमा' एक उरुमल्लु
 वरु समुद्र जालु निकलनेकला है। उरुमल्लु कुकुर मता
 लावे है, उरुमल्लु 'अभ्युपम आदि मे' निकल रहे है।
 आदिकयो के कानो तक मीने पडे थी। उरुमल्लु उरुमल्लु
 विहार के भी प्रमुख राजनीतिक है। अब स्वस्थ
 मिस से संस्कृत की आभी कम से-कम अंगरेजीके
 योग्यता भी प्राप्त कर लाजिए। साधनोप १५२।
 आ एका - (१२१५)

विद्याभ्यासः विद्वान्नीव लुगुडा

— — पठं पृथिव्यं तव । समधिगताश्च
उन्देशः । अथगारैः वागतोऽहं प्रापममः । सखं
यातिस्त्रितं स्वभा, परन्तु, गतेऽपि पतिकूलतां
कोऽपि कारेण वा कोऽपि श्रेयत्, न विरोधोऽप्युना
कथ्यते । नैत इष्टिमन्त्रमापि कथापित् ।
प्रकाशागारमेव दृशतिस्त्रिलोचनस्य च । सर्वे
पुरे अन्धानि, मन्त्रे, सर्वत्राप्ति नवीनता; —
त'गपि, जानामी, जनाः परिहृशानि कमर्थदुप
वाहि सागरमपकाशितम् । खित यथा यद्विद्यते
स्वभुगरेत' स्वाना. गुलाय स्वस्वन्दुतया ।

गोरक्षपुरे कावेजेनै. रथापिते ह्यस्माकं
हेनरेनव गुगतउ'व समागम्य । पठ 'भारते'
मम लेखम्, प्रकाशिते ।

स्वस्पोऽस्मि । चिन्तामन्थेनागतमुले ।
साहृदयम् । इति शम् ।

प्रकाशने कितनी
गदति ॥ ३३ ॥
विस्तृत

तव

शुभाशोकः

1

निराला
और उनके ये पत्र

निराला के पत्र

सकल गव दूर करि दियो
तोमार गव छाडियो ना !
सवारे डाकिया कहियो, जे दिन
पावो तब पद रेणु-वणा ! !

मैं अपना और सब गव दूर कर दूंगा परन्तु जो गव मुझे तुम्हारे लिए है उसे तो न छोड़ सकूंगा। इतना ही नहीं, जिन दिन मुझे तुम्हारी चरण रेणु का एक वण भी मिल जाएगा, मैं उस उस दिन सिर-आँखों पर रखकर चुप्पी न साध जाऊँगा, सब लोगो को पुकार-पुकार कर जीवन की उस सर्वोत्तम उप-विधि का भेद बताऊँगा।

+

+

+

और जिस दिन (१६ १६३५ ई० की) लौकिक और अलौकिक के शक्त वस्तु सतुबध से मनीषी महाकवि निराला के दशन हुए, मैं अपने भावाद्रो को चिन्तन के स्पन्दन से न डक सका, न डग पर ला सका हर जगह डका जहर बजात लगा।

कि छुदा नहीं तो खुदी नहीं, जो छुदी नहीं तो छुदा नहीं !

आधुनिक हिन्दी कविता को अभी निराला से बड़ा कोई कवि नहीं मिला है। मुक्तिबोध के 'अंधेरे में' डा० नामवर सिंह को निराला-अभी भाषा की 'सिजस्क्रियता' दिखती है। यही नहीं, 'अघकार की गहरी पटभूमि पर एक आलोक रेखा खींचकर बालजयी काव्य-वृत्तित्व का जा प्रतिमान किसी समय निराला की 'राम की शक्ति पूजा' न उपस्थित किया था, डा० नामवर सिंह के अनुसार 'अंधेरे में' के द्वारा मुक्तिवाद्य न उसी तरह की दूसरी काव्य-वृत्ति, जिसे नई कविता की परम उपलब्धि कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी प्रस्तुत की। नागाजुन के पन व्यङ्ग्या में आलोचना को निराला के ओज और तज की झलक मिलती है। डा० रामविलास शर्मा के अक्खडपन और गो दूब कहने की प्रवृत्ति में लोगो को निराला का फक्कडपन दिखाई देता है। और आचाय

नन्ददुलारे बाजपेयी तथा विष्णुचन्द्र शर्मा ने तो हिमायत की हद कर दी कि उन्हें मेरी सगीत कविताओं में निराला के उन्नत गीता का आभास मिला है। तात्पर्य यह कि किसी की प्रशस्ति में निराला से आशिक समता प्रदर्शित कर देने पर फिर जेहन लड़ाकर एक शब्द जोड़ने की भी जरूरत नहीं रह जाती। कुछ मिलाकर, अभी निराला ही आधुनिक हिंदी कविता के अप्रतिम प्रतिमान हैं।

अप्रतिम इसलिए कि डा० रामविलास के अक्खडपन में निराला की फकीराना मस्ती—

‘बना कर फकीरो का हम भस छालिब
तमाशाए अहले करम देखते हैं !’

नहीं है नागाजुन के सपाट ‘यग्या में राना और कानी—जसी सहज मामिब
व्यजना नहीं है, मुक्तिबोध में भाषा और भावों की सही विविधता नहीं है,
और पत्थर को जोड़ लगती हो तभी मरे—

‘ज्योति प्रपात झरो हे तम सघात पर,
आत्मा की शुचिता कल्पित चित गात पर !’

पाटल की सुधि विधी हुई है शूल से
ढका हुआ है क्षितिज भाग की धूल से
बँधा हुआ है श्रेय शिखर मत मूल से

स्वर्ण छमर मूजे कज्जल जलजात पर—
ज्योति प्रपात झरो हे तम सघात पर !

अथवा

आग जलती जो अतल में हृदय-तल में
वह घुआती ही नहीं क्या देखते हो ?
घेर अतभूमि पारावार निरचल,
लहर लहराती नहीं, क्या देखते हो ?’

—ऐस निष्पन्न गीता से निराला की उन्नत और ललित गीत-कला की प्रत्यभिज्ञा सम्भव है। साहित्य और साहस्य का अंतर ‘अन्तर महदनरम्’ है। यह न हो तो हर साठ नगरे कहनाए हर दिगम्बर को शंकर की प्रतिष्ठा प्राप्त हो। सवाई के मुनहू तज जन्मा के धुधुक्क में कल कर गया गया ईमान’— मुक्ति हूँ मैं मृत्यु में आई हुई न डरो—बन जाए।

जो हो एक मुझे अपनी नींद गान की छूट मिल अपनी खाल में मस्त रहन लिया जाय तो मैं तो कहूँ वंशक व (डा० रामविलास नागाजुन

मुक्तिबोध आदि) इन्ही शृङ्खला की अगली बढिया है। फिर भी निराला के ही शब्दा में—

अब तक धुन की
नहीं उठी लौ,
उनके आसमान की
अब तक नहीं फटी पौ ।'

अथवा 'मुक्तिबोध की जावाज म—पहाडा पठारो, समुन्दरो म खोई हुई
'परम अभिव्यक्ति अनिवार आत्ममम्भवा' की योज अभी जारी ही है ।

निराला तन, मन और आत्मा—नीना के भिन्न भिन्न स्तरों पर कभी एक साथ कभी बारी-बारी से जीते थे। जैसे 'धूलत वही अवधन कही के बाल का वम्बल बनान वाले—

'अपकन मूलमनादि तरु त्वच चारि निगमागम भने
पट कथ शाखा पञ्च वीस अनेक पन सुमन घने
फल पुगल विधि पट्ट मधुर बेलि अकेलि जेहि आश्रित रहे
पल्लवत फूलत ावल नित ससार बिटप नमामहे ।'

के तुलसी' के विरव का कुचल कर सहोर के पेठ लगाना चाहते हैं, जैसे—

बिनु गुद होइ कि ज्ञान ज्ञान कि होइ विराग बिनु ?
गार्वाहि वेद पुराण, मुख कि लहिय हरि भगति बिनु ?'

को हसकर उडा देना चाहत हैं और जस—

'मङ्गल मुद सिद्धि सन्नि,
पव शवरीश वदनि,

ताप तिमिर-तरुण-तरणि किरण-मालिका !'

—की टक्कागी बात फेर कर इमली के बिये चलाना चाहते हैं कहना न होगा, एस ही के छायावाद रहस्यवाद के एसी पञ्चर ठोकने हैं कि पजावे का पजावा खखड हो जाता है। निराला का विराट व्यक्तित्व दुपहर की छाँह-मा छोटा पड जाता है। कुंहरमुत्ते का कलिया पका खाकर—

'होगा फिर से दुधय समर
जड से चेतन का निशिवासर,
कवि का प्रति छवि से जोयनहर, जीवनभर,
भारती इधर, हैं उधर सबल—

जड जीवन के सचित कौशल,
'प, इधर ईश हैं उधर सबल माया कर ।' —तुलसीदास'

—यदि चेतन जड स टक्कर ले सकता हो ता ल, में जानता हूँ, नहीं ले सकता, जड जड ठहरा आन-वान शानवाला, वान पत्रड कर निवाल देगा चेतन को धमक्षेत्र—कुरक्षेत्र से !

यही कारण है कि The knowing subject is itself unknown

किन्तु यदि तीनों स्तरों के स्वर सम्भार को तीन मप्तवा की सी अन्विनि मिले तो निराला ओडव पाडव जाति क नहीं, सम्पूर्ण राग के पूण प्रतीक सिद्ध होंगे । शक्ति, शील और सौन्दर्य का उनका स्वर झरना जमिय गरल शशि शीकर रविकर झरता हुआ 'श्यामली-सोनाली' को ही नहीं मुखर करता अपितु जीवन की सम विषम तलहटियों को समवदना से परिप्लावित करता हुआ अखिल असीम म विलीन होने के आन्तरिक जाग्रह से उल्लसित प्रतीत होता है जैसे तमतमाया हुआ सूरज चाहे जितना पानी सोख ल समुद्र लहराएगा बादल की एक-एक बूद रिस जाय, वह आसमान म गरजेगा ही

मूर्दों जब जग ने जाँखें,

छोलीं री इनने पाँखें,

उड़ने की नम को ताकें—

उपवन की परिघा आली !

— गीतिका

देश-काल के शर से बिध कर

यह जागा कवि अशय छिं धर

इसका स्वर भर भारती मुखर होएगी !'

— तुलसीदास

निराला न पृथिवी स्थानीय (Terrestrial), अन्तरिक्ष स्थानीय (Aerial) तथा द्यु-स्थानीय (Celestial) जीवनानुभूतियों को अपने काव्य मान्य म समान कौशल से गुम्फित किया है जिन्हें मिट्टी म मिला कर प्रगतिशील समीक्षा का खात तो नगार की जा सकती है, किन्तु उमस प्राणों क सब रग नहीं उगाए जा सकत । निराला की हिरण्मय कला म धाम-पात की हरियाली वर्जित नहीं है ।

प्रकाशित प्रपंच म स्वप्न सृष्टि का छोरर जागरण का महत्व नहीं उजाला जा सकता । निराला की व्याप्ति तीना म है इही अच्युत बंधनों म निराला का मुक्त रूप त्र्यं जाना चाहिए अथवा—

'तुम प्रेम और म शक्ति !

ज्या-नया गत क नीच उतर भी जाय,

‘तुम सुरा-याज घन अधकार,
म हूँ मतवाली भ्राति !’

का पल्ले पल्ला मुश्किल है ।

उन्हें धम-अधम, कृत-अकृत से जोड़कर छाटा तो बनाया जा सकता है, किन्तु तब उन्हें व्यापक और बड़ा बनाना दम्भ मात्र होगा । द्रव पदार्थ को जैसा मात्रा मिलता है, वसी ही आकृति उभर जाती है, जितनी व्यापक परिधि होनी है उतनी ही दूर म उमका प्रसार देखा जाता है । निराला ही काव्य प्रतिभा गलाए हुए सोने के समान ही थी । कोई उसे सागर का विस्तार देता है वही नाव का आकार ।

व्यक्ति के रूप में वह जैसे बमबाड़े के विमान भी थे और बगाल के ‘भद्र लोच’ भी, उसी प्रकार कवि के रूप में वह—

‘और अपने से उगा म
बिना दाने का चुगा म
कलम मेरा नहीं लगता
मेरा जीवन आप जगता’

—कुरुरमुत्ता भी थे,

‘जानता हूँ, नदी धरने,—
जो मुझे थे पार करने —

कर चुका हूँ, हँस रहा यह देख कोई नहीं भेला’

—स्थितिप्रज्ञ दाशनिव भी । ऐसे उनके व्यक्ति और कवि के कितने ही रूप थे । किमी एक का के-द्वीकरण छायाचित्र को अपने ही ध्याले में प्रतिष्ठित समझने-गैसा है ।

अवश्य दशन का उद्देश्य खण्णे में जखण्ड विभक्ता में समग्र, विराघी में सामञ्जस्य विशिष्टों में सामाय्य एक बहुत्व में एकत्व की प्रतिष्ठा है, किन्तु खण्डो, विभक्तो विरोधों और विशिष्टों की उपधा से यह समग्रता का बोध नहीं फूटता । अन्विति का अर्थ लीपापोता नहीं है ।

निराला सौन्दर्य-भ्रष्टा भी थे, आम द्रष्टा भी । वह मशिल्लिष्ट सवेदन शीलता के प्रतीक थे तो—

‘सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयो
ततो मुह्यत्य गुणपत्स्व नव पापमवाप्त्यसि’

—के निष्पाप परमहंसि प्रतिमान भी । उनके इन्द्रधनुषी काव्य-कलाप में बहुतरंगी विरणा की विन्मिक्त विमुग्ध-भारिणी छवि छटा है । परम्परा और

मौलिक प्रतिभा की ऐसी अतिरिक्ति निराग के पूरे केवल गोस्वामी तुलसादास में ही पाई जाती है।

‘जिस्म महदूद, रहे लामहदू’, फिर ये इक रनेबाहमी क्या है ?’

दूर और पास का देशगत भेद आगे और पीछे का काल-गत भेद बाप और कारण का नैमित्तिक भेद निराला की प्रतिभा की व्यापक परिधि में अपनी अहमियत खो देते हैं। त्रिपुटी नहीं जान चय और नाता तीनों यहाँ एकाग्र हो गए हैं।

उनकी जकड़ मकड़ बिन्ही पगु सम्भावनाओं की प्रतिच्छवि नहीं, उनकी दहक महक खीस या बहिःशक्ति की देन नहीं उनके नितान्त निम्न-जन्म जीवन में मोत की निम्न-घटा नहीं उनकी गंधवाहिनी मृत्यु जीवन के घनीभूत शून्य में गंधकोश विवेकन के अपराध में निर्वाहित नहीं हुई थी।

उनका आमूल-रचनात्मक विकास जिस उनके अनाम तेज के अनुत्पन्न नए नए सचि तोड़ने और गढ़ने का अक्रम इतिहास है। उनके स ऊँच उड़ने के लिए जटिल-स-जटिल प्रयास—यहाँ निराला की सतत साधना की अलघ्य शक्ति मत्ता है।

मान्यिकी दृष्टि उनके बाप-कलापी सम विषय प्रवृत्तियाँ, लक्ष्य और सम्भावनाओं की विभिन्नता का आकर्षण कर उनके अधिभूत जोर अध्यात्म (Cosmic and Psychic) तत्वों को छाँटती नहीं है उनके अनिवाय और All pervading—सर्वानुस्यूत प्रकाश और प्रभाव के कुछ छिटपुट कण बाटती ही है।

छिटपुट कणों के प्रकाश पुंज मानकर चधियाई जाँका विराट-दशान की प्रतिक्रियाएँ प्रकट का जा सनता हैं उह मीमांस मान लेना अनुचित है क्योंकि—

‘सिनारों के आगे जहाँ और भी हैं !’

Since I can not prove a lover

I am determined to prove a villain’

—मेरा विक्रम्य दुराग्रह उत्तम आलाचना में ही उपलब्ध होता है। अपरा’ के उद्गाना की परा शक्ति की विविधता सत्ता मध्ये है—

‘परास्य शक्तिविविधय श्रूयते !’

आत्मा और अनात्मा का विभाजन त्रिवेदमूल्य भी हा मक्ता है जविकर मूल्य भी। जम प्रकाश और उसके आश्रय—भूम में वास्तविक भेद न होना पर भी व्यवहार में भेद माना जाता है एम ही शक्ति का विविधता भी ममता जा

सक्ती है। या जड़ और चेतन दोनों प्रकृतियों से निराला ऊपर उठे प्रताप होने हैं। जीवन की जय-पराजय को जड़ मन और चेतन तन ने अनुलोम विलोम भाव से कुछ यो श्रेय कि वासना की मरिचा शुभ और अशुभ मार्गों से, दो धाराओं में बहना शुरू गई

हार गया,
ज्यों म उस पार गया !
जाना या नहीं, यह रहस्य क्या
यहाँ वहाँ अपना भी वश्रप क्या,
भोजन को भूमि वहाँ, शस्य क्या ?
कोई मुझको यहाँ उबार गया—
मार गया,

हार गया ! —‘आराधना’

जिसन मारा, वह हारा। मरने वाला तो उबर गया। गोडसे मरा, गाँधी अमर हो गया।

‘अपनी विभूति को राख यदि कर सक, भव विभव तर सके, उत्तम सेवर सके, जीवन अरण्य में निभय विचर सके, हर सके शोक, इतरो को उत्तारिए !’ —‘आराधना’

गोध-गणिका-अजामिल की भाँति अपने ही उद्धार के लिए प्रार्थना करने वाले भक्ता जैसे निराला वहाँ हैं ? न वह चाहत है कि दूसरे जैसे बनें। उन्हें तो तप और त्याग का माग ही मालूम है। वह अधिक से अधिक यही कह सकते हैं कि यदि तुम स्थित प्रम हो तो दूसरो को भी उसका अता-पता बता दो।

प्रार्थना निराला की—

‘बहुत तुम्हारे मारे मारे
फिरते हैं हरे बैचारे,
चेतन मधु-गाय के सहारे
उन्हें प्राण दो, मुझे हरो हे !’

और वहाँ मुनी गई ?

‘ठग को जग जीवन दान करो,
सुम शय प्रदान करो न करो !’

—इस युग में और कौन कह सका ? तभी कितनों ने जोर मारा, मगर जिस आन्तरिक उपद्रव के रूप में पाता था वह बाहरी अभिव्यक्ति के हाथ में न लगा वैज्ञानिक विश्लेषण छद्म-वाद बाधना रह गया, निराला की काव्यात्मक चुपचाप खतरा बन आगे निकल गई ।

उस महत्तम एकात्मपरायण का द्वैतात्मक अगाध बोध ग्राहक से घेरता है । घिरने पर सदा शिव विशिष्ट शब्द हो जाता है ।

ऋग्वेद के एक मंत्र में बताया गया है कि अग्नि द्वारा सरस्वति यज्ञ देवताओं को तपस् प्रदान करता है । आहवनीय अग्नि पूर्व से ग्राह्यपत्य पश्चिम से, मार्जालीय दक्षिण से और आग्नीध्रीय उत्तर से सरक्षण न दें तो यज्ञ पूण्यता न प्राप्त करे ।

निराला की प्रतिभा व्यक्ति समाज भक्ति और मुक्ति के चतुरस्र स्वरो से मुद्रा है । किसी एक आर से घेरा डालने पर बहुत चतुराई छानने के बाद भी बान नहीं घाती । निराला के अन्तर्विराधों के अनुसन्धान में अपना ठिकाना करना ही तो ही निराला का ठिकाना लगता नहीं नजर आता । वह तो प्रशस्ति और शकपरीक्षा में पड़े हैं —

‘सभी उहार उतार दिए थे
फिर से पण्डे श्वेत दिए थे
तीन-तीन के एक किए थे,

किसी एक अपवग मढ़ा था !” —‘अचना’

आकाश वायु, तेज जल और पृथ्वी अपने साक्षात् एक परम्परित गुणों के कारण ग्यात्मक अतः चेतन प्रतीत होने हैं । प्रकृति के तीनों गुण सभी वायों के कारण हैं । तत्त्वों का पिण्ड ही तो यह ब्रह्माण्ड है । ये द्वीप-द्वीपांतर वन-पवन सर-सरि-भागर मूप चन्द्र-तारे नभ-मण्ड-उपमण्ड—इस विश्व-ब्रह्माण्ड के सभी दृश्य-अदृश्य स्मृत-स्मृत पदार्थ—उक्त तत्त्वा का पिण्ड ही तो हैं । किन्तु इन पर भी ये गारे पदार्थ जड़ हैं । चतुर्थ का नामोनिशा तक नहीं है इनमें । ये इकट्ठे हाकर भी स्वयं मात्रापूर्वक कोई काम नहीं कर सकते ।

आग और पानी का मयाग में भाप बन जाती है । भाप से कितन ही यन्त्रों में गति श्रेणी जाती है किन्तु गति को चेतना मानना मत्तभ्रम है । हवा लगने पर मूमे घनघनान पने भी उठने लगते हैं । परवी का आर में जड़मति को मुक्तान अवसरवाणी चतुर्वार की विचरी विचरी मुग्धी का पतनान कहा जाता है । उठने पतों में चेतना और धर्मे-मी सर पर छाई पद-पदविधों में चेतना का

मूमिका
विवाम डूढ़ना गति गति को चलय मानने के भ्रम का ही परिणाम हो
सकता है।

निराला के दुस्तर तिमिर मायावरण भेदवर प्रतिपद पराजिन होन पर भी
अप्रतिहत बन्दे रहकर लक्ष्य पर पहुँचने की बात, जड गति को—इजन के
दौड़ने मूढे पता के उड़ने को—चलय चालिन माननवाले के लिए रहम्यात्मव
प्रलापमात्र है। अपने विन्तार—भूमा म अहवार के—प्रवृत्ति के विवार महत
और महत के विवार अट्टद्धार के,—मन के एव मूम भेद 'कर्ता हमिति मयन
—अहवार के डूज जाने का अपने रूप म स्थित होने (तदा द्रष्टु
स्वरूपे बन्धानम्)—कवल्य अवस्या को प्राप्त होने के आनन्द का अनुभव
वाग्जाल मात्र प्रतीत होगा। जो विनय पत्रिका' नहीं समझता, वह अचना-
'आराधना' के गीत भी नहीं समझ सकना। वाग्जाल तो वह समझता ही है,
सस्वार के बिना तत्त्व नहीं समझ पाता।

निराला की—

'निससे म कहूँ ध्यया—
अपनी जित विजित क्या ?'

—यह गहरी वेदना निगुनिया 'रहस्यवाद' नहीं, जड तत्वों से जूझते हुए
चेतन की, मानवीय संवेदनाओं भरे जीवन की हार-जीत की कहानी है।
आदर्शों और शाश्वत मूल्यों की डाली लगा कर वाजारु मुख-मुविघाओं की
दुकानों सजानेवाला से कवि अपने तिल तिल जलकर उजलते प्राणों की व्यथा
कैसे कहे ?

बच सवय ने या ही नहीं रिखा होगा

We poets in our youth begin in gladness,

But thereof comes in the end despondency and madness

क्या वह आरम्भिक आनन्द निराशा और उमाद में विपरिणत हो जाना है
और ईलियट जैसे जागरूक कवि को बहना पड़ता है Be still, and wait
without hope—यह मतलब मधेय है।

अनुभूति को किनी अनुभूति प्राप्त करने वाले की अपेक्षा हाती है या
नहीं ? चिन्तन अनुभूति नहीं है। बुद्धि में वही आता है जो पहले रूद्रियों में
होता है। हम जो कुछ जानते हैं वह बाहर से ही तो जाता है। स्मृति भी
बाहर से प्राप्त ज्ञान की ही होती है। जो प्रत्यक्ष नहीं होना, स्मृति उसके मनीव
चित्र खड़े कर देती है। इस प्रकार ज्ञान प्रवाह स्मृति चित्रों में उपवहित
होता रहता है। कल्पना भी प्रत्यक्ष और स्मृति की भाँति ज्ञान का एव अभ्य

—इस युग में और कौन कह सका ? तभी जिन्ना ने जोर मारा, मगर जिस आन्तरिक उपन्यस्य के रूप में पाना था वह यादूरी अभिप्राय का हाथ में लगा वैधानिक विश्लेषण छत्र-वृक्ष की धांधला रह गया निराला की वाध्यात्म चपचाप बतला कर आगे गिरे गई ।

उम महत्तम एवान्तपरायण का द्वन्द्व-आत्मा अगाध बाध बाहर में धरता है । धिरने पर सत्ता शिव विशिष्ट शय ही जाता है ।

ऋग्वेद के एक मन्त्र में बताया गया है कि अग्नि द्वारा मरणात्त यम देवताओं को तपित प्रदान करता है । आहवनीय अग्नि पूव से गार्हपत्य पश्चिम से मार्जालीय दक्षिण से और आग्नीध्रीय उत्तर से संरणण न दें तो यम पूणता न प्राप्त करे ।

निराला की प्रतिभा व्यक्ति समाज भक्ति और मुक्ति के चतुरस्य स्वरा में मुखर है । किसी एक ओर से घेरा डालने पर बहुत चतुराई छांटन के बाद भी बान नहीं घनती । निराला के अन्तर्विरोधा के अनुमानान में अपना टिकाना करना हो तो ही निराला का टिकाना लगता नहीं नजर आता । वह तो प्रशस्ति और शवपरीक्षा से परे है —

“सभी उहार उतार दिए थे
फिर से पटटे श्वेत सिए थे
तीन-तीन के एक किए थे,

किसी एक अपवग मढ़ा था !” —‘अचना’

आकाश, वायु तेज, जल और पृथ्वी अपने साक्षात् एव परम्परित गुणों के कारण गत्यात्मक अत चेतन प्रतीत होते हैं । प्रकृति के तीनों गुण सभी कार्यों के कारण हैं । तत्त्वों का पिण्ड ही तो यह ब्रह्माण्ड है । ये द्वीप-द्वीपान्तर, वन पर्वत सर सरि-सागर सूर्य चन्द्र-तारे नक्षत्र ग्रह उपग्रह—इस विश्व-ब्रह्माण्ड के सभी दृश्य-अदृश्य स्पूल-सूक्ष्म पदार्थ—उन तत्त्वों के पिण्ड ही तो हैं । किन्तु इतने पर भी ये सारे पन्थ जड है । चतन्य का नामोनिशा तत्र नहीं है इनमें । य इकट्ठे होकर भी स्वयं योजनापूर्वक कोई काम नहीं कर सकते ।

आग और पानी के संयोग से भाप बन जाती है । भाप से कितने ही यन्त्रों में गति देखी जाती है किन्तु गति को चेतना मानना महाभ्रम है । हवा लगने पर सूखे खनखनाते पत्ते भी उड़ने लगते हैं । परवी के जोर से जडमति को मुजान अवसरवादी चाटुकार की बिखरी बिखरी खुशी को घनानन्द कहा जाता है । उड़ते पत्तों में चेतना और घुएँ-सी सर पर छाई पद-पदबियों में चेतना का

भूमिवा

विकास बूढ़ना गति गति को चेतय मानने के भ्रम का ही परिणाम हो सकता है।

निराला के दुस्तर तिमिर मायावरण भेदर प्रतिपद पराजित होने पर भी अप्रतिहत बलने रहकर रक्ष्य पर पहुँचने की बात, जड़ गति को—इजन के दौड़ने, मूखे पत्ता के उड़ने को—चतय चालित माननेवाले के लिए रहस्यात्मक प्रयापमात्र है। अपने विस्तार—भूमा में अहवार के—प्रवृत्ति के विकार महत् और महत् के विकार अहवार के—मन के एव मूर्ख भेद 'वर्ताइमिनि मयने'—अहवार के न्य जान का, अपन रूप म स्थित होने (तदा द्रष्टुं स्वरूपेऽवस्थानम्)—कैवत्य अवस्था को प्राप्त होने के आनन्द का अनुभव वाग्जाल मात्र प्रनीत होगा। जो विनय पत्रिका' नहीं ममज्ञता, यह अचना'- 'आराधना' के गीत भी नहीं समझ सकता। बाग्जाल तो वह समझता ही है, सस्वार के बिना तत्त्व नहीं समझ पाता।

निराला की—

'किस्से मैं कहूँ क्या—

अपनी जित विजित क्या ?'

—यह गहरी वेदना निगुनिया रहस्यवाद' नहीं, जड़ तत्त्वों से जूझते हुए चेतन की मानवीय संवेदनाओं भरे जीवन की हार-जीत की कहानी है। आदर्शों और शाश्वत मूल्यों की डाली लगा कर बाजारू सुख-सुविधाओं की दुकानें मजानेवाले से कवि अपने निल निल जलकर उजलते प्राणों की क्या क्या कसे बटे ?

वह सबय ने या ही नहीं लिखा होगा

We poets in our youth begin in gladness,

But thereof comes in the end despondency and madness

क्या वह आरम्भिक आनन्द निराशा और उमाद में विपरिणत हो जाता है और ईलियट जैसे जागरूक कवि को कहना पड़ता है Be still and wait without hope—यह सतत मचेय है।

अनुभूति को किसी अनुभूति प्राप्त करने वाले की अपेक्षा होती है या नहीं ? चिन्तन अनुभूति नहीं है। युद्ध में वही आता है जो पहले इन्द्रिया में होता है। हम जो कुछ जानते हैं वह बाहर से ही तो आता है। स्मृति भी बाहर से प्राप्त पान की ही होती है। जो प्रत्यक्ष नहीं होता, स्मृति उसके मजबूत चित्र खड़े कर देती है। इस प्रकार पान प्रवाह स्मृति चित्रों से उपबहित होना रहता है। कल्पना भी प्रत्यक्ष और स्मृति की भाँति पान का एक अन्वय

श्रोत है यद्यपि वह सम्भावनाओं के क्षण को अधिक उजागर करती है, वास्तविकता की भूमि को कम। या कहें, जो वास्तविकता में दुःख है उसे ही वह सम्भावनाओं में सब सुलभ बनाती है।

ह्रूम के अनुसार प्रत्यक्ष स्मृति या कल्पना विशेष के बोधक हैं—विशेष वस्तु विशेष रूप विशेष भाव को प्रकाशित करने की शक्ति ही है उनमें सामान्य को प्रकाशित करने की नहीं। सामान्य की अनुभूति तो होती है किन्तु उसका वास्तविक अस्तित्व क्या कुछ ही सकता है? सत्ता अनुभूतियाँ की ही होती हैं अनुभावक की नहीं। चिन्तक अनुभावक नहीं हाना।

हम जिसे आत्मा, ब्रह्म, विष्णु आदि अभिधाना से जानते हैं वह एक विराट अनुभूति ही तो है। प्रत्यक्ष स्मृति या कल्पना घूम फिर कर बाह्य की ही परिष्कार में लीन हैं। आत्मा आत्मन्तर अनुभूति है। प्रत्यक्षानुभूति न कह कर शङ्कराचार्य ने अपरोक्षानुभूति शब्द का प्रयोग किया है। यह परोक्ष नहीं है इसलिए प्रत्यक्ष है यही बात नहीं है। अपरोक्षानुभूति का प्रयोग 'ननि-नेति' जसा इयत्ता का निषेधक है। परमहंस देव विवेकानन्द को बता सकते थे कि वह ईश्वर को विवेकानन्द (के रूप) से भी अधिक स्पष्टता से आमन सामन देख रहे हैं हम नहीं बता सकते। वदेह जनक ने गुरु और पाञ्चाल से यज्ञम आए हुए अनेकानेक वन्विद ब्राह्मणा से कहा— विद्वद्वृन्द आप में जो कोई ब्रह्म निष्ठ हो वह सोम से मडे हुए सींगोवाली मेरी एक हजार गीएँ ले जाएँ।

किसी को साहम न हुआ। यानवत्कय अपने शिष्य से बोले तू इन्हें ले जा।

तात्पर्य यह कि जिस जात्मानुभूति होती है उसे अपरोक्ष अनुभूति ही होती है। निराला को हुई थी।

परिमल-काल की परम्परोत्तर प्राथना में भी भूमा का अपरोक्ष सस्पश है

‘मेरे गगन मगन मन मे
अपि विरणमयी, उतरो !’

मन गगन मगन हाकर विरणमयी के अवनरण का प्रार्थी है। गगन-यापकता में अद्वितीय है तो—

‘तुम मेरे पास होते हो गोया
जब कोई दूसरा नहीं होता !’

का अन्तर्निष्ठ एतान् भी । अत्रय यह आत्मानुभूति अनुभावक से निरपेक्ष नहीं है । एकायन हो गई है—यह कहा जा सकता है ।

मैं समझता हूँ, इमते सता की महता छण्डित नहीं होती । कारण, 'जानत तुमहिं तुमहिं हूँ जाई' की अनछुई ऊँचाई का राष्ट्रीयकरण सम्भव नहीं है । अनुभावक अनुभूति से पृथक नहीं होता । तब मन आत्मा से पृथक नहीं होने । ऐसे ही अनुभूति की सावभौमिकता अधुण्य रहती है ।

चिन्तन और अनुभूति का अन्तर समझन में महादेवी के कुछ बहुत सावधानी से चुने हुए गीता से निराला के किन्ही अत्यन्त अनगढ़ गीतों की तुलना महापक सिद्ध होगी । महादेवी का—

'मांगने पतझार से हिमबिन्दु तब मधुमास आया !'

—एक निराला काल्पनिक चित्र है जिसमें अनुभूति की आद्रता को छोड़कर और मत्र कुछ है । किन्तु निराला के—

'सुमन भर न लिंग, सखि, बसत गया !'

में और चाहे कुछ न हो, एक ऐसी तरल सवेदनीयता है जो अनुभूति के खेत से मद्य स्नात बाहर आई है ।

अनुभूति और अभिव्यक्ति का विस्मृत विवेचन यहाँ अनावश्यक है । इनकी अनुरूपता क्या, एकरूपता में आत्मा का अधिवास है । याज्ञवल्क्य की परम्परा में निराला भी आत्मा का स्वरूप निरूपित कर गए हैं । काव्य का माध्यम प्रवचन को पी गया है, उपलब्धि की ज्योति सखत्र अगमगा रही है ।

परमहम देव, विवकानन्द, रामतीर्थ आदि में निमल बोध मात्र नहीं है । बौद्धिक कभी हादिक नहीं होता । साश्री, चतन, केवल की मुक्तावस्था की निष्क्रियता इनमें से किसी में भी नहीं थी—

गधवह हे घूप मेरी

हो तुम्हारी प्रिय चितेरी,

जारती की सहज केरी

रवि, न कम कर दे कहीं कर !'

—अणिमा'

+ + +

'कसी ज्योति छाँह से छलकी

दुबल ने हृद कर दी बल को !'

—'गीतगुञ्ज'

— + +

नयनों की नाय बड़ा बोई,
 यह छाली पाँच बड़ा बोई,
 मोती के माल बड़ा बोई,
 सागर से भँवर उतर आई !

ये भय या परिणय के पूटे,
 आँखों से जो आँसू टूटे ?
 पूछे किससे सशय छूटे

ये हर लाई या हर आई ! — गीतगुञ्ज

अनुभूति का यह प्रत्यक्ष, निकटतम रूप एक स अलग एक होकर भी सश्लिष्ट प्रतीत होता है। अभिव्यक्ति ने एक स एक को जोड़ लिया है। सम्बद्ध न होने पर भी यह असम्बद्ध नहीं है। हमारी अनुभूति सीमित न होती ता हम यह प्राथना न करत—

‘देवीं वाचमजनयन्त देवा
 स्तां विश्वरूपा पशवो वदन्ति
 सा नो मद्रूपमूज दुहाना
 धेनुवांसमानुष मुष्टतति ।’

प्राणा म रहने वाले देवताओं न बखरी वाणी का आविष्कार किया। हम उसे भिन्न भिन्न प्रकार से बोलते हैं। वह कामधेनु व समान अथ का अमृत पिला कर हमें पुष्ट, तुष्ट तथा आनन्दी बनाती है।

जो अज्ञेय है अनन्त है अलक्ष्य है अजन्मा और एकाकी है उस वाग्देवता के अतिरिक्त और कौन वाणी दे सक्ता है ?

मारण मोहन वशीकरण उच्चाटन को शास्त्र से जानना म अनथ की आशका है अथ से जानना ही जान है। मारण काम क्रोध का मोहन आराध्य का वशीकरण मन का स्तम्भन विषय वासना का उच्चाटन विश्व की नश्वरता के मनन से सुख भोग का। निराला के गीत भी जन मन रजन के लिए नहीं ह। मन का उन्नयन आत्मा की उपलब्धि ही उनका लक्ष्य है।

क्षण-क्षण की अनुभूतिया आत्मा का एक तथा स्थिर नहीं प्रतीत होने देती। सुख दुख से लिपटी होन के कारण अनुभूतियाँ द्रुतभाद सिरजती हैं। चिन्तु शूल फूल तज निमिर का द्रुद ओग नहीं जाता वह ता जीवन के साथ मरण की भाति अपने आप परछाई बना डोलना है। विद्या की यात छिडते ही अविद्या आ घमकती है ब्रह्म का प्रसंग आते हा माया घेरा डाल कर बठ जाती है। कभी दूसरा गजब दूट पडता है

“धूम एवान्नेदिवा ददशो नाचिम्नम्मादचिरेवाग्नेनक्त ददशो न धूम ’
(सत्तरेय ब्राह्मण) ।

—कि दिन मे आग का धुआं ही दिखाई दिया, घघक नहीं, और रात में घघक ही दिखाई दी, धुआं नहीं ।

डाक्टर रामविलास शर्मा ने दिन दहाड़े निगला की आग का धुआं देखा दिखाया, तभी रात में धुआंति हुए अंधरे में घघकती हुई आग की लपट अन देखी रह गई ।

आलम्बन की अनुमति आथय की अनुमति न हो सकी । भूमि एक ही आयाम है, किन्तु मूमा ता वीरव्य की वह लकीर है जिसने समानान्त खिंची भूमि की लकीर अपने-आप छोटी पड़ जाती है । जिसके चरण-स्पर्श की आकांक्षा से कवि के हृदय-वमन के सारे दन खुले थे, जिसकी मौन प्राथना उनके प्यास प्राणा में गूजती थी, वह माटी की मूरतों में गही बूँडा जा सकता, वह मन की विदेह धारणा है ।

रूपों के अभाव में सराज की सामान्य चिकिरसा भी न हो सकी, प्रयत्न के बाद भी दुःखारेला भागव से निराला को दम स्पष्ट न मिल सके और वह बीराने में दम तोड़ती हुई अपनी इकलौती लाडली बटी से अन्तिम भेंट भी न कर सके—यह कसब वतमान पूजीवानी व्यवस्था में आग लगाकर मासमास की दुःखभी बन जाती तो निगला को विरज की बुलन्दी से मिट्टी में धमीट लाना क्या बुरा हाना, किन्तु—

‘गीते मेरी, तज रूप-नाम,

वन लिया अजर शाश्वत विराम

पूरे कर शुचितर सपर्याय

जीवन के अष्टादशाध्याय

चढ मृत्यु-तरणि पर तूण-वरण,

कह पित पुण आलोक-वरण,

करती हूँ मैं, यह नहीं मरण,

सरोज का ज्योतिरशरण तरण !’

—मरोज-स्मृति

लिखन बापे की दमदार पीढा तूफानी नारेबाजा या दम दिलासे की नहीं हो सकती,

दे, म कलें वरण,
जननि, दुष्ट हरण, पद
राग रञ्जित मरण !'

कोई मुसूयु नहीं लिख सकता,

'मुक्ति हूँ म, मृत्यु मे
आई हुई, न डरो !'

मृत्यु की विभीषिका से कांपती [हुई] वाणी नहीं है। यह आई तो राजी, नहीं तो रोजा भी नहीं है। यह तो उमी (नायमात्मा बल्हीनेन लभ्य) आत्म-तत्त्व की उदात्त अभिव्यक्ति है जिमने अद्वितीय व्याख्याता स्वामी विवेकानन्द थे। मानवता की आत्मा की महिमा से मण्डित करने का बीड़ा उठाया था स्वामी जी ने। वह प्रेम प्रकाश से हृदय हृदय के बीच की छाड़ियाँ पाटना चाहते थे। आत्मोद्धार उनका लक्ष्य था जब भा दरिद्रनारायण की सेवा व वह प्रथम प्रेरक थे। अशिक्षा अस्वास्थ्य और अविचनता को समूल नष्ट किए बिना आत्मा का उद्धार नहीं हो सकता इस उनसे अधिक कौन जानता था ?

यहां माध्यम व भिन्न होने पर भी निराला विवेकानन्द से अभिन्न थे। रवीन्द्रनाथ की निविड हार्दिकता और विवेकानन्द की अनुभूत आध्यात्मिकता को जाड़ने वाली कड़ी व रूप में निराला की कविता को परखना चाहिए।

रवीन्द्रनाथ का विलास भी वैराग्य का बाना बनाए फिरता था, निराला का वैराग्य जहाँ विलास का बाना बनाता वहाँ वह रवीन्द्रनाथ के स्तर के कवि दिखलाई देन जहां वह विशुद्ध रूप में प्रकाशित होता वहाँ विवेकानन्द के स्तर के। द्विवेदी युग की गद्यात्मकता निराला में ढकी गई है विवेकानन्द की कविताओं में अध्येता को वह रस जालोक चटक चाँदनी से भिन्न, रोमण्टिक प्रभाव से शून्य अपनी निविशेषता में विशिष्ट दिखगा, वह गद्यात्मक नहीं है।

तेसे ही निराला को स्वेच्छाचारी कहने भर में काम न चलेगा उन्हें मुक्त पुरुष मानना ही होगा। अतः वह विमल हृदय उच्छवास ही है जिसे (सूय—) बाल्मिकिनी कविता' समझ कर नायिका भेदी जालोकको ने दुर्बोधन दुःशासन को नीचा दिखाने वाले पौरुष का प्रदर्शन किया था। निस्सन्देह तब भी कविता-कामिनी बाल्मिकिनी दूखने थे यहा तो सूय के ज्योति-तप्त तारुण्य के स्पश से ज्ञानाधयी जडना की निमशिला पिघल कर 'बाल्मिकिनी कविता बन गई थी। ज्ञान की कविता को कविता का ज्ञान परास्त न कर सका, बेशक थोड़ी जाफन पीछे लगा दी। साहित्य व ज्यातिपी बनारसी तरंग में शार मचाने लगे कविता निराला को छोड़कर भाग गई किसी मधुशाला में छिप

गई, बापू व छीना की देख रेख में 'सन्निात' का इलाज कराने का इरादा था उमक, मो कलकत्ते का टिस्ट बटा कर विशाल' मल्ला व अघाड में मग्न और अथ का इन्द्र दग्गन घली गई ।

निराला न पेट मगान कर अध्यात्म वाला था । गिटपिट करन थाग का यह अपन धूने घात घात थे । बकरी के घोर का बटारी से मारन थाग व पर हरदम बगहरी लगी रहती थी । इधर वार्ड भी कवि उनका ममभव न था । एन भी आगोषक अपा सब अरमा निवाले बगैर न रहा । कोई राजयोग्य का दाग बनाकर जग-जापूदा तलवार निवाला, कोई रग पचाध्यायी का पाठ पढा कर 'जुही की कली' और 'मोगाली' में रगामाग का इजहार करता । दन विदेन के साहित्य-बना से 'राष्ट्रीय मुद्राएँ' निवालेन वालो की निरली मौलिकता अलग, अपनी ही बहाई हुई हवा में पहराती । बहु कहन कबीर हुए बिना वार्ड अमलो आध्यात्मिकता क्या जान । 'राष्ट्रीयता अलक्षता मिलावट में मग्न बनती है ।' कोई भी गहार गहीनशीन दशभक्त हो सरता है ।

आधुनिक युग में गांधी न होने तो बुद्ध और ईसा का पुनजन्म न हाना, निराला न हाने ता बाया माया व कागजी कमीद को ही आध्यात्मिक कविता कहा जाता । निराला न अनीन व निद साधक, मन् कविया को ही अपनी आजीवन बृच्छ गाधना में प्रतीति-योग्य बनाया है ।

जा जीवन भर उरगा निदा और प्रवचना महना रहा, पर जग मुह घोला, मही बोला

‘वारित करो अमृत मानव मन,
स्विर जसे सुगंधवासित तन
तुम्हीं रहो, बहते रहते कण,
तरे विशय, इस तरह तरो हो !’

—उसकी आध्यात्मिक उपलक्षि का लेखा-जाखा पेट और घूमघोर गगाह लें इगसे बडा 'यम्य और क्या हो मक्ता है ?' काग कि दलालो द्वारा पुरस्कार पगान गाने कमी उम अपुरस्कृत शिखाग की भी पुनार सुनते

‘सोधी रह मुझे चलने दो !
अपने ही जीवन चलने दो !’

अतीविक नि स्वाधता में पृथक कर दन पर उसकी निरकुश उगारता का, पागल्पन नहीं, तो और क्या अथ होता ? उसका उदासीन दशन भक्ति विहीन न था उसकी उच्चाम आत्मा निगध दह की भांति सजा शून्य न थी । 'गतावानस्य महिमा तना ज्यामाश्व पूष्प' ।

यहाँ अमाहि पिप, यज्ञानित आलापना का राग या आना है कि (मुझ जमा की) अध भक्ति व कारण निराला व व्यक्ति और कृत्य का वास्तविक (?) मूल्यांकन न हो सके। जहाँ व पुराणा व 'नि नि' चिन्तन पर भी चाँद-तारा का पुनर्मूल्यांकन जारी है वहाँ मुझ जमा व राग छ जायगा एतिहासिक चेतना सम्पन्न नर जागरण व अग्रदूत का पुनर्मूल्य निर्धारण काय ?

वस्तव्य है तो यही कि स्वदेशी भाषा विश्वी पारिभाषिक शक्तवली को दूनागरी म लिपि-बद्ध भर कर देती है, उमरा माधारणीकरण नहीं कर पाती। किम देश की बौन-मी उपलब्धि हम शिष्ट उपहार के रूप म प्राप्त हो रहा है इमका बोध नहा हो पाता। एमी स्थिति म हम स्थापना के विवट बध से आतंकित तो होने हैं उनक सहयात्री भावक नहीं बन पान। कविना आतक स गले के नीचे नहीं उतरला। दूसरी ओर निराला की भाषा है जो प्रत्येक मूल्य आकने वाले की कसौटी पर कुछ अनचीही रेखाए खीच दनी है

धर्मयोत्सार कवि के बुद्धम

चेतनोर्मियों के प्राण प्रथम

— तुलसीदास

+ +

यह वह कुछ कह कह आपस मे,

रह रह आती हैं रस-बस मे,—

कितनी ही तरुण-अरुण किरणों,—

देख रहा हूँ अज्ञान द्वार ज्योति पान द्वार ! — परिमल

स्थापको का सात समन्दर पार का ज्ञान—

करना होगा यह तिमिर पार

देखना सत्य का मिहिर द्वार !

की अनुभूति म अधिक सहायक नहीं सिद्ध होता। रस्किन टालस्टाय रोला होते ही कितने है ! विभिन्न प्रतीक-योजना के चक्र-ग्रह से निराला की साधना का सार-तत्त्व अक्षत नहीं कर पाना। बान नए से नए ढंग की अभिव्यक्ति की नहीं, मूल आलोक आप सस्कृति की है।

जहाँ तुलसी-दल और बिल्वपत्र तोड़ने के लिए भी पौदे और पेड़ स प्राथना की जाती हो —

तुलस्पमृतनामासि सदा त्व केशव प्रिया

केशवाय चिनोमि त्वा वरदा भव शोभने !

×

×

×

पुष्पवृक्ष महाभाग मालूर धोपल प्रभो
महेशपूजनार्थाय त्वत्पत्राणि विनोम्यहम् !

कि ओ अमृत तुलसी, तू तो विष्णु की चिर प्रिया है, मैं जो तेरी ये धोड़ी
सी पत्तियाँ छुटव रहा हूँ, इन्हें उही को अर्पित करूँगा। अपना लिए ऐसी
ढिठाई मैं कैसे कर सकता हूँ ? मुझ पर प्रसन हो, मेरा मनोरथ पूरा कर !

X

X

X

आ पवित्र बलवृक्ष, मुझे क्षमा करना, मैं तरे पत्र भगवान शत्रु की पूजा के
लिए चुन रहा हूँ। वहाँ निराला का यह विवन-गीत —

नाचो है, रुद्रताल !

आँचो जग ऋजु-अराल !

झरे जीव जोण शीण,

उदभव हो नव प्रकीण

करने को पुन तोण,—

हो गहरे अन्तराल !

फिर नूता तन लहरे,

मुकुल-नाथ बन छहरे,

उर तर-तर का हहरे,

नव मन, साय-सकाल !

—आराधना

प्रायः सम शब्द गंभी होने पर भी पन्त के सबत गीत^१ से सम्पूर्ण भिन्न भाव
भूमि पर स्थित है। निराला को अनित्य, अपवित्र, दुःख और अनात्म मे नित्य,
पवित्र, सुख और आत्मभाव की अनुभूति नहीं होती। वह 'अविद्या स आत्रान्त
नहीं है। विद्या' के सीमान्त प्रहरी है।

द्रष्टा चेतन है, बुद्धि जगः। निराला परा-अपरा की भाँति जड़-चेतन के
प्रबुद्ध विवेकी है। उन्हें 'अस्मिता' क्लिष्ट नहीं करती

अशब्द अधरो का सुना भाष,

म कवि हूँ पाया है प्रकाश—

मने कुछ, अहरह रह निमर—

ज्योतिस्तरणा के चरणों पर !

—सरोज-मृति

X

X

X

तुम्हीं गातो हो अपना गान,

ध्यय म पाता हूँ सम्मान !

—गीतिका

अतीन्द्रिय की अनुभूति के लिए निराला के काव्य में आरम्भ से अन्त तक सतत सघन देखा जा सकता है। मन की जाग्रत और स्वप्न अवस्थाओं से ऊँचे घडकर जिस आध्यात्मिक अन्त स्फुरण की अनुभूति निराला को हुई थी उसके अक्षर प्रमाण उनक काव्य में भरे पड़े हैं। अतीन्द्रियावस्था की ये ज्योतिमयी अनुभूतियाँ प्रसाद और महादेवी व बौद्धिक चिंतन में वही नहीं हैं।

यह ठीक है कि मन हर घड़ी उमी स्तर पर स्थिर नहीं रहता। जब कभी ही वह दुर्लभ क्षण प्राप्त होना है जो उसे इन्द्रियों की मीमांसा और बुद्धि की क्षमता के परे पहुँचा देता है। एन्द्रिय एवं बौद्धिक का अतिश्रमण मन न कर सकता तो—

नायमात्मा बलहीनेन लभ्यो,
न मेधया न बहुना श्रुतेन
यमेवम वृणते तेन लभ्य
तस्यथ आत्मा विवणुते तनू स्वाम ।

की अनुभूति मनुष्य का वदायि न होती।

मीथी बात यह कि भौतिक स्तर पर अमीम की अभिव्यक्ति नहीं हो सकती। अपने व्यक्तित्व का परिहार विण विना समग्र पकड़ में नहीं आता। अमीम जानन्द जहन्ता के उमूलन में से फटता है। इन्द्रिया अहम् को आगे रखने कहती हैं मन को उसमें निवटना होगा अहम् को सबक आगे में छेदेड कर सबसे पाछे खड़ा करना हागा —

तुम्हीं गती हो अपना गान
व्यथ में पाता हूँ सम्मान ।

बात यह है कि अहन्ता अधकार है उसकी शोभा पीछे ही रहने में है, ऐसे चान का आलोक निखर कर उस व्यथ होने से बचा लेता है —

मेरा दुख जरण्य किसलय दल ज्वाल,
जली वाली तुम कोयल,
दण्ड डाल पर बठी प्रतिफल
मुना रही हो तान ।
व्यथ में पाता हूँ सम्मान ! !

तुम्हीं गती हो अपना गान
व्यथ नहीं भरी गई करीर का आशोश ऊपर का दम भरना है — होगा वसन्त अपन घर का राजा ! उसके आगमन में मेरा तन क्यों रोमांचित होने

लगा ? उमे देखकर खिलन खिलखिलाने वाले कोई दूसर ही होंगे !

अथर्ववेद के एक सूक्त में कहा गया है कि प्रिय चाहने वाले को श्रेय की कामना करनी चाहिए। वहस्पति उसका माग-शान करेंगे। (वा० ७, अ० १, सू० ६)

वहस्पति' बड़े-बड़ो में सबसे बड़े जो हैं। वही भूमि की सीमा में उबार कर भूमा की अमीमता के दर्शन करा सकते हैं।

विराधामाम की विनोद भरी वाणी में राजा भोज न क्या ही ठीक कहा है कि प्रकृति और पुरुष का वियोग ही तो योग कहा जाता है।

हिन्दी में आज भी इसके जोड़ का कोई आध्यात्मिक प्रणय-नीत ढूँढे न मिलेगा

बठ लें कुछ बेर,
आओ, एक पथ के पथिक-से
प्रिय, अत और अनत के,
तम-नाहन जीवन घेर !

मौन मधु हो जाय

भापा मूर्कता की आड में,

मन सरलता की बाढ में—

जल बि-द्रु-सा बह जाय !

सरल अति स्वच्छन्द

जीवन, प्रात के लघु-प्रात से

उत्थान-पतनाघात से

रह जाय क्षुप निद्वन्द्व !

—परिमल

यह 'परिमल' की पहली रचना है—एक युगांतर गनेवाली काव्य-कृति की प्रणवमातृका। शिल्प की पूणता के अनिरिक्त इसके कथ्य की सरल गहनता रागात्मक मौन को जिम स्तर पर स्वरित करती है, वह क्या सतही प्रणय निवेदन का है ? जिस कवि का तादृश्य जीव-मृत तद्व-तूण गुल्मा की धरती पर नव जीवन प्रदायिनी ज्योतिमयी वाणी का प्रार्थी रहा, उसी की मध्या ऐसी गहरी ढेर से वातावरण को गुजा सकता है

जी में न लगी जो बिकल प्यास,

आँखों न देखने आना तुम !

भरकर न रही जो छवि उदास,

तो कभी न उस घर जाना तुम !!

कहते कहते जग हार जाय,
 रहते रहते मन मार जाय,
 जो उड़े न जम्बर हरे यास
 तो अपने भाव न लास तुम !
 कलियों के हारों यह प्रकार
 उर लहरे गध, बहे यषार,
 यदि मिला न तुमसे हृदय छन्द,
 तो एक गीत मत गाना तुम !

—गीतगुज

तेज और आलोक के इस महान् गायन को धूल धुंध भर परिवेश में स्थापित कर कुहा, कुहरा कुटलिका विरोधी पहाड़ा पढ़ा गया हल्ला गुल्ला को इसकी आत्मा की ज्योति से जगमगात हुए छंदा पर तरजीह दी गई नारे को नगमा कहा गया ।

जिस पीढ़े का फूल आकाश में सुवास बिखेरता है उसकी जड़ मिट्टी से अलग नहीं होनी । अमरवल्लरी तो वह उधार ली हुई विचारधारा है जो पश्चिमी हवा में उड़कर पूरव के किसी बल यूल पर टग जाती है । ईलियट की निर्व्यक्तिकता मीरा की गीत माधुरी का खट्टा नहीं कर सकती ।

अकविता के अ विचारको के लिए चिन्त्य है तो यह कि ईलियट वेस्ट लड' से फोर क्वार्टेट्स' की ओर बढ़ जाता है । श्रीअरविन्द की भानि विप्लवी 'नवीन' अध्यात्म की स्वणदी में डुबकिया लगाने लगत है । प्रगतिशील नरेन्द्र शर्मा का प्रयोगी कवि योगी हुआ चाहता है । । ।

निराला में असंगतियाँ और अतिविरोधा के छिद्रावेपिया को तुलसीदास जी के शुक्ल समर्थित सर्वोच्च साहित्य के अध्ययन से समाधान मिल जायगा, बशर्ते कि अध्ययन समाधान प्राप्ति के ही अभिप्राय से किया जाय, anticorruption विभाग खालकर corruption को मढावा देने के लिए नहीं ।

(२)

दिग्दश-कालजयी निराला को इन पत्रों के सदभ में एक विश्वस्त परिधि में बाधना होगा इससे उनकी ऊँचाई कदापि कम न होगी क्योंकि गुणात्मक मूल्यांकन की कसौटी उन्हें उस ऊँचाई पर बहुत पहले से पहुँचा हुआ पाती है जिस पर दुनिया के कुछ इन गिने कवि ही पहुँच पाए हैं ।

प्रतिभा का समविभाजन संभव नहीं है । खटी बोली के अति सक्षिप्त काव्य-निहास में अभी निराला का विशेष प्रतिभाशाली कोई दूसरा कवि नहीं दिखाई

दिया। अन्तिम श्वास तक उनकी प्रतिभा भावात्मक रही। निषेधात्मक होती तो उनकी अमिन तेजस्विता कुछ परवर्तिनी की-सी तार्किक ककशता म, श्रीहीन शून्यता म बन्द जाती।

'छायावाद' जिनके कारण इतिहास म अमर हुआ, निराला और पत-प्रसाद उनम प्रमुख हैं। निम्नगर्भा प्रवृत्तिया के उद्गता उस युग म भी गौण थे, बाद म तो उनका कोई नामलेवा ही न रहा। उन्होंने गुप्त-साम्राज्य के ऐश्वर्य-दीप्त स्वर्ण-युग का वाव्य और कला म पुनर्ज्जीवित करने वाले एक सम्पन्न और समृद्ध युग विगोप की अपनी मपाट अभिव्यजनाओ और पननी मुख, रण भावनाओ स भरकर धराशायी भर कर दिया। कथ्य और शिल्प म विशदजनीन, क्षुद्र तटों और रूढ सीमाओ से विरण और पवन की तरह ऊपर उठे, आगे बढे हुए युग को राष्ट्र, समाज आदश और रूढिया के ठेकेदार। ने मटियामेठ कर भदई और रखी पगल उगान के गयक चीरम और चीकोर कर लिया। छायावाद विदेशी था, राष्ट्रीयता खालिम स्वल्शी, समाजवाद म्राम भारतमाला की कुत्ति से जमा हुआ, प्रयोगवाद राची और आगरे के, भारतीय सम्कृति के अपन दिमागी अस्पनागे से स्वास्थ्य और सन्तुला क प्रमाणपत्र प्राप्त किया हुआ।

छायावाद का सम्भ्रान्त ऐश्वर्य्य प्रकाश सघन घन घटाआ म छिप गया, 'राम की शक्ति पूजा' रह गई, 'कामायनी' और 'पल्लव' और 'ग्राम्या' के रूप, रम, गद्य, स्पण वाव्य-बला क मुरभित उच्छवाम क रूप म गायकत हो गए —

हीरा-मुक्ता मणिष्येर घटा
येन शून्य दिगतेर इद्रजाल इद्रघनुच्छटा
याय यत्ति लुप्त ह्ये यास,
शुधु थाक
एक बिन्दु नयनेर जल
कातेर कपोलतले शुभ्र समुज्ज्वल
ए ताजमहल !

'निराला' नाम से मरा प्रथम परिचय फरवरी, सन् १९३० मे हुआ था। तब मैं चौदह साल का, गाँव की पाठशाला म पढनेवाला एक 'नवयुवक' था। नवयुवक इसलिए कि सन् २८ में ही मरा विवाह हो चुका था और मन् २९ मे मैं साहित्य और व्याकरण की मध्यमा परीक्षा पात कर चुका था। हिन्दी और संस्कृत म दो चार कविताएँ भी लिख चुका था।

मेरा जन्म माघ में हुआ था निराला नाम से मेरा परिचय भी माघ में ही हुआ। और फिर तो योगायोग इस हद तक सक्रिय हुआ कि कुछ ही वर्षों बाद मालूम हो गया, निराला का आविर्भाव भी माघ में ही हुआ था।

गर्ब में 'सुधा (वष तीन सख्या एक) पहली पहली बार देखने को मिली थी। यह अङ्क निरालामय था। इसमें दो गीत (दुगो की बर्लियाँ नवल खुली' और 'भरे प्राणों में आओ), 'पदमा और लिली' एक कहानी मनसुखा को उत्तर एक प्रतिवात्, पाच पुस्तकों की सक्षिप्त समाञ्चनार्णें सम्पादकीय टिप्पणियाँ आदि—इतनी सारी रचनात्मक और विवेचनात्मक कृतियाँ थी कि उनके सश्लिष्ट प्रभाव ने मुझ इस चौंका देनेवाले नए नाम का, अज्ञान में ही, आग्रही बना दिया। फिर तो मैं दूढ़ दूढ़ कर निराला की नई-पुरानी रचनाएँ पढ़ने लगा और यन्त्रवे भाजने लग्न सस्कारों नायया भवेत् का फल भी क्रमशः प्रायक्ष होने लगा।

सन् '३२ में मैंने शास्त्री' होकर गर्ब छोड़ दिया और काशी हिन्दू विश्व विद्यालय के प्राच्य विद्या विभाग में अमूल्य उच्चतर शिक्षा प्राप्त करने के लिए दाखिला ले लिया। इस बीच हिन्दी सस्कृत की पत्र-पत्रिकाओं में मेरी कुछ रचनाएँ छप चुकी थीं—हिन्दी की शिक्षा और सुकवि (तब महामहोपाध्याय प० सबलनारायण शर्मा शिक्षा' के सम्पादक थे और प० गयाप्रसाद शुक्ल सनेही सुकवि के।) में सस्कृत की सस्कृतम, सुप्रभातम' और सूर्योदय' में।

सन् ३१ में मैंने पहले पहल हिन्दी के एक कवि को गया की मन्सूला लाइब्रेरी में देखा था। वह थे प० मोहनलाल महतो वियोगी'। वचन से उनकी सबसेतुमुखी प्रतिभा के बारे में सुनता आया था। ऊँच-नीच रामक्षण या सोचन की तमीज तो तब थी न अब है। प्रतिभा प्रदीप्त ललाट, काले मोटे प्रेम के चश्म के भीतर स चमकती हुई बड़ी-बड़ी आँखें, कुन्दन कात्ति चढ़े मोड़ का कमरती गठीला बदन राजहम के डना-में सपेठ कपडे और भय्य ग्लाट में राली का एक बड़ा-भा गोट टीका—उनकी दिव्य आकृति ने पहली ही झल्क में मुझे अभिभूत कर लिया था। सन २६ में वियोगी हागा पहला कवि शोधक एक सम्मरणात्मक निरग्रम मैंने इस दशन का भविस्तर वणन किया था। या मरी कवि भी अजीब है। मिलमिन्वेवार बात करन की काई तमीज न होने पर भी इतमीनान स अपनी बौद्धिक ध्यान दूर कर लता है।

काशी में सन् '३२—३३ में सब प्रथम जिन चार हिन्दी-कवियों को देखा और सुना था, वे थे सवथ्री जयशङ्कर प्रसाद, महात्वी वर्मा रामकुमार वर्मा

और भगवतीचरण वर्मा। प्रयादजी को रत्नाकरजी की शोक-मभा म—टाउन हॉल में देखा और सुना था और वर्मा-त्रयी को युनिवर्सिटी के आर्ट्स कालेज हॉल में। नीहार रश्मि युग की वह दुबली-पतली लज्जा और सकोच ने अपनी ही छाया में छिपती छिपती-भी महादेवीजी कोई और थी। वह जिस स्वर में सुना गई, कोई एक भी शब्द नहीं सुनाई पड़ा था। भगवती बाबू ने 'नूरजहाँ की कब्र पर' नामक एक सम्बन्धी कविता को बड़े ही ओजस्वी ढंग से, और रामकुमार वर्मा जी ने 'य गजरे तारा यात्रे' को करुण-मधुर स्वर में गाकर सभी श्रोताओं का मन मोह लिया था।

मेरे सस्त्रुत के नील निरघ्न आवाश में जस हिंदी के ये चार तारे उग आए। यो साधन के अभाव में कर्करी चुनते हुए तिन गुजर रहे थे। वाचनान्त्य में सामयिक और बड़ौदा वाली लाइब्रेरी में प्राचीन साहित्य का पारायण करता पर ऐसे काँटा निकलता नजर नहीं आता था।

हिंदी कविता की सुगंध भरी सौम्य अभी मेरे तन को छूकर तरङ्गित नहीं करती थी, मन में मधुर स्मृति बनकर बसती न थी। 'तोमा पाने घाय तार गेप अयखानि' का ही सहारा था।

मस्त्रुत पन्ते वारह बरस धीत चुक थे। मुसीबत मंत्री दुखी से सबदना, पुण्यात्मा के प्रति प्रसन्नता और पापात्मा की उपेक्षा से चित्त की निमलता की पिपा मिल चुकी थी। विन्तु कालिदास ने कुछ और ही सिखाया था —
न केवल मो महतोऽपभापते
शणोति तस्मादपि य स पापमाक ।'

वि जा महान् पुद्गलों के लिए अशिष्ट शब्दों का प्रयोग करता है, केवल वही पाप का भागी नहीं होता, वह भी होता है जो उस चुपचाप सुन लेता है।

पूण प्राणो चावार याहा, रिक्त हाते चासूने तार, मित्त चोखे यासने द्वार" पढ़ा था, छापी हाथ निराला के सामने कैसे खड़ा होता? एक दिन 'सुधा' का, जुलाई १९३३ का, अङ्क देखने को मिला। यह भी फरवरी, १९३० वाले अङ्क के समान ही निरालामय था। निराला की अनेक रचनाओं के अतिरिक्त इसमें नलिनविलोचन शर्मा का वह समीक्षामय लेख भी था—'निराला की 'अपसर्ग', जिस पत्रकर प्रेमचन्द के प्रशंसकों के दण्ड में खल्वली मच गई थी, हम में निराला के विरुद्ध जहर उगला गया था।

इसके सम्पादकीय में 'हिंदी में आलोचना' शीर्षक एक विचारोन्नेजक टिप्पणी थी, शली से मैंने जिसे निराला लिखित समझा था, वर्यो बाद मात्र

हुआ, वह सबमुच उही की लिपी हुई थी। उस टिप्पणी में कालिदास के एक श्लोक (हस्ते लीलावमलम) के बला पदा की बहाई की गई थी, साथ ही, 'ठोकर लगी पहाड़ की तोड़े पर की मिल—बहावत को चरिताय बरते हुए 'हिंदी-आलोचना' में सस्वृत के बड़े बड़े पण्डितों की आलोचना शक्ति की कमी पर व्यंग्य भी किया गया था। मैं तब इस चुनौती के लायक हूँ कि नहीं था, मगर मुझसे जवाब दिए बगर न रहा गया।

चकोर पबटक हेरता है इसलिए वह चीन्हे में है, मोर निहारकर नाचने लगता है इसलिए वह सजल जलद में है पपीहा रट लगाए रहता है इसलिए वह स्वाती में है झुण्ड के झुण्ड भोरे भागे आते हैं, इसलिए वह फूल में है।

तब तब जो दो एक अनुवाद मेपदूत व 'यामा और दीपशिखा' की-सी सज्जा के साथ छपे थे वह छंद और भाषा की भागण्ड में ही अनुवादकों की स्वेद सिक्त शक्ति व परिचायक थे। कालिदास की आत्मा उम मरु भूमि में एक बूद रस भी न छिड़क सकी थी।

यद्यपि निराला ने 'सस्वृत के बड़े बड़े पण्डितों की सुस्पष्ट चर्चा नहीं की थी किंतु तब आचार्य प० महावीर प्रसाद द्विवेदी या आचार्य प० रामचंद्र शुक्ल के अलावा हिंदी में और कौन कौन से बड़े बड़े 'पण्डित थे, मैं नहीं जानता था। अतः 'बड़े-बड़े पण्डितों का अर्थ मैंने सस्वृत के बड़े बड़े पण्डित ही समझा था।

सस्वृत में अल्पन को बड़ा पण्डित कभी नहीं कहा गया। प्राचीन काल के ऐतिहासिक व्यास के पण्डितों का प्रसङ्ग छोड़ देने पर भी उनीसवीं-बीसवीं शताब्दी में बाल शास्त्री शिवकुमार शास्त्री गङ्गाधर शास्त्री रामायतार शर्मा दामोदर गोस्वामी बालकृष्ण मिश्र बच्चा शास्त्री महादेव शास्त्री— ऐसे प्रकाण्ड पण्डितों को एक विशाल परम्परा कालिदास की कविता की ममन रही है।

मैंने निराला के इस अतिरञ्जित आरोप का युक्तिमो समेत खण्डन किया और चित्त से हीनता का विचार साडकर उसे प्रतिवाक्य व रूप में प्रकाशित करने के लिए भेज दिया। उन दिनों निराला ही मुख्यतः 'सुधा' का सम्पादकीय लिखते थे। उन्होंने एक अनात कुलशील लेखक के ठेठ बिहारी हिंदी में लिखे हुए उम अधकचरे लेख को पढा, और भरसक विस्मृति के अँधेरे में डाल दिया।

दो वर्षों बाद जब निराला मुझसे मिलने आए प्रसादजी के पास अचानक उसी का प्रसङ्ग छेड़ बढे कि जिसकी चर्चा मैंने स्मृति के वातायन' में की है।

* प्रसाद की याद स्मृति के वातायन

इस पत्र-गुच्छ में यदाचिन् सबसे बड़ा पत्र दो वष पीछे के, अवचेतन म सञ्चित, इसी कालिदासीय गद्दम में मुद्रासित है।

निराला में आकस्मिक जैसे कुछ भी नहीं, जन्म जमानर से अतमन म जमी हुई प्रज्ञा ही उत्ताप व अनुपात से पिघलनी रही है।

माय-अमान्य होने का सवाल एक ओर, और ससृष्ट के इस गहनतम वाव्य शिल्प का निराला द्वारा मौलिक विश्लेषण एक ओर।

इस बीच मैं निराला को पढ़ता रहा था। पढ़ता मरो जनमघृटी म पढा है, इसलिए लोगो के लाम्ब ग्राभा उठाने पर भी पढ़ता रहा था। बात यह है कि तब निराला महोदय महामानव, महाप्राण नहीं कहे जाते थे। मैं ससृष्ट म कुछ ऐसा लिखन लगा था कि मेरी माहित्यिक चेतना को नकारना कठिन था, मगर उस चन्दन चोटी वाले सुमसृष्ट वानावरण में लड़े बाल रखना और कविता लिखना ही दुश्चरित्रता का प्रत्यक्ष प्रमाण था^१ (यद्यपि श्री शिवप्रसाद गुप्त व घाट पर गद्गा नहाने, चार मील पैदल चलकर विश्वनाथ दर्शन करन में भी कम ही छात्र मर प्रतिस्पर्धी हो सकते थे), फिर निराला का स्मरण, नामोच्चारण और गुण-कीर्तन तो रोप तीना (अनुमान उपमान और शब्द) प्रमाणो को भी इकट्ठा कर अपनी छाव का खावा उठाना ही हो सकता था। व दिन भी क्या थे! जिस घड़ी आचार्य नन्ददुर्गरे वाजपयी के साथ महाकवि निराला छात्रावास म मुझे दूढ़ते हुए मेरे कमरे में आए थे, तीनों सीटें (बलिया, गारुडपुर और आजमगढ़ की) पलक मपकते खाली हो गई थी। टा० बहध्वाल के बँगले से लौटने पर जब मैंने उन तस्ती से उदनछू हो जाने का सबब पूछा तो उन्होंने बहुत कुछ उत्तम मध्यम कहा। मुझ पर असर न हुआ तो बोले '५० चद्रवली पाण्डे से पूछ देखिए निराला न उन्हें मूख कहा है।

'५० चद्रवली पाण्डे उडेंच निकालने म एही चोटी का पसोना एक करते हैं मुनाई होगी उन्टी-सीधी निराला को भी।'

१ 'सुप्रभातम्' में प्रकाशित मेरी एक कविता अखिल भारतीय स्तर पर सब ध्येष्ठता व लिए स्वर्ण-शिल्क प्राप्ति में

किरनुध्यां धारां विमलतरवारामविरत
वितवत बङ्गीतनुमनसि भोदात्मनसिजम
न गोभिर्गोविन्दो घन इह तडिद्भिः खलु यथा
सखे खे खेलन सन खलयति मुनीनामपि मन ।'

—इस श्लोक के समान ही बहुत दिना तक चर्चा म रही थी।

इससे क्या ? कहीं वह एम० ए० पास और कहीं निराला मट्रिक फेल ! फिर व हमारे सगेत भी हैं, गाजियन भी !” (तब तक पण्डित हजारीप्रसादजी द्विवेदी परवान नहीं चढ़े थे नहीं ता समवत व उही का अपना सगेत गाजियन बताते !)

में हंस पडा क्यो नही ? गा त्रापते इति गोत्र ! ’

‘क्या कहा ? क्या कहा ?’

कुछ नही, भवृ हरि याद आ रहे हैं —

“गाग्र चेदनलेन किम ?”

इस पर जो वे भभके तो फिर एक ही साँस में वह सब सुना गए जो अब कही पतीस वर्षों के बाद डा० रामविलास शर्मा अपने विशाल ग्रंथ में सयुक्ति, सप्रमाण, सोदाहरण सहेज मके है, घटित की सघटित कर निराला के अध्ययन की आघारभूत अनिवाच्यता के रूप में स्थापित कर सके हैं।

उन दिना वहा प्रवेशिका परीक्षा में एक पुस्तक पढाई जाती थी—*Winners of Freedom* । मैंने पढी थी । उसमें पहला लेख मुकरात पर था । मुकरात पर जितने आरोप लगाए गए थे उनमें एक होनहार नवयुवका को बरगलाना भी था । एकाग्रचित्त से भारतीय सस्कृति के इस महापुराण को सुन कर मैं हाँठा में बुदबुदाया

Sow the wind and reap the whirlwind । अच्छा हुआ आप लोगो ने ऐन मौके पर मुझे आगाह कर दिया अब भी न चेतूँ ता अपनी बला से ।

कुछ रोज बाद मैं प्रकोष्ठ बदल कर मराठी गुजराती और बंगाली लडको के साथ रहने लगा । अन्तिम वर्ष मध्यप्रदेश—जबलपुर, रीवा, सतना के छात्रो के साथ था ।

अनिलवरण राय और अनुकूलचन्द्र चणवर्ती के ससग में आने पर—

‘आसनतलेर माटिर’ परे सुटिये र’बो

तोमार चरण धूलाय धूलाय धूसर हबो ।

गाना सीख गया था । बगल में दक्षपन से जानता था । श्री शान्तिप्रिय जी द्विवेदी ने बताया था ‘निराला को समझना चाहते हो तो बंगला साहित्य का अध्ययन करो ।’ दो तीन वर्षों में मैंने महाजन-पदावली, मेघनादवध से लेकर सत्यद्रनाम दत्त के बेलगोपेर गान तक फला हुआ काव्य साहित्य प्रायः पढ डाला था । उही दिनो महादेवीजी के सम्पादकत्व में निकलने वाले ‘चाँद में भाइबेल मधुसूदन, टगोर आदि पर मेरे कई लेख प्रकाशित भी हुए थे ।

एक दिन शान्तिप्रियजी के पास भैरवी-गान, सूरशमेर प्रायना उवशी, अभिसार आदि कविताओं की आवृत्ति की तो वह सजल नेत्रों से विहस कर बोले

‘इतनी जल्दी कैसे याद हो गई ?’

मैंने कहा ‘कितनी मधुर हैं ये !’

‘फिर’ ?

‘ब्राह्मणों मधुरप्रिय !’

×

×

+

परिणाम की भिन्नता में भ्रम की भिन्नता कारण है। भ्रम की भिन्नता सहकारी कारणों से होती है। गिहृत की गर्मी ही तो पानी भाप बन जाता है, बरफ़ के की सर्दी पानी को जमा कर बर्फ़ बना देती है।

एक रूप में दूसरे रूप में कोई वस्तु एक ही पल, छिन या दिन में नहीं बदल जाती। हाँ, परिवर्तन का भ्रम कभी लक्षित होता है, कभी असलक्ष्य रहता है। ‘पञ्च परिचीयते’ के अनुसार परिणाम से वह अनुमित होता है। एक के बाद दूसरे, तीसरे क्षणों के प्रवाह में भ्रम ही पूर्वापर का नापक होता है।

क्षण क्या है ? काल का वह छोटे से-छोटा अणु, जिसे अब और छोटा नहीं किया जा सकता। दो क्षण झकटते नहीं हो सकते। एक के पीछे दूसरा क्षण अपना सिलसिला चलाए चलता है। यही भ्रम है।

मेरे नात मन में एक अनात मन बसेरा लेने लगा था। जिस भिन्न गति से यह परिवर्तन तन-मन को आक्रांत कर रहा था, उसका विश्लेषण अति कठिन है। मैं परम्परा भुक्त प्रसङ्गा से कतराकर नए उपजीव्य की खोज, नए स्पष्ट की स्पृहा नए आवेगों की हलचल में डूबा खोया रहने लगा था।

—“एसेछ एसेछ”—एह क्या घले प्राण,

“एसेछे एसेछे”—उठितेछे एह गान,

नयने एसेछे, हृदय एसेछे धेये ।

की चञ्चल धारा में आविष्ट अस्मिन्त्व बढ़ता-बढ़ता सा प्रतीत होता। स्वानुभूति की जागरित करने की गीति-वाक्यात्मक अभिरुचि उमड़ने लगी थी। जातीय सस्कार ने कथ्य और शिल्प के चुनाव में थोड़ी छूट दी थी। निष्प्राण परम्पराओं और अयहोन आधारों के आग्रह से बटकर गम्भीर अनुभूति को सहज ढंग से अभिव्यक्त करने के लिए उत्प्रेरित किया था, किंतु माध्यम के चयन में, जाने क्या उसने युगधम की पुकार अनसुनी कर ससृष्ट पर ही अतिरिक्त

आग्रह दिखलाया, और मैं लिखने लगा

त्रिनादय नवोनामये वाणि धीणाम् ।

× ×

स्वग नत्यनयनपशव प्रेय्यमाणा पुरस्ता—

दाशसते सार लघुतर साध्वनेनाध्वनेति ।

× ×

लौलाशीलालिलोलत्करतलकलितोत्तालताल सहास्य

सास्य श्रीगधिकायास्तिरयतु दुरित मानस मानवानाम

इस प्रकार मिश्र सस्वार ने मुझसे 'वाक्ली' के गीतों और श्लोकों का रचना करा ली। कहा का आवेग कहीं की संवेदना अबोध जिज्ञासा के सुतले स्वर सजल विनोद में बिखर कर रह गए।

छपने पर और-और पत्रिकाओं के साथ सुधा में भी समीक्षाय 'वाक्ली' की प्रतियाँ भेजी। सस्कृत और बंगला की कितनी ही पत्र पत्रिकाओं में सक्षिप्त किन्तु सार गभ समीक्षाएँ प्रकाशित हुई, 'सरस्वती और 'विशाल भारत' ने भी ऊँचे शब्दों में आशंसित किया, किन्तु 'सुधा' मौन रही। कालिदास की कला वाला प्रतिवादात्मक लेख 'सुधा' के गरल जठर में जल चुका था,—सस्कृत का आदेश हिंदी के यथाथ से टकराकर चूर चूर हो चुका था। अब 'वाक्ली' भी काग रोग में तबदील हो रही थी कि निराला का अत्यन्त अप्रत्याशित पत्र आया। इस सुदीर्घ काल व्यापी पत्राचार का प्रारम्भ यही से हुआ।

इस बीच सन् ३४ में साहित्याचार्य्य हो चुका था। बिहार और उड़ीसा भर में सबप्रथम आया था। स्वणपदक से समाहित भी हुआ था।

सन् ३५ में पूर्वबङ्ग सागम्बत समाज टाटा से 'साहित्यरत्न' की उपाधि प्राप्त की थी। पुराने रेकाड तोड़कर सर्वोत्तमता का एक नया रेकाड म्यापित किया था। प्रशस्ति समेत स्वणपदक मिला था। केन्द्राधीशक के निर्देश से मैंने बङ्गाभराम ही प्रश्ना का उत्तर लिख थे।

और काशी विश्वविद्यालय में प्रथम भण्डा में शास्त्री होकर शास्त्राचार्य्य की तैयारी कर रहा था।

'धर्मिणा की भाँति गोल्डन ट्रेजरी भी घाट डाली थी किन्तु अंग्रेजी की कोई परीक्षा नहीं दी थी। सन् '३६ में प्रवेशिका पास की। निराला के प्रथम दशन के समय जाहिरी तौर पर यही मरी हैसियत-उरफ़ी थी।

उस सोने के सपने की

देखें कितने दिन बीते !

—महादबी

सन् '३५ के माप (करवरी) में फूलों भरे बाग और कमला भरे तटों को विलाती हुई एक हितैषी विरण निकली थी। निराला का विश्वविख्यात काव्य 'तुलसीदास' इसी महीने से 'सुधा' में प्रथम छपने लगा था और जून (ज्येष्ठ) के अङ्क में सिन्धी वारणवश न छप सकने के कारण जुलाई '३५ वाल अङ्क में पूरा हुआ था।

व्यक्तित्व के प्रक्षेपण (Projection of personality) की चर्चा अब हिन्दी में घड़ले से होने लगी है। राजराज न हजार साल पहले—यत्स्वभाव कविस्तदनुरूप कायम्' लिखा था। सन् '३५ तक के सतत अध्ययन के फल में निराला की आश्रित प्रकृति की जो कल्पना मीने की थी उसका पहिरण Heroic और अतिरङ्ग Sublime था। दृप्त और उदात्त—वेकल पही दो शब्द सौन्दर्य को साकार करने के लिए पर्याप्त थे। 'तुलसीदास' के प्रकाश में मेरी कल्पना पल पड़कर उड़ चली।

ऋग्वेद में धनुष से दिग्विजय करने का एक प्रसङ्ग आया है 'धन्वना सर्वा प्रदिशो जयम्'। हिन्दी कविता की स्वयंवर-सभा में जैसे धन-नाद धनुष्य में निराला ने 'तुलसीदास' के शब्द-वेधी बाण चलाए हैं, तब मुझे ऐसा ही प्रतीत हुआ था। तब तक 'कामायनी' छपी (इस रूप में लिखी भी जा चुकी थी या नहीं, कहना कठिन है) नहीं थी, दूसरा कोई भी इतिवृत्तात्मक उचल काव्य 'तुलसीदास' से आँख नहीं मिला करता था।

मीने निश्चय कर लिया, निराला की काव्य कला पर सबसे पहला लेख मैं लिखूँगा।

श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी ने इतनी सा बात के लिए आँख मँली कर ली। एक दिन बालकवि आद्याप्रसाद चतुर्वेदी के साथ होस्टल से लोलाकंबुण्ड की ओर ले जाते हुए उन्होंने मुझसे कई विचित्र प्रश्न किए 'पन्त और निराला में कौन बड़ा लगता है ?'

'निराला !'

'क्यों ?'

'क्योंकि पन्त समझ में आ जाते हैं, आसानी से मैं उनका अनुकरण भी कर लेता हूँ, किन्तु निराला ऊपर का दम भरावालों के भी पन्ते नहीं पड़ते, मैंन दाएँ-बाएँ टटोलकर देख लिया है, और निराला का अनुकरण कोई क्या साकर करेगा ?'

द्विवेदी जी तिलमिला कर आद्या की तरफ मुझे, वह हँस रहा था। अब तो उन्हें एक-एक पग चलना डूबर हो रहा था। गिन गिनकर पर रखने

पडते थे ।

‘आप पन्त का अनुकरण’

जी हाँ अनुकरणीय तो वही है पत्त जी श्री ‘छाया’ की पक्तियाँ हैं

कहो कौन हो दमपत्नी-सी

तुम तरु के नीचे सोई ?

हाय, तुम्हें भी त्याग गया क्या

अलि, नल सा निप्टुर कोई ?

और मेरी ‘क्लोलिनीम्प्रति’ के पद है —

केन कथय ताडितहृदयाऽभूरेव त्वमिह विरक्ता,

मिनस्वाता कातारे काते, केनासि विभक्ता ?

अधरगिजा गिरिजे, रघुवशोऽनूदाऽप्रतिहतलङ्का

केन प्रेषितकाकियधुना रघुपतिना, का शङ्का ?

बल्मीकावलिरिह बने न बाल्मीकेश्वृतमभिधानम

कुरान्त्वमध्ये मध्येविपिन कस्वास्पत इह मानम ?

भोमभूमिभक्तय सष्टेस्सममुपमा दमपत्नी

त्यक्ता केन नलेन कथञ्कार विजने दमपत्नी ?

नववारण बालया प्रियवदया, ऽ नक्षुयया यासि—

कण्ठीरवकथयाऽऽलिता, किं सत्य शकुतलाऽसि?

—बावली

तुम्हारी आँखों का आकार

छो गया मेरा पग अनजान

मृगेक्षणि, बाल विहग नादान !

—पत्त

आम्यत्ती ते रूपने मे प्रीतिविहङ्गमबाला

कुत्र गता ? यस्माम ? हत ! कुप्यां किमह धनबाला ?

ध्रुवदिल्लताशोतले तले ते मञ्जुल्लोचननोडे

त्वत्कुतलकोमलकिसलयनिपुरम्बवोतरविपीडे—

धातेवागु विवेशासी कुप्यां किमह धनबाला ?

अपरिचिते यस्माम बने, मे प्रीतिविहङ्गमबाला !

—बावली

अभी उम्र में सुधा म उनक एक गीत या मुखड़ा पसन्द आ गया

नव हे, नव हे !

और मैंने तुरत ही कई गीत लिख डाले

नयने नयने !

कियत्सुप्य विस्तोर्णे मे कण्टककल्पितराघने !

मोदाश्रुमिभ्रनयने, पश्यसि सस्मितमयने !

—वाकली

×

×

मधुर मधुरम !

रूप, सौन्दर्य, लावण्य ते मधुर, मधुरम !

प्रिये, पश्य,—धरवचनविरचनाञ्जितमधुमकरदम

पतति ते ऽ धरे पीयूष सतत मन्द मन्दम,—

अपि, वितरदमरताम्पिबते !

—वाकली

आधा ने अथ समझा दिए । अब तक भरे धारे में द्विवेदी जी सुनते ही मुनते थे, कभी कोई कविता नहीं मुनी थी । तब भी मेरा जीवन राग विराग, आसक्ति-अनासक्ति के बीच घूँटा रहता था । सत्रहवें ही साल में मैंने लिख डाला था

तत्र वसत्युन्लासक सदा सुरभिरनाविरनत

जीवनवने न मे कदाचिदायातो हत, वसत !

—वाकली

निराला प्राणों की प्रचण्ड शक्ति के स्रष्टा थे । मुझ-सा अल्पप्राण उनके महानाद को प्रतिनिनादित नहीं कर सकता था । उनका लालित्य भी 'ललित-लवङ्गी' न था, माधुर्य तो ऊर्जा से तरङ्गित होता ही था

ज्योति की तबी तडित-धृति ने क्षमा माँगी ।

—गीतिका

—म कसी स्वस्य प्रफुल्लता प्रकाशित हुई है !

ज्योति-तप्त मुख तरण वष के

कर से प्रखर धुलीं !

—गीतिका

अचपल ध्वनि की चमका चपला,

बल की महिमा बोली अचला,

जागी जल पर कमला अमला मति डोली ।

—मुल्सीदाम

कहीं नीली नसों नहीं उभरी हैं कहीं पीला चेहरा नहीं झुका है । यह सौन्दर्य स्वस्य धृन्त पर ही विलता है, यह माधुर्य saddest thought से नहीं

छहरता ।

किन्तु मेरे निर्विकार, निरुद्देश्य अभेद्य मौन की व्याकुलता कुछ इस भाँति प्रकट हुई 'पल्लव के प्रवेश' की तुग्ना जात कयो 'त्रिकल बलेडस' की भूमिका में की जाती है । मैं नहीं जानता, अभिरुचि और ज्ञान को समान सम्मान मिलता है ? पत्र जी जिस तैयारी से उतरे हैं जान पड़ता है, स्वयं प्रकृति ने उन्हें इस महत्वपूर्ण भूमिका के लिए (उनमें लीन होकर या उन्हें ही अपने में लीन कर) अपने हाथों सजाया सँवारा है । अनुकृति हो भी अनुकृति की विवृति तो उनमें क्या नहीं है ।

मेरे भाव अभाव की ऐत हैं । घर बाहर जीने का वही कोई सहारा नहा । मैं एक दुःख पर चढ़े आते दूमरे दुःख को सह्य करने के लिए गाता हूँ, जघ गत, त्रिजल अभाव के आवत, बुदबुद तरङ्गों से अनाकुलित रहने के लिए काल्पनिक कविता लिखता हूँ । मेरा साहित्य या दशन का 'नान पुस्तकीय ही तो है, जीवन का कोई भी कोना मैं नहीं पहचानता । मेरे पुटपाक में गलकर उसने भाव और रूप में नया जन्म नहीं लिया है । पत्र अनुकरणीय है, मैं उनके साँच (गुरभि पीडित मधुपो के बाल, उपा का या उर में आवास, अकेली आकुलता से प्राण ! कही करती तब मृदु आघात) को छूने की कोशिश भी करता हूँ किन्तु सस्वृत में विशेषण विषय्य, मानवीकरण या प्रतीकविधान की पद्धति पथक है, वहाँ

नवोद्गा बाल लहर
अचानक उपकूला के
प्रसूनों के द्विप रुक कर
सरकती है साँवर !

की सरकाना आमान नहीं है । मैं पन्त नहा हो सरता ।

द्विवेदी जी ने झुझला कर झिडक दिया 'इस अवस्था में यह दम्भ अच्छा नहीं लगता । मैंने अपनी काव्य रुचि को परिमार्जित करने के लिए पन्त का पय दिग्गमया था पन्त से अपनी तुग्ना करने के लिए नहीं । यह आघापन है, भौंडापन है

'आपको पन्त का प्रगमन पथ नहा, निराला की कटौली-मधरोनी पगडडियाँ पमद हैं । फिर क्या पन्तर से फिर टकराइए बोन मना करने वाला है !'

अस्मी के सीराह पर पान खाने खिगने और पीने की भाँति अन्तिम काव्य पूरने हुए द्विवेदी जी 'नमस्कार' कहकर लोकाकुल की ओर बढ़ गए ।

मैं उन विषयविद्यालय में पढ़ रहा था जहाँ प्रो० महानी विनोदशङ्कर व्यास

की तुलना मोपासा से करते थे, हरिऔध जी कवि-सम्राट् कहलाते थे, आचार्य गुकल को डा० जॉनसन कहा जाता था, प्रेमचन्द जी के 'आमरण' में प्रसिद्ध वक्ता और लेखक छात्र प० जनादनप्रसाद झा 'द्विज 'चरित्र रेखा' लिखने के वहाने निराला के लिए अशिष्ट और आपत्तिजनक शब्दों का बखरक प्रयोग करते थे। जाने क्यों, वहाँ का सम्पूर्ण वातावरण ही निराला विरोधी था।

सन् '३५ तक निराला का सावत्रिक विरोध मैंने अपनी आँखों देखा था। व्यक्तित्व आतङ्ककारी और प्रतिभा प्रताप-तप्त—यह प्रतिक्रिया निराला-जैसे महान कवि की सबदना के अवसर पर भी व्यक्त की जाती थी। दरअसल कोयली की दलाली में कौन हाथ काले करता, जबकि कलकत्त्या विशाल भारत तावडतोड़ हीरे की खान खोदे जा रहा था !

Then with the year

Seasons return, but not to me returns

Day or the sweet approach of even or morn

Or sight of vernal bloom or summer's rose

Or flocks or herds or human face divine

—Milton

'वर्तमान घम' के सप्त महारथियों द्वारा रचित चक्रव्यूह का भेदन निराला किम कौशल से कर रहे थे, मेरी आर्थिक घृतराष्ट्रता का वाचनालय का सजय समझाता रहा था। मैं इस भूख प्यास में और अधिक तीव्रता लाने के लिए अब मुनिर्वामिटी से नागरी प्रचारिणी सभा तक की दौड़ लगाने लगा था।

शब्द का बाह्य कम्पन अन्तरिन्द्रिय में प्रवाहित होकर अथ वनता, फिर प्रतिक्रिया की प्रकाश धारा उसे चेतना और गति देकर ज्ञान का रूप प्रदान करती रही। बाह्य की अनुभूति में शब्द, अर्थ और ज्ञान की समष्टि ही तो होती है।

मैं उन दिनों अभिव्यक्ति की अन्तगूढ घनी व्यथा सह रहा था। सस्वृत में न यह सब लिखा जा सकता, न वहाँ इसके लिखे जाने से कोई प्रयोजन मधता दिखता था। मैं महज सस्वृत के जोर से ईश्वरचन्द्र विद्यासागर के 'सीतार घनवास' से माइकेल के 'मेघनादबध' तक निर्वाध पन्ना चला गया था—जीवन और साहित्य की भिन्नजातीय अनुभूतियाँ संजोना हुआ। साहित्य की जीवन से अभिन्नता के रूप में साथवता समझे बिना हिन्दी में नहीं लिखा जा सकता था। हिन्दी मेरे लिए सस्वृत और घेंगला की भाँति ज्ञान की भाषा न थी, अनुभूति की भाषा थी, और अनुभूति की भाषा में तब तक साहित्य नहीं लिखा

जा सकता, जब तक साहित्य को जीवन के अभिनय के रूप में स्वीकार नहीं कर लिया जाता।

यह स्वीकृति आज अतीत सगीत-सी भीठी मामूम देती है, अतीत, जो स्मृतियों के रूपान्तरण में आत्मविश्मति का चौधुध दीपक जलाया करता था,— सगीत जो विसर्वांगी स्वरा के समारोह में प्रणव-नाद का, श्रुत के अमन का साधना था कि जिस निराग के साहित्य, सगीत, बला, जीवन-दशन और आचार व्यग्रहार की एंगी बठोर सावजनिक आलोचना आए दिन होती रहती है आखिर वह कौसा दुर्दान प्रनिभा है ? इनने आधान प्रतिघाता के निजल जलद जाल को छिन भिन्न कर ज्योतिवलयित आलान से अप्रतिहन, उद्दीप्त वह व्यक्ति व कमा है ? गलित-वमल मणाल उपमान नहीं बनता, मुगध विहीन पवन के लिए कोई नाश मुह नहीं खोलता,—कसी है वह उनिद्र प्रना जो हर ओर में घेरे हुए जगान के अधरे में आग्नेय श्वास प्रशशस का प्लावन पीकर जाती है—

कौन तुम शुभ्र किरण वसना ?

सोखा केवल हँसना—कवल हँसना—

शश्र किरण वसना !

जिसक अन्न भंगी शिखर पर चुनौतियों के वज्र गिरते हैं तो उनके शङ्कु तुड़ मुड़ जाते हैं अञ्छेय अमेय आत्मा का वह निष्कम्प भूधर कौसा होगा ? —कुछ ऐसे ही स्वच्छ सन्धित आतरिक आग्रह से हिन्दी में उतरने की ठानी थी निराला पर पहली कविता में लिखूंगा।

तब कौन जानता था कि निराला पर पहली कविता या पहला लेख लिख कर मैदान में उतरने का अथ मैदान से खदेडा जाना होगा और 'जैसी बहै बयार' की स्वायत्त नीति ही गाँधी मैदान में झडा फहराती रहेगी ?

फिल्हाल सस्कृत में लिखने का इरादा मुल्लवी कर हिंदी की मुगजिमत अखिपार तो कर गी मगर कूटनीतिक दाँव पव सीखकर विसी दुमदार से लडाई मोल लने की गरज से नहीं कुछ रचनात्मक काय सीखने के लिए। मन् '३५ में केवल दो बडी कविताएँ लिखी—'शकुनला और 'निराला'। 'शकुनला' टैंगोर की उवशी' से उप्ररित हुई थी और 'निराला' निराला के तुलसीदास' में।

निरलङ्कार, चार गति, श्रुजु पद,

कालिदास कविता-सी सरला !

शोरक निहित-मुरभि सो वन घामिना,

वशी-स्वर-सी बामल, कल्हासिनी,

जड़-से शांत कण्व-आश्रम से—

तू चतय-कला-सी तरला !

आलुलापित-बु-तले,

गिशु - शकु-तले !

—शकुन्तला [शिप्रा पृष्ठ—५०—१४]

मरे क्षितिज की अमीमता की घूमिलता, गम्भीरता की अशांति और प्रकाश के ईशत म्पश की तु-तलमेघ माननेवालों को मालूम हा—'उवशी विश्वनवि की पहली या प्रारम्भिक रचना न थी, अवस्था में मुवमे सत्रह वष वडे और काव्य कला मे एव शताब्दी वडे महाकवि पन्त की निराला पर लिखी हुई अद्वितीय कविता अवस्था मे मेरो कविता से चार साल छोटी है

शेली रवी-द्र-नि-दत निनाद

हि-दी-उवर उर पर अवाध—

छवि छायावाद अगाध अलधि जल छाया,

उसकी चञ्चल लहरों मे स्थिर

गुह्य ग्रह मकर कर से घिर घिर

पौरुष प्रगल्भ चिर-लक्ष्य एक कवि आया—

×

×

परिपुष्ट काय अनपाय चोति,

तम-तोम होमकर उवल उज्योति,

भारती-आरती, सुधा चोति-लो विघ्नम,

उद्दाम प्रतिम निष्काम शात,

आयत हृग, दीप्त ललाट, कात,

पर-तेजोऽसह थी सूर्यकात रवि मणि सम !

×

×

आनन्द इन्दु रस विन्दु अमर,

जिसका गिरि-उर भेदक निम्नर—

क्षिति का ही-तल शीतल करता लोचन जल,

जिसकी भाषा घन सिंह-नाद,

उच्छल प्रतिभा-मौवनो-माद,

उमुक्त भाव जिसके निनाद-से कलकल !

×

×

सेवा व्रत हृत्-पारिष्य प्रमोद,

हिंदी मन्दिर का भूत मोद,
साहित्य सरस अछोद कमल वनमाला !
चिर आत्माराम अगाध-मेघ,
सारस्वत सित शर शब्द बेध,

जविराम सिद्ध वह नाम प्रसिद्ध—'निराला ।

—निराला [शिप्रा पृष्ठ—३८ ८४]

आज (सन् ६६ मे) सन् '३५ की इस समाप्त-बहुल सस्कृत हिन्दी को चाहे जितने व्यङ्ग्य वाण ओजने पडें, तब इसकी साधकता मुस्पष्ट थी। इसे ही निकट भविष्य में निराला पर लिखी गई एक हजार कविताओं में 'या सष्टि सप्पुराद्या का गौरव प्राप्त होना था।

'निराला की काय-कला (सन ३६-३७) निराला पर मेरा प्रथम प्रबन्धात्मक लेख था जो 'माधुरी' के कई-कई अङ्को में धारावाहिक रूप में प्रकाशित हुआ था और जो मेरे साहित्यदर्शन के प्रथम संस्करण में एक सौ पृष्ठों में पूरा हुआ था। तब तक निराला पर इस आकार प्रकार का कोई भी लेख कही नहीं छपा था।

इन पत्रों में उक्त कविता और लेख सब्धी कतिपय संकेत प्राप्त होंगे। ये पत्र अपना ऐतिहासिक पाठ अदा कर चुके होने तो इन्हें नए सिरे से नुमाइशगाह में सजाने का साहस कौन करता? जब भी बकौल 'फज' — 'जो दिल प गुजरती है रकम करते रहेंगे।

सन '३६ में मैंने अपने हिंदी गीतों का प्रथम सग्रह—रूप-अरूप निराला को ही समर्पित किया था। इस पर उनकी प्रतिक्रिया पानी पानी कर देनेवाली थी। एक पत्र में वह भी उल्लिखित है।

दरे कफस पे अँधेरे की मुहर लगती है,

तो 'फज' दिल में सितारे उतरने लगते हैं।

निराला के ही निर्देश से मैं श्री मधिलीशरण जी गुप्त से मिलने राय कृष्णदास जी के घर गया था। भारतीय सस्कृति के सब-समादत महाकवि को मैंने सब प्रथम बीड़ी पीते हुए देखा था। फिर तवाकू भरी चिल्ला आ गई तो वह नारियल उठाकर धुआँ पीने लगे थे। एक दफा मेरा तो चेहरा उतर गया था।

निराला ने तब भी सुझलाहट प्रकट की थी जब मैंने महादेवी वर्मा मम्पादिन चाली' में कबीर रवीन्द्र की उपक्षिता और 'साकेत की ऊर्मिला — जस विस्फोटक लेख प्रकाशित कराए थे। इस मुलाक़ान की प्रतिक्रिया हास्य

व्यङ्ग्य भरे लहजे में लिख भेजी तो वह वाकई आगवबूला हो गए थे। फिर भी यह कहना ही होगा कि पण्डित बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' के अलावा तब तक गुप्त जी ही मुझे एकमात्र ऐसे महाकवि श्रोता मिले थे जिन्होंने मेरी हर तरह कमजोर रचनाओं को देर देर तक रस ले-लेकर सुना, सराहा था। यह युग तो 'परस्पर प्रशंसाति या नि दन्ति वा है। निराला जी के लड़के भी मुझसे बड़े हैं। गुप्त जी ही निराला और नवीन से काफ़ी बड़े थे। वह प्रतिदान की आशा से मेरी भावाद्म प्रशंसा नहीं कर सकते थे।

बाल्मीकि के राम ने वाली में बहा था —

धममर्यं च काम च समय चापि लोकिवम

अविज्ञाय कथं बाल्यामामिहाद्य विगृह्ये ।

अपृष्टया बुद्धिसम्पन्नान् वृद्धानाच्चापसम्मत्तान्

सौम्य, धानरचापत्यात एव मा वषतुमिहेच्छति ।

कि तुम धम, अथ, काम और लोकापयोगी सदाचार का रहस्य स्वयं तो जानते नहीं, मुझे समझाने चहे हो ।

सच बताओ, कभी वरिष्ठ मनीषियों से धम-तत्त्व की जिज्ञासा की है ? यदि नहीं तो मेरी आलोचना किम रूते पर किए जा रहे हो ?

गुप्त जी के सन्दर्भ में इससे मटीक और कोई बात मुझसे भी नहीं कही जा सकती। मैंने अपने एकांगी अज्ञान के तेज हीर ही आलोचना-कला के कलेजे में चुमोए थे। मधिलीशरण जी अमर हैं। उनका विदीण हृदय रामनामाङ्कित ही निबला था। यहाँ एक लतीफा याद आ रहा है

Walk fast in snow

In frost walk slow

And still as you go

Tread on your toe

When frost and snow are both together,

Sit by the fire and spare shoe leather

सन' ३५ स '५८ तक के अर्धे में निराला मुझे कई बार डाँट पिला चुके थे। 'श, ण व, ल को लेकर जब वे बालिदास को ऊँचा-नीचा सुनाने लगते, मरी हकड़ी किरकिरी हो जाती, मूँह-दर-मुँह कुछ कहते न बनता। यों बसर निकाल लेता था मैं एक-एक के दो-दो कर, मगर खत लिखकर, रू-ब-रू नहीं।

शुशी भी होनी थी कि उन्हें बालिदास के बितने ही सुदर-मुदर ग्लोक

या" थे। फिर वह "ग" वर्णों का मधुम उच्चारण और कहीं गुनो को गिना !

'सरस्वती' के 'नून' '३' व अक्षु म पत्र जी का बाबू क प्रति कविता प्रकाशित हुई थी। मैंने उन्मुक्त काल म प्रसंगा का तो शक्य कर मर हाथ मे अक्षु ल लिया और उच्च स्तर त र्था का मने। तत्र तत्र तक पहुँचे मर म। सातवाँ पङ्गे वत अट्टहास किता और पत्नी तथा पौवणी पत्रिकां को रेखांकित कर हासिय पर लिख लिया

तस्मात्तो महात्मा जी के हृदय का हृमा फिर एत गन्त काह का हृमा ?
—गाला का ?

मैंने लाग्य समयाया पहला पत्र पत्रिकां म एत म्पत्त है और दूसरी पत्र पत्रिका म दूसरा। शोभा अलग प्रमग है और पूरा भी किन्तु उहाने मेरी एव ग गुनी। बोले आठ प्राठ पत्रिका का एक एक म्पत्ता है, आरम्भ से कवि ह्य प्रम का निर्वाह करता आया है यहाँ का प्रम म्पत्त हा म्पा ?

सरस्वती' का यह अक्षु आज भी मर पास मौजूद है।

यद्यपि पत्र का निराला स बहा प्रसंगक मैं न दूसरा मही देगा। काश्चित्तम या टैगोर पर बोलते हुए भी यह पत्र को उद्घग करता मही म्पत्तो थ। (बचन जी व सस्मरणो म निराला की मृदुनारम्यक सस्मृति, तप पूत आगरिका कही महीं है।) धाजा लेकर कभी अपन गीत गुनाने बँटने लो पहल पन्त का—

पलवन पग चूर्नू अपने पिया व

मुनाते। एता मन्नेशकर के अमृतनिशार स्वर बा म करता मैंने बहू पहल निराला के कम्बु कण्ठ से ढलते मन्त्र-स्तार निनालो म पत्र का— बाघ्र लिए कपो प्राण प्राणो से ? गीत मुना था। कहते थे मैंने कविनाएँ लिखी है कवि पन्त ही है !

उन तिनो मेरे 'स्वग-सार कौन तुम स्वस्ति लो मुक्ति-सी ? —एसे तसम शब्। से लदे हुए गीत 'माधुरी' के मुखपृष्ठ पर प्राय प्रकाशित हो रहे थे। भगवतीप्रसाद सकलानी ऐसे मित्र ताव छाई चाशनी ली बडवी-भीठी फटकार बताते, फवतियाँ कसते। मैं तसम को सम पर लाकर गा देता लो लोकपुन स पृथक स्वर उनकी भवो की वप्रता मेट देता।

एक दिन 'सरस्वती' म सद्य प्रकाशित पन्त जी का एक गीत—

लो, जग की डाली डाली पर

जागो नवजीवन की कलियाँ

मिट्टी ने जड निद्रा तज कर

खोलीं स्वप्निल पलकावलियाँ !

में भँरवी म गा रहा था। जिन्होंने उस अवस्था में मुझे सुना होगा, उन्हें मेरा आजकल वाला गाना बिन्दुन ही बेसुरा, बासी और उतरा हुआ लगता होगा। तब की बात और थी। सभ्रत के अधिल भारतीय कवि-सम्मेलनों में मेरा काव्य-पाठ सुनकर आँसों में आशीर्वाद भर हुए थोना अनावश्यक साँस तक न लेते थे, फुग-फुम करने वालों की फूँ मरक जाती थी।

निराला ने ओचक मुना तो क्षटपट बाजा उठा लाए और मेरी शास्त्रीय वृत्तियों को बाजे के निनाद से भरने लगे। फिर स्वयं मद्र से तारसप्तक तक पर अजन्ता शैली की उगलियाँ फेरकर जो 'भँरव' आलापा तो देखते ही देखते यह गान क्या से क्या हो गया!

जान कौसी जिदा तमन्ना थी निराला क दिल में जो उन्हें जिदगी भर तहपाती रहा, जिसने उन्हें फूलों की टहनी पर अपना एक घोसला नहीं बनाने दिया। इबवाल की ललकार कारगर हुई। पुराने जगल पहाड़ों में उन्हें धुनी रमाने नहीं जाना पठा, उनकी उमत्त उमग में एक ऐसा नया निरालापन सिरज लिया था जिसने उनके सम्पूर्ण जीवन को अनन्त एकांत में बदल दिया था। वह क्या फूली फूली कमजोर टहनी पर दीठ उठान, उनकी दीठ तो कही और गद्दी थी!

अपने लिए घोर उत्पीडन,

किन्तु पीडनक या लोगों के लिए,

पत्नी का-मा जीवन

हैसमुख, किन्तु ममस्वहीन निद्रम धालों के लिए!

इबवाल सियासन में डूब गए? निराला का नया जुनून नए वीराने में भटक गया?

है जुनु तेरा नया, पदा नया वीराना कर!

निराला ने इस साकार किया था

सिफ एक उमाद!

जन-क्षपवाद गुजता था, पर दूर,

क्योंकि उसे कय फुसत—मुनता?

—या वह चूर!

न देखा उसमें कभी विषाद,

देखा सिफ एक उमाद!

लिखकर ही नहीं स्वरा के प्रखर बहाव में सुदी को गक करके भी। विवेकानन्द की स्वर-रहरिया में रामकृष्ण की सत्यस्त आत्मा तीरती कम डूबती ज्याता थी। जिसने निराला को गाते हुए नहीं देखा नहीं सुना, उसने असली

निराला को देखा ही नहीं। निराला योद्धा थे, निराला तपस्वी थे—यह बसा परम्पर विरुद्ध बचन नहीं है, किंतु टैगोर और निराला साहित्य और संगीत के एक समान महान स्रष्टा थे यह 'काव्य गीतेन हृतये और संगीतद्रोही नई कविता वालों के लिए अवश्यमेव चिन्त्य विषय है।

निराला गाते थे तो उनकी निश्छल आत्मा की अमित च्युति बाधों में चमक चमक उठनी थी, पतले होठों पर कुन्द-दंतपडिक्त की उज्ज्वल सुगंध उतराने लगती थी, गालों में फारस का गुलाब खिल जाता था। उनके स्वर में ओज भरा माधुर्य या माधुर्य भरा ओज था जो अथज्ञ श्रोता को शब्दों की घाटियों में देर-देर तक मूकता जान पड़ता था।

उस भाल कलकत्ता आचार्य्य भित्तिमोहन सेन की स्वागताध्यक्षता और महादेवी जी की अध्यक्षता में निराला जयंती मना रहा था। मेरे भाषण का सारास्र भाटे टाइप के शीपको में दैनिक पत्रों में दमका कर छापा था। निराला तथा जलता ने मुझे जब जब कविता सुनाने का आदेश दिया, मैंने निराला के ही गीत सुनाए

नूपुर के सुर मंद रहे ।

जब मैं घरण स्वच्छंद रहे ।।

को 'जयजयवती मे,

'लाज लगे तो जाओ, तुम जाओ

को देग मैं

'फिर सँवार तितार लो ।'

को 'बहार में,

'बर दे खीणाशक्ति बरदे ।'

को भीमपलाशी में ।

प्रायः जब निराला के दमनाथ उपस्थित हुआ, उन्होंने अपने चिरञ्जीव मन्त्रीविशारद श्री रामकृष्ण त्रिपाठी को बुलाकर बाबा भेंगवाया और अपनी स्वर रचना में उक्त गीतों में नए प्राण प्रतिष्ठित कर मरा (गभा में अन्वैकिक लोह प्रियता का) अहङ्कार हर दिया। उस मन्त्र-मपूर स्वर के समान मरा स्वर का प्राण मिली-दानकार जमा जान पड़ता।

बान बर्नी में बर्नी आ गई। मैं निराला के मन्त्री में आनप्राण कवि कल्पित की स्यान्ता अमन दग में घों करता हूँ कि जस उनका समावधान कल्याणकाल के समन पीव पीव पत्र कर आया था, एम हा उनका मुक्त विराम निविद राग का हा देन था मनुद हरी और दरिद शक्यावाले, गहा बोनी

भूमिका
के मगीत को उन्होंने अपनी आत्मा के झतुल रोह्यय्य से गम्पन कर विराट
बना दिया था

बहु पव सुदर तव
छन्द-नवल स्वर-गौरव
जननि, जनक-जननि-जननि-गमभूमि भाये ।
जागो नव अम्यर भर ज्योतिस्तर बासे !

—गीतिका

×

वण चमत्कार,
एक-एक शब्द बंधा ध्वनिमय साकार ।
पद-पद चल बही भाव धारा,
निमल कलकल में बंध गया विषय सारा,
खुली मुक्ति बंधन से बंधी फिर अपार—
वण चमत्कार ।

—गीतिका

अस्तु, निराला के अमिन दान को ध्यान में रखने पर भास के एक श्लोक
का सहमा स्मरण हो आता है
'क्षीणा ममार्या प्रणयिक्रियासु,
विमानित नव पर स्मरामि
एतत्तु मे प्रत्यय दत्त-मूल्य
सत्त्व सचे न क्षयमभ्युपति ।'

—चारदत्त

पुष्करिणी' में 'अज्ञेय' ने निराला के कतत्व को समग्रता में नहीं आँका
है। निराला का स्वच्छ-दत्तावादी पक्ष पुष्ट और सबल है, गतानुगतिकता उ हैं
अवमाय रही है। उनके प्रवर भ्यक्तित्व और ओज भरी दुदात अभिश्रक्ति ने
सबको अभिमूत कर दिया है। —यह सब प्रारम्भिक निराला का ही वशिष्टय
हो सकता है। छन्द के बंध के प्रति कवि की घोर अनास्था और आवेग की
निरकुशता के अनिश्चेत सकेत निराला के कई सौ गीतों और सर्वोत्तम कवि-
ताओं (राम की शक्तिपूजा, तुलसीदास सरोजस्मृति, वनवेल, यमुना स्मृति
आदि के अतिरिक्त भी दजनों) की छन्दोबद्धता के ममज्ञ नहीं दे सकते।
जिसी बाद का गौरव बढ़ाने के लिए उसकी सङ्कीर्णता की बन्धेदी पर निराला
की सहस्ररश्मि प्रज्ञा और सतरगिनी प्रतिभा की बलि नहीं चढ़ाई जा सकती।

निराला का गद्य भी लयात्मक है, मुक्त वृत्त तो कुल मिलाकर प्रातिभ वृत्त ही हैं। ऐसे उमुक्त वृत्त वैदिक काल से दण्डक युग तक सस्वृत की विशाल परम्परा में बीज विटप रूप में विद्यमान थे। भारतीय साहित्य की बाह्य एवं आभ्यन्तर सश्लिष्ट शिल्प भाव धारा में अवगाहन करने मात्र से निराला की दुरुहता दुर्वोधता, असङ्गति और असम्बद्धता धुल सकती है। जिसे टेम्स में डुबोया जा सकता है उसे गङ्गा उबार लेगी।

तब प्रश्न उठता है नवीन युगबोध और भावबोध का, मौलिकता का निराला के आत्मिक और ऐकात्मिक का, किन्तु क्या यह प्रश्न कालिदास, शेक्सपियर तुलसीदास, गेट टगोर और ईलियट के लिए भी नहीं उठता? पश्चिम के विकासवादी आयात के औचित्य की प्रतिष्ठा पूर्व के अपूर्व प्रकाश को बुझाए बिना नहीं हो सकती? क्या आनन्दमठ की रचना स्काट की आत्मा में नहीं है? यो तो राम की शक्ति-पूजा की कायात्मा को न ममज्ञानवाले कृत्तिवास लिए फिरते हैं शेक्सपियर की नाट्य प्रतिभा के कसे कसे स्रोत ढूँढे जाते हैं, 'मा मा कहते रहने पर भी तुलसीदास के लिए 'नाना पुराण' उल्टे पुल्टे जाते ही हैं, फास्ट में अभिमान शाकुन्तलम् की परछाया मङ्गल ग्रह वेधक दूरबीन से साफ उभरती दिखती है और ।

खुदा गजे को नाखून न दे वह 'इत्यल कर देता है। मेरे कहे का क्या? कहीं चूहे के चाम से नगाड़े मड़े जाते हैं? तदपि कहे बिन रहा न कोई विटगोर निराला जसा म जहा पश्चिम का शुद्धीकरण—पूर्वाकरण हुआ है, वहाँ शत प्रतिशत पश्चिमी भूमि—चक्रान्तशिला पर अज्ञेय का अपना अजनबी आकाश ही शुका है।

अज्ञेय की इतिहास निर्मात्री प्रतिभा अपाश्चात्य प्राणो को चौंकाती रहेगी कभी भारत की आत्मा से एकाकार न होगी।

गगन गगनाकार निराला में साहित्य और सङ्गीत का एक अगम्य सारस्वत स्रोत प्रयत्न किया जा सकता है

नान नीलिमा-सी व्यक्त

भाषा सुरनिन वह देनों में आज भी—

मुक्त छन्द

सद्व्य प्रकाशन वह मन का

'पावन वनभूमि' के इस 'आनन्दप्रद विधान' को—
 आज तुम मुझे शब्द न दो, न दो,
 म कल भी कहूँगा !

का अक्षगीन उच्चारण कैसे सह गवता है ?

निराला की स्वानुभूत भावना यदि सामान्य मनो तत्र सन्नमणशील नहीं है तो इसका कारण दुर्बोधता, असम्बद्धता वदापि नहीं है। गांधी की अन्तर्ध्वनि नहरू नहीं समझते थे, इसे क्या कहा जायगा ?

प्रकारांतर से काव्य प्रकय के प्रेषणीय हो सवने की स्थिति में निराला की सवतोयामिनी प्रकाश प्रतिभा शान्तीत स्वरोमिया से क्या वाम्पित होना पसद करती ? सगीत निराला के सर्वोत्तम कवित्व की भी आत्मा है

लड्डू पदतल शतदल,
 गजितोमि सागर जल—
 धोता शुचि चरण युगल
 स्तव कर बहु अय भरे ।

इस बहु-अय भरे स्तव का उच्चारण— यह दीप अवेला स्नेह भरा,
 है गव भरा मदमाता, पर
 इसकी भी पक्ति को दे दो !”

वाले ल्यहीन कण्ठ से क्यापि न होगा फिर 'पाठ्ये गेये च मधुर' का आनन्द निःशब्द वाचनालय मे कैसे सक्नान्त हो ? मुझ-जसा पर शून्य मे छोडे दौडाने का आरोप हो, तो प्रस्तुतर मे कहना होगा कि गणतन्त्रीय जन-गणना से विरल एकांत उच्चता अप्रमावित ही रहती है। दसो इन्द्रियाँ मिलकर भी एक आत्मा की बराबरी नहीं कर सकतीं। हम पश्चिमी कुरूपता की सौन्दर्य, अस्वस्थ प्रवृत्तियों को विवासशील और विवेक विक्षेप को नई बौद्धिक उपलब्धि स्वीकारने के लिए विवश नहीं हैं। अरविन्द रवीन्द्र की वक्त्रानिक गणनिकता जिसे नहीं छू पाती रामकृष्ण विवेकानन्द की आध्यात्मिक वक्त्रानिकता जिसे नहीं स्वीकारती, रामतीर्थ रामण की ब्रह्मसत्पिणिनी उपलब्धि जिसे नहीं संवारती, वह आत्तरिक्ता भारतीय जीवनलना को कभी कुसुमित-भलित नहीं होने दे सकती, वह स्वण-वर्णा आधुनिक अमरबल्दरी भारतीय साधना की कल्पलता के सिर पर चढकर भी चित्त ही बनी रहेगी।

कभी कभी प्रभाव-पूण वाग्जाल कुछ विश्वसनीय तथ्यों को फसा लने मे सवशक्तिशाली प्रतीत होता है, किंतु अन्तत जाल मे सत्य नहीं फँसता, आलोक नहा उल्लसता, आत्मा नहीं भटकती।

अब सब ठीक-ठाक है। निराला की प्रतिभा का लोहा सभी मानत हैं—
वादों में उनका घेराव करनेवाले भी, देश-काल से ऊपर उठा देखनेवाले भी।
मैं तो तब की बात कह रहा हूँ, जब उनके 'राजुज' को व्यङ्ग्या की आँच में
भूना जाता था, 'काँचा' को कटूतियों की कढ़ाई में पकाया जाता था। कठोर
आलोचनाओं की बौछारें उन्हें हर नए का पथ प्रशस्त करने के क्रम में सहनी
पड़ती थी। उन्होंने 'वनवेला' और 'सरोज-स्मृति' के भी पूरे अपनी असह्य
पीडाआ और निदय प्रहारा को याद किया है —

कितने ही बिघनों का जाल
जटिल, अगम, विस्तृत पथ पर विकराल,
कण्टक कदम, मय भ्रम निमग्न कितने शूल,
हिल्ल निशाचर, भूधर, कदर पशु सङ्कुल
पथ धन-तम, अगम अकूल ।

—परिमल

क्यों न याद करें किसी का गेटे और टगोर-जसा ऐश्वर्य सम्पन्न, तप
और निश्चिन्त जीवन हो तो बौद्धिक जागरूकता के साथ उसका जीवन
निरपेक्षता का सिद्धान्त बघारना शोभा भी पाए। किंतु जहाँ दुख ही किसी
के जीवन की कथा हो वहाँ उसका अरुतुद दनदिन दशन काव्य-कला में उनीत
होकर एक नया, सब-सवेद्य रस बनता रहा यही क्या कम है ?

ऐसे ही समय मुझसे भी एक अपराध बन पड़ा जिसका परिगुणित पछतावा
आजीवन मेरा पीछा करता रहेगा। जहाँ मैंने निराला पर पहली कविता लिखी
थी, पहला बड़ा लेख लिखा था वहाँ मुझसे परिचय के बाद निकली उनकी
पहली पुस्तक—गीतिका पर पहला (और कदाचित् अंतिम भी) बड़ा
आलोचनात्मक लेख भी मेरा ही प्रकाशित हुआ था। मेरे तब तक के लिखे लेखों
में वह सबसे तीव्र था।

इस बार लखनऊ जाने पर करारी फटकारें सुनने को मिली कि मैंने पहाड
से टक्कर ली है, कि मेरा दिमाग आसमान पर चढ़ गया है, कि अंधे के हाथ
बटेर क्या लगी वह अकलम-द की दुम बना फिरता है !

इसी समय चकलस (श्री नरात्मप्रसाद नागर द्वारा सम्पादित) का
भाभी अड्डू निकला। उसमें मेरे माधुरी के मुखपृष्ठ पर प्रकाशित मधगीत की
परोटी निकली। दिल कडाकर, ओठ चबाकर सब चेलना पड़ा।

वहाँ निराला के प्रशस्तका में रामविलास शर्मा नरोत्तम नागर और अमृत
लाल नागर ही मूक-बूझवाले थे। इनमें भी 'यडग्य नरोत्तम जी अधिक करते

ये, रामविलास शर्मा वेत्तिष्ठक पटकारते थे,—रूप-अरूप क कुछ छपे पमें देख कर कहा था कि यदि ये कविताएँ उनकी होनीं ता (भूसामण्डो की मोरियाँ दिखला कर) वे फाड कर फें देते, अमृतलाल नागर ही उमड कर मिले थे और अपनी पहली पुस्तक—‘अवशेष’ को एक प्रति भेंट की थी जिसमें भी उनके वे सभी भाषा-सम्बन्धी समत्वार् मोजूद हैं जो आगे रग लाए, त्रिनका बहुचर्चित विकास वूँ और सागर’ अमृत और विष’ आदि में हुआ ।

राय की अशेष बातें गताल छाते में गद्द या हृदय में गाँठ कर गद्द । इस सम्बन्ध में निराला में मरा जो पत्राचार हुआ था, वह इन सफलन में विनोप महत्व का है ।

हिन्दी के आलोचकों में पण्डित नन्ददुलारे वाजपेयी मुने सबसे अधिक मानने वाले में थे । उनका सजल स्नेह, अवसर के अनुरूप रूप नहीं बदलता था । किन्तु कदाचित् तस्युत्तम होने के कारण मैं पण्डित हजारीप्रसाद जी पर अन्तर्भूद थन्दा अधिक उँडेलता था । उनका साहित्य मुने शांत और सिन्ध, सन्तुलित और उदास हाने के कारण अच्छा लगता था या हास्य और व्यङ्ग्य और विनोद से ओतप्रोत, अत वेहद जिदादिउ होने के कारण, विश्लेषण करने की बुद्धि न तर थी न अर है ।

किन्तु जब उनके व्यक्तित्व की गरिमा ने कलावाजी खाई, मुने अचम्भा हुआ था । प० बनारसीदास धतुर्वेदी जिन दिनों ‘कस्म देवाय’ का आदीलन चला रह थे, द्विवेदी जी ने उँहें ‘कस्म देवाय’ का अथ क्या नहीं समझा दिया, मुझे हैरानी होती थी । गीतिका’ की आलोचना में उँहोंने जिस सुरचि का परिचय दिया था वह गुप्त-वशी तुकारामो के लिए पर्याप्त प्रेरणाप्रद थी, किन्तु उँहोंने गीतिका की भूमिका में प्रसाद द्वारा प्रयुक्त ‘नम्ण’ शब्द के सम्बन्ध में जो कहा था, वह क्यों ? यह मेरी समझ में नहीं आता था । नृम्ण’ शब्द तो ऋग्वेद से भागवत तक में बहुधा प्रयुक्त हुआ है, वह ‘अनात कुल शील’ क्नापि नहीं, फिर उसका प्रयोग महापण्डित प्रसाद ने किया था, यही क्या उसकी सायकता का प्रबल प्रमाण न था ? द्विवेदी जी की लोचसप्रही व्यावहारिक बुद्धि ने हुरमत लेने की गरज से हर्गिज ऐमा न किया होगा ।

लिङ्ग पुराण में मृग और व्याघ्र की एक क्या जाती है (उसमें एक दिए से दूसरा दिया जलाने और एक पर में दूसरा पैर रगड कर घोने की भी पाप में गणना की गई है) कि सचाई पर अडिग एक हिरना जब अपनी जान व्याघ्र को मीपने आता है तब व्याघ्र का मन बदल जाता है । वह तार धनुष फेंक देता है ।

'शनिवाररे चिठि' में सजनीकांत दास आजीवन रवीन्द्रनाथ के विरुद्ध विप-व्यमन करते रहे थे किंतु ज्यों ही रवीन्द्रनाथ स्वयं सिधारे, वह उनकी 'अनामयिक' मरुतु से दुःखी होकर 'सम सामयिक' जीवन की ओर मुड़ गए ।

पुराण पुराण है, नवीन नवीन । मच्चा आलोचक गडे मुँ भी बघाढता है और मिट्टी में मिले हुए की भी मिट्टी पलीद करता है । जीवत तो उसके प्रथम शरण होते ही हैं । उहे वेदाग छोड दे तो खुद दागी कहलाए ।

कहते हैं कि कमजोर आदमी पहल किसी दूसरे का अनुकरण करता है, (आज नई कविता के कवियों में से प्रायः सबको असफल गीतकार के रूप में सोदाहरण देखा जा सकता है ।) अनुकरण में असफल होने पर वह ईर्ष्यालु हो जाता है, ईर्ष्या के बाद निंदा, उपहास क्रोध और फिर उससे बर करने लगता है ।

रवीन्द्रनाथ के दोषावेपी बँगला के काव्य-साहित्य को आवजनाओ से बचाने के लिए कमर बसकर नहीं खडे हुए थे, बनारसीदास चतुर्वेदी ने हिन्दी साहित्य का कल्याण करने के लिए पन्त, प्रसाद निराला का बहिष्कार नहीं किया था । हिं दी के अधिकांश आलोचक स्वयं सजनात्मक प्रतिभा से प्रताडित और परिश्रांत पाए जाते हैं । जो उनके साँचे को तोड कर गिल्ली डडे में तबदील कर सकता है उस मौलिक मूर्ति भञ्जक पर वह अपनी ही सुरक्षा के लिए खड्गहस्त देसे जाते हैं, उच्च कोटि का साहित्य तो वह समझते ही नहीं उसकी सुरक्षा क्या करेंगे ? कौन अपनी पसलियों पर हिमालय का बोझ लादे फिरे जब कि काठ के रगीन खिलीनो से दुकान चल निकलती है ? टुटपुजिये नामी गिरामी को राह बताते हैं कौन सा सेबल गाहको के मुआफिक आता है नामी का नाम बिकता है । 'यूरोसिस और साइकोऐनालिसिस का बोलवाला है तुलसीदास बकवास है 'राम की शक्तिपूजा कुछ यह, कुछ वह है ।

ऋग्वेद का एक मन्त्र है

ऋचोऽक्षरे परमे व्योमन यस्मिन् देवा अधि विश्वे निषेदु

यस्तन्न वेद ऋमचा ऋरिप्यति य इ तद्विदुस्त इमे समासते

तात्पर्य यह कि सभी वेद अपरिच्छिन्न आकाश रूप अक्षर-अविनश्वर परमात्मा में ही पयवसित होते हैं सब देवते विश्व की नश्वरता से ऊपर उठे हुए उसी परम व्योम में आश्रय पाते हैं —जब किसी को यही तत्त्व हाथ में लगा तब उसने ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद अथर्ववेद पढ़कर क्या पाया ? अब इसे चाहे कोई एक ही लकड़ी से सबको हाँकना कहे किन्तु काय-तत्त्व ज्ञान में भा मैं इसी निष्कण्य का विश्वासी हूँ । यदि कविता का कथ्य समझने में दाँतो में

पसीना आन उगता है, यदि समाज विज्ञान, मनोविज्ञान, ज्योतिर्विज्ञान लाख मिर टकराए पर शिल्प का कोई काम नहीं बनता, तब छायावाद की विशिष्ट प्रवृत्तियाँ का अध्ययन किया तो न किया तो, याँधीवाद और भावसवाद की रस्मी बटी तो न बटी तो क्या फक पडता है ?

परम्पराओं के अध्ययन का अर्थ देखो (पृष्ठ ६६६) देखो (पृ० ७७७), वही (Worringer Abstraction And Empathy) वही (Stenborg Cassel's Encyclopaedia of Literature) भर नहीं है प्रगति का प्रकप अन्तश्चतना क आंतर आलोक से ही मापा जा सकता है। ओठ के चाटे प्यास नहीं बुझती। बड़े नामों के म्यान में नान-लव ही जगवाई तलवार छिपी रह कर ही ड्राइंग रूम की शोभा बढ़ाती है।

दुरुहता और जटिलता से दामन बचाने वाले क्या कवि शिरोमणि तुलसी दास को समझते हैं ? तत्त्वज्ञानी कबीर की अटपटी बानी सुनते ही दिल में उतर आती है क्या ? फिर यह आत्मवञ्चना क्यों ?

‘भरतनाटयम’ का प्रत्येक समय समथक स्वयं सामवेद समझता है ? कितने आयुर्वेदन अथर्ववेद वाँचते समय मन्त्रा का भ्रम छूते चले जाते हैं ? हैं तो सामवेद-अथर्ववेद उद्गम स्रोत ही धारावाहिक पान को तरोताजा रखने वाले किन्तु इससे क्या ?

गज गजों के ज्ञान से वेद वेदाङ्ग नहीं ममय में आते निगुण-सगुण माया-ब्रह्म की सोना रेत विद्या से कबीर और तुलसी पर दावा करना—

मुखमस्तीति वक्तव्य दशहस्ता हरीतकी

—जैसा है।

यदि कोई—

अध्यक्षतमूलमनादि तदु स्वच चारि निगभागम भने
षट षड शाखा पच शीत अनेक पण सुमन धने
फल युगल विधि षट् मधुर वेलि अकेलि जेहि आश्रित रहे
पल्लवत फूलत नवल नित सत्तार विटप नमामहे।

—तुलसीदास

समझना चाहेगा तो वह परम्परा की खोज में श्रीमद्भागवत तक स्वयं हट्टि फैलाएगा

एषायनोऽसौ द्विफलत्रिमूलश्चतुरस पञ्चविध षड्भासा

सप्तदशसु अष्टविधसो नवासी

दशान्तदो द्विषो ह्यादिवृत् ।

नहीं तो उन्हें जनकवि जगनिक मिथ वर बदरभाऊ की कहानी की छाटास मिठास पर प्रवचन करेगा। स्मरण रखने योग्य है तो यही कि जब हिन्दी में वैज्ञानिक आलोचना नहीं चालू हुई थी तब तुलसीदास जी की भक्ति गान वैराग्य ने ही सदियां तक जिया रक्का था। सद्गीत-बन्ध के पारङ्गुतों ने राग रागिनियां म बिनय पत्रिका व पदा को बांध कर उनकी कीर्ति को लोकात्तरता प्रदान की थी। प्रियसन और लम्गोडा और आचार्य शुक्ल जसा न उसी अलौकिक तेजस्विता ने अपनी आरम्भिक आलोचना के लिए प्रेरणा प्राप्त की थी।

नावेदविमनुते त बहत्तम

—जिसे ज्ञान विज्ञान का मम नहीं मातूम वही 'उसे बडा नहीं मानता।

जसे परम्परा प्रगति में परिष्कृति प्राप्त करती रहता है उस ही नित-नए विकास में वतमान भविष्य बनते रहते हैं। अवश्य यह विकास गुलाब की बल्म में गुलाब के फूल खिलाने वाला ही होता है। बबूल के पेड में गुलाब के फूल और गुलाब के झाड में बबूल के फूल वैज्ञानिक चमत्कार से खिलते हैं, नैसर्गिक विकास की प्रक्रिया और है।

श्रीमद्भागवत और रामचरितमानस की अन्तर्धारा में कोई विशेष अन्तर नहीं है, देश काल और भाषा का लम्बा व्यवधान शिल्प तत् मूल्य को ही थोडा बहुत प्रभावित कर सका है। निराला को भी इसी क्रम में देखना होगा —

पल्लव के उर कुसुम हार सित,
गंध पवन-यावन बिहार नित
मिलित अत नम नील विकल्पित
एक,—एक से तीन बनीं तुम।

× ×

बोलू अल्प, न कर अल्पना,
सत्य रहे, मिट जाय कल्पना,
मोह निशा की स्नेह-गोद पर,
सोए मेरा भरा जागरण।

निराला को दुर्बोध कहने वाले अपनी-अपनी सुवाधिनी टीका दिखलाने हैं। उन्हें कौन ममशाए कि तुम मूल भूल गए हो।

मैं तबले पर लिपटे हुए कलावे—मूत के लच्छे की सोने के तार नहीं मानता। जिसमें कवि के प्राणों के श्वासोच्छ्वास स्पन्दित हुए हों उसे बाजारू भाषू में कमे दुहराया जा सकता है ?

निराला का 'एक' तीन बन गया है । तीन म एक निराला—

मानव जहाँ बल घोडा है,
बसा तन मन का जाडा है ।

ऐसे व्यङ्ग्यो की धाधुनिकता मिग्जता है,

दूसरा निराला अनुराग सन्नाट और विराग-यागी है—अवश्य अनुराग म रसी-द्रनाथ और विराग म अरविन्द जैसा युग विभक्त नहीं ।

लता मुकुल हाग-गध भार भर—
बही पवन ब-द म-द, म-दतर,
जागी नयना मे बन घौवन की माया ।

—गीतिका

× × ×

अट नहीं रही है !
आभा फागुन की तन
सट नहीं रही है !
पत्तो से लदी डाल !
कहीं हरी, कहीं लाल
कहीं पडो है उर में
म-द-ग-ध पुष्प माल !

—अचना

+ + +

देख चुका जो-जो आए थे, चले गए
मेरे प्रिय सज बुरे गए, सब भले गए !

—परिमल

रे कुछ न हुआ तो क्या ?
बल खेत से रे क्या ?

—गीतिका

तीसरा निराला भक्ति और ज्ञान के सहज समन्वय का महान कवि है यही कबीर और तुलसीदास की काष्ठा म नई विषवसनीयता भरता है । यह साव-देशिक और सावकालिक है । समकालीनो म कोई इनकी समकक्षाता म नहीं

आता । इसे पढ़कर—

There is madness about thee, and joy divine
In that song of thine
Lift me guide me high and high
To thy banqueting place in the sky

का कवि बड़ सवय जाने क्या लिखता ?

य तीना निराला अजेय हैं । 'राम की शक्ति पूजा', तुलसीदास, 'सरोज स्मृति' जसी महान कविताओं में तीनों निराला मिल-जुलकर काम कर गए हैं—यद्गम्य और नाटकीयता, दशन और ग्रन्थात्म, समाज और राजनीति राष्ट्रीयता और अन्तर्राष्ट्रीयता, आदर्श और यथाथ, राग और विराग—सबका सर्वोच्च समुच्चय जिन रचनाओं में उपलब्ध हो उनकी तुलना किससे की जाए !

स्वयं निराला ने मेरी इस मायता को अधिक महत्त्व नहीं दिया इन पत्रों में देखेंगे उन्हें अपने छोटे गीत ही बड़े लगते थे ! वह मस्ती के आलम में हारमोनियम उठाकर—

खुलती मेरी शोफाली
हसती री डाली डाली
या
दे म कर्हें वरण,

जननि दुखहरण पद—

राग रञ्जित मरण !

गाना पसंद करते थे 'तुलसीदास या राम की शक्ति पूजा' की आवृत्ति करना नहीं ।

जीने के लिए जो कवि क्रान्ति और सघप की सामिप्यनी कृचाएँ गढ़ता और उनकी आवृत्ति कर अप्रबुद्ध म्लान मलिनो के धक धक भाल अनल जलाता और धूमिल प्राणों में ज्योतिया की ज्योति जगाता था जीवन की—आत्मा की ऐकान्तिक गहराइयों में वह यथार्थिक उत्तेजना को जीण वस्त्र की तरह उतार फेंकता और भाव विह्वल कण्ठ से आत्म परक अनगाए गीत गाता था, यह तो मेरी सौ सौ बार अपनी आंखों देखी अपनी भावुकता की पी हुई अनुभूति है !

आपसे हम गुजर गए कब के,
क्या है जाहिर में जो सफर न किया !

कम से कम मुझे तो रामकृष्ण विवेकानन्द की आत्मज्योति से उद्भासित निराला को देखे बिना, तन मन से पथन—आत्मा की अनुभूति होती ही नहीं। ईलियट की निर्वैयक्तिकता किताबी है। निराला तो जब चाहते, बाह्य को सम्पूर्ण रूप से स्थगित कर आन्तरिक में प्रतिष्ठित हो जात, और आन्तरिक का अंधेरे की तरह सतह पर छोड़कर बाहरी रोशनी में चहलकदमी शुरू कर दत थे।

मजा तो यह है आह में असर यहा तक तो हो,
फलक भी चीख कर कहे जला दिया, जला दिया !

कही आचार्य हजारीप्रसाद जी द्विवेदी का एक लेख प्रसाद पर पढा था। उसमें उन्होंने कामायनी के पटले ही छन्द से अपनी अरुचि व्यक्त की थी। कृतवित्त डाकिन के विवासवाद का अनुवाद कर उन्होंने मनु में शबरा शबरा भाय और अबुतोभय पीर्य का समावेश चाहा था। मेरे मन में विचार आया, द्विवेदी जी को कालिदास ने भी—

धयस्वतो मनुर्नाम माननीयो मनीषिणाम,
आसीमहीक्षितामाद्य प्रणवरच्छदसामिव ।

लिखकर शबर भाव के अभाव में प्रीति न किया होगा,

आसीदिद तमोभूतमप्रजातमलक्षणम,
अप्रतव्यमविज्ञेय प्रमुप्तमिव सवत

के विज्ञानी मनुस्मृति में प्रवचना, मनु तो आरम्भ से ही एकाग्रचित्त और प्रशांत आसन में महर्षिया से घिरे हुए दिखलाई देते हैं। अब इन आरण्यको में जगली शबरापन कहां से आए ? फिर यह देव प्रलय और आदिमानव की कल्पना क्या पश्चिमी विकासवाद की विरासत है ?

हिन्दी में लिखते हुए अभी दो ही वय बीते थे कि गीतिका में निराला-जसा निबन्ध साहसपूर्वक लिखकर मैंने माधुरी में छपा डाला। उस निबन्ध का स्यापत्य एक अनाड़ी की करामात में बल गया। वरजिश के जोर से जिनके नाम का शब्द फहराता था दीदे फाड़कर देखा पर उनमें साहित्य की आत्मा के अपरिचय का धुंधलापन साफ दिखलाई देता था। उनकी अधूरी तैयारी कलाकृति की समग्रता पर सघन घन घटा-सी छा जाती थी जब भी वह प्रकाशवादी आलोचक कहनाते थे। क्योंकि उनके विचार सपाट थे, क्योंकि उनकी भाषा साफ मेंजी हुई थी। मेरा कथ्य कमजोर न था मगर मेरे पास भाषा के नाम राम दुहाई थी। पता नहीं, किनके बहनाव में पढ कर निराला बिगड खडे हुए और उन्होंने कडा विरोध पत्र भेजा।

सन् ३७ ३८ म मैं रायगढ म राजववि था । जिन्गी म पहली बार हर महीन सौ-पचास रुपये देवने को मिलते थ । मैं सिफ रितायें धरीन्ता था—बगला की 'लोहार बांधन' और पथेर दावी —साथ-साथ पत्ता था, राजगगर की भाषा म—सतणाम्यबहारी' था । बगला का ऐसा नशा चढ था कि दूर दूर स तडी बोली की जमीन उजाड और उदडखाबड नजर आती थी । जनवरी '२१ की सुधा' के प्रथम पण्ड पर प्रकाशित निराला का पत्र (नर जीवन क स्वाथ सकल) महाजन पत्तापली' की कौन कह भानुसिंहर पत्तावली क मुत्ताजल भो मुझे गदयात्मन लगता था ।

मैं तब माधुय्य बगला का प्रौढि हिंदी की,—जसा विभाजन न कर सकन के कारण कुछ ऐसा लिख गया जो निराला के अधिक अनुकूल न था । हर सिंगार झरता भर है, अपने को निशेष कर अशेष पर निछावर नहीं होता । मेरे हरसिंगार का मरण-ग धी उपहार जीवन के जाग्रत देवता को कस म्बी कार हाता ?

तब निराला यह भी भूल गए कि 'गीतिका मे निराला का लेखक अभी दो दात का है उह उसके विष के दात तोडने की जरूरत नहीं दरअमल वह विष के नहीं दूध के दात हैं बबत आने पर अपने जाप टूट जायगे ।

पत्रावली म वे पत्र अत्यंत रोचक और उल्लेख्य हैं । कालिदास क बाद रवीन्द्रनाथ की कमजोरियो को खोल कर दिखलाने के जलावा उन पत्रो म मेरे ससृजन और बगला काव्य क नान को खूब सराहा (!) गया है । कह से घोबी गधे पर नहीं चढता—यह उक्ति मेरे उत्तर-पत्रो मे चरिताथ हुई थी । मैंने निराला का कहा नहीं माना था ।

पल्लव की भूमिका म पत्र जी ने हिंदी म अंग्रेजी ढग की आलोचना की माँग की थी और बडे ठससे स लिखा था कि वह काव्य रसात्मक काव्यम और रमणीयाथप्रतिपादन शब्द काव्यम को खूब समझ चुके हैं । उह अंग्रेजी ढग की आलोचनाए मिली और बहुत मिली । उहाने खुद भी काफी लिखी । इम तरह उनकी पहली माँग प्राय पूरी हो गई । दूसरा दावा बेशक गलत था । काव्य की उक्त परिभाषाएँ जाननवाला लोकायतन नहीं लिख सकता था ।

निराला ने भी गीतिका की भूमिका म प्राचीन कविया और गवया को अपने कगीत तकौ म दुरी तरह घसीटा था । यह ठीक है कि इस सशक्ति-नाल म मध्ययुगीन समृति को पाश्चात्य सभ्यता के बवडर न बुरी तरह झकपोरा और चक्कर म डाल रखा है । फ्तु कोई कसा भी गूर आलाचक बयो न हा,

निराला का मूर तुलसी से बड़ा बनाने का छुटपन नहीं जतनाएगा। ऐसे ही भारतिय सगीत की उत्तर दक्षिण शक्तियो का कोई भी ममय रवीन्द्र सगीत या निराला सगीत को श्रेष्ठतर नहीं प्रमाणित कर सकता। कुछ इसी चीटि के पूर्वाग्रहों से मेरा निबन्ध बंधा हुआ था। मैंने आशंका नहीं, अपनी सीमित अभिज्ञता का आवरण भङ्ग किया था। मैं गुणो नहीं, किन्तु निर्दोष अवश्य था।

'शणवल' की अनोखी खोज निराला को कालिदास की ममज्ञता का प्रमाण-पत्र देने वाली न थी। जब निराला और डा० रामबिलास शर्मा इकट्ठे बैठकर कालिदास की खिल्लियाँ उडाते थे तब मेरी गेनी मूरत पर नकली हँसी पुत जाती थी। जब 'तुलसीदास' में 'शणवल' के आधार पर कालिदास का कुप्रभाव सिद्ध किया जाता था तब मुझे इन महान आलोचकों की विनम्र अहम्मयता पर रोना आता था। एक रात मैंने चिढ़कर निराला की अट्टहासिनी घोष्ठी में डा० रामबिलास शर्मा से पूछा —

"अनुमन्ये तावद् भवदभिप्रेतम् किन्तु समवगत्यासख्यातान् चत्रप्वैरपद क्रमान् निरालालीलापितपरिमलगीतिश्रादिसदव्यान् समविषयसन्तरणक्षमान अपि नामस्य सगिरत भवन्नो यदतिगैत निरालामहाशयोऽमिताशय, कालिदासीयव्यपदेशम् ? किमयमेव सपर्यापय्यायिस्तुलसीदासीय-वाग्वैभवस्य ? परिच्छेत्तुभल वृत्तिरिय विच्छिन्ति कालिदासोपचितवचनरचनाया ?"

तब डा० शर्मा ने स्वर में गम्भीरता गहर मुझे हिन्दी में अपना मन्तव्य प्रकट करने को कहा।

मिन के फेर से मूमेर होत माटी को ! — अब तो मेरे हँसने की बारी थी। बोला

'जब आप मरी मसूतन नहीं समझते कालिदास की कैसे समझते हैं ? अपमान तो काव्य नहीं है !'

निराला ने अपनी मसूतन में कुछ कहकर अप्राथिन मध्यस्थता की और वार्तालाप का विषय तत्काल बदल दिया।

जिसे कालिदास प्रिय न हों उसने मसूतन पढी ही नहीं। काव्य बला है, कालिदास ने ही सबसे पहले इसे ममज्ञा था। कालिदास का अध्येता 'चित्राङ्गदा', 'विदाय' 'अभिशाप' या 'फॉन्ट' लिखता है, 'तुलसीदास' नहीं। यो माप, मिलन माइकेल तक मेरी भी दृष्टि फैली थी।

छान के लिए प्रस्तुत पुस्तक (निराला के पत्र) को पाण्डुलिपि भेज चुकने के बाद डा० रामबिलास शर्मा का महान प्रय (निराला की साहित्य-साधना)

छपरर बाहर आया । (निराला के पत्रों के लिए उन्होंने मुझे कई बार लिखा था ।) शर्मा जी का प्रथम पहले छप गया होता तो मुझे पत्रों की यत्न-तत्न पाठ टिप्पणिया तयार करने में बहुत कम कठिनाई होती ।

शर्माजी न मुझ जस निजन में खाण अक्किञ्चन साहित्यिक को अपने महान प्रथम अनेक रथलो पर याद किया है, कोई कस कृताथ न हो । यहाँ केवल कुछ व्यक्तियों की ओर सकेत भर कर देना चाहता हूँ जिससे उन प्रथम की एतिहासिकता अगुण्य रहे ।

'निराला की साहित्य माधना के पृष्ठ ३५५, ५६ पर ऊपर लिखे हुए प्रसङ्ग को गलत ढंग से प्रस्तुत किया गया है । मेरा निराला की काव्यकला नामक लेख पहले प्रकाशित हुआ था, 'गीतिका में निराला' उसके काफी दिनों बाद । निराला अपनी प्रशंसाओं से नहीं मेरे द्वारा दरमाण गए काव्य दोषों से अधिक प्रभावित हुए यह जानकर अपना प्रथम थम भी मुझे चरम-जसा सायक प्रतीत हुआ । फिर उन्होंने दुष्ट गीत जो नहीं लिखे । पत्रों में अपनी सरल गहनता का उल्लेख प्राय करते रहे 'कवि तालिका में आपके साथ ही मेरा नाम भी लिख दिया ('रामविलास प्रणय, जातकीवल्लभ जागे'—अणिमा प० ३०) और फिर चेला' मुझे ही समर्पित किया । आपके असन्दिग्ध निष्पन्न व सम्बंध में घोटने वाला मैं कौन होता हूँ ? हाँ, मेरे अव्यक्त कथ्य अविश्लिष्ट शिल्प का निराला ने अवश्य समझ लिया था

आमार अनापन
आमार अनाहत
तोमार घोणा-तारे
बाजिछे ता' रा
आनि हे जानि ताओ
हपनि हारा !

निराला शक्ति में उनकी काव्य प्रतिभा का विशिष्टन करके नहीं दिया जा सकता । जैसा वह व्यक्ति रूप में प्रकृति के एक अमिन्न अङ्ग थे एम ही उनका कविता भी प्रकृति के साथ साक्षात्कार का ही अभिव्यक्ति है । निराला का देखन, सुनने पर उनके कविता के गुण का —साधारणोत्तरण का भी यही रहस्य जान पड़ता है । अने प्रकृति नाम रूपा की विविधता में अने की अभिव्यक्त करती है एम ही साधारण एव परम्पारित मन्त्र-मन्त्र छवियों में निराला का अपना ही विशिष्ट अविश्लिष्ट प्रतिप्रति है । यह बात उनके आत्मपरक गीता, प्रगीतों तक ही सीमित नहीं, सुधी-गम एव चरकाम्य तथा 'राम की कति पूजा-अम

महाकाव्य पर भी एकसमान लागू होता है ।

निराला से पहली मुलाकात पर कदाचित्त सबसे पहले मैंने लिखा था—
निराला दशन ।" उसम मैंने अपनी छँठ-अव्व का भी प्रकारान्तर से निर्देश
किया था । बाजपेयीजी ने उसे बहुत पसन्द किया था । 'कवि निराला' से
उन्होंने भी उम्मी लहजे का इस्तेमाल किया—निराला से अपनी पहली मुलाकात
का हवाला देते समय । उस दिन त्रिलोचन जी ने भी कुछ-कुछ वैसा ही अपना
अनुभव बतलाया । मेरे प्रथम वार्तालाप के माझी तो स्वयं बाजपेयी जी थे ।
वर्षों के साहचर्य्य मे उहाने कभी मुझे स्वघटित से नहीं परिचित कराया था ।
अब 'निराला की साहित्यसाधना' मे भी वैसा ही स्वर छिड़ा लिखता है । हाय
रे ! निराला के अध्यताओं में क्या कोई भी उनसे सहज भाव से नहीं मिला
था ?

अब डा० शर्मा जो कह, निराला की प्रशस्ति अकेले मैंने ही तो नहीं लिखी
है । पत जी ने प्रतिभा के उत्तम श्रृंग से अमृतकलश छलकाया है —

अमृत-भुज रुवि, यश काय तव जरामरणजित,

स्वयं भारती मे तेरी हुतन्त्री शङ्कत ।

किंतु यथास्थान अपना मठ भेद भी प्रकट किया है । यह कोई गुस्तर
साहित्यिक अपराध है भी नहीं । मैंने तो घर, तब लिखना शुरू ही किया था,
मेरा सारा आयास अज्ञानजय था ।

मेरी पुरोभाषिता तब आलोच्य हाती जब मेरा उद्देश्य दुष्ट होता, बनारसी
दास जी चतुर्वेदी की सी दुरभिमर्षि मैंने भी की होती या हजारप्रमाद जी
द्विवेदी की तरह मैं भी कोई प्रौढ लेखक या आलोचक होता ।

निराला पर लिख मेर किसी भी परवर्ती लेख ('काव्य मे चित्र और संगीत'
'निराला की कविता', 'तुलसीदास', 'अचना' आदि) मे वह गीतिका वाली शक्ती
फिर खेचने को नहीं मिलेगी ।

डा० शर्मा न निराला कविता के मन्दम म जिस टोन मे मेरा नाम लिया
है, मैं उसी टोन मे जवाब न दूँगा । दरअसल विद्वत्ता मेरी मौख्यी आयदाद है
भी नहीं । ले डेकर 'कल्ला चलो दे' की बमाषी क सहारे बस डग-डो-डग चलने
की हिमाकन भर की है मैंने । बाकई चारण भाट हाता तो कोई-न-कोई कुर्सी
खरूर मेर भी हाय लग जाती । या ता सही और गलत का पसला समाज
करता है मगर तेरी और तत्पों (बात की) ब्यक्ति को ही अँजनी पडती है ।

निराला की प्रशस्ति मैंने वस ही लिखी है जैसे पत्र ने, भारतीय थामा ने डा० शिवमङ्गल सिंह सुमन न या स्वयं डा० शर्मा ने। यो मैं अपनी लिखी हुई को प्रशस्ति नहीं,

वाग्ज-मयफल्यमसह्यशल्प
गुणाद्भू ते वस्तुनि मौनिता घेत ।

—श्रीहृप

मानता हू। यदि हिन्दी में तुलसीदास या निराला के लिए बैसे शब्द प्रयुक्त न हो तो फिर किसके लिए हो ?

गुणरेतावद्भिर्जगति पुनरप्यो जयति क्व ?

—मुरारि

जाने क्यों, डा० शर्मा ने अपने विशाल ग्रन्थ में छोटी छोटी बातों को आवश्यकता से अधिक महत्त्व दिया है। ऐसी वसी घटनाओं के सघटन विघटन से किसी महान साहित्यस्रष्टा के दिग्देशकालजयी सजन को माप सकना संभव है क्या ? वह तो युग बदियों, राष्ट्र-कवियों का अपना दायरा है जिसमें बला से कहीं अधिक बाल का महत्त्व होता है।

अब निराला तो रहे नहीं, मैं किससे कहलाऊँ कि सन १६ में 'जुही की कली' के लिखे जाने की बात उन्होंने बताई थी, कि अकेले मैं ही नहीं मेरी तरह कितने ही दूसरे भी निग्घ्रान्त (१) हुए हैं।

असीम की सीमाओं का निर्माण हम अहर्निश अनिद्र बुद्धि से करत रहते हैं, किन्तु

इस अनिल बाह के पार प्रखर
किरणों का यह ज्योतिमय घर !

सन्दिग्ध देश एवं विषयस्त काल के कवि कालिदास भारत के कवि कुल गुरु कहे जाते हैं।

रमेश (अब जबलपुर के डा० रमेशचन्द्र मिश्र) ने उस दिन लाज में निराला को नहा घुला कर उजले धूले कपड़े पहना दिए थे। तब वह उनके गदनाद चीकट कपड़ों में साबुन लगा रहा था जब मैं विश्वनाथ मन्दिर से लौटा था। आज लहराते हुए मुनिमिठ केश और खूब साफ-सुथरे कपड़ों में निराला खूब ही सज रहे थे। मुझे विलम्ब से आया देख पूछा—'कहाँ गए थे ? मैं मन्दिर का नाम लिखा तो बोल आज क्या था वहाँ ? मैंने प्रकाश के स्पर्श से काँपते से अंधर में अपने रिक्तपाणि दाय को छिपाते हुए निशान-दता पर अटकती लटकती

भूमिका

साँस को शान्त गम्भीरता से छोच कर कहा
'आज मेरा जन्मदिन है।'

निराला ने विपुल-पुलक प्लावित स्वर में अग जग का समस्त उल्लास घोल कर पूछा

'कौन सी तिथि है आज ?'

मैंने माघ, शुक्ल द्वितीया का हवाला देते हुए चरण-स्पर्श के लिए हाथ रप काया ही था कि उन्होंने मिशु सुलभ सरलता से हवा में हाथ उछाल कर कहा

'अरे-अरे ! तुम तो मुझसे तीन दिन बड़े निकले !'

फिर क्षितिज के तट पर आनन्द मिशु उड़ते हुए ईसवी सन् पूछा तो मैंने 'पाँच जनवरी' उन्नीस सौ सोलह बता दिया। फिर क्या था ? उमग उमड कर बोले उमी साल तो मैंने 'जुही की कली' लिखी थी। इस पर मुझे ऋग्वेद की एक ऋचा याद आ गई थी

केतु कृष्वनवेतवे

पेशो मर्या अपेशते

समुपदिङ्करजाप्यम् ।

क्या मतलब ? — निराला की दिलचस्पी का नया कहना । मैंने बताया

"इसमें मानव की महिमा वर्णित है कि वह प्रकाशहीनो में प्रकाश फलता और रूपहीनो को रूप प्रदान करता हुआ उपा के साथ जन्मा है।

"और बबूल के काँटों से बिघा हुआ मैं आपकी 'जुही की कली' के साथ पदा हुआ हूँ।"

इसके अतिरिक्त कोई बारह बय पूव 'निराला की कविता' नामक एक लेख में भी, जो 'अवन्तिता' के दो अङ्कों में प्रकाशित हुआ था, मैंने यही बात लिखी थी। उम लेख के बितने ही अक्ष भिन्न भिन्न लेखकों द्वारा उद्धृत हुए हैं, किन्तु किमी ने इस सबाई को चुनौती नहीं दी थी। तब स्वयं निराला और उनके शत शत प्रशंसक भी थे, किसी ने भी मेरी इस गज्जती की ओर इशारा नहीं किया था।

प्राय सन् '३५ में प्रकाशित हमारे साहित्य निर्माता नामक अपन अत्यन्त लोकप्रिय ग्रन्थ में छायावाद के सभसे सहृदय समीक्षक श्री शान्तिप्रिय जी द्विवेदी न निराला का जन्म स १९५५ और रचना काल का प्रारम्भ स० १९७२ में बताया है। साथ ही 'जुही की कली' और अधिवाग को प्रारम्भिक रचनाओं में

सर्वोत्तम कहा है। फिर यह कौन-सा समय हुआ ? सन् '१६ और स० '७० में क्या फरक है ?

डा० भगीरथ मिश्र ने अपनी गिरालावाली पुस्तक में भी यही बात सुद्धाई है। अस्तु मरी 'तथा नामक समीक्षा पुस्तिका में जब यह सत्य संज्ञित हुआ तो मैंने स्वयं चलकर अपना हाथ गिराला को वह पुस्तक अर्पित की थी। तब का पहला संस्करण सन् '५६ में हुआ था और निराला का महानिर्वाण सन् '६१ में। जो उनके जीवन-काल में सही था, वह उतर गुजरने ही लग्न करते हो गया ? यथायथ यह कौसी तेज बारिश हुई जिसकी ओला-जसी बूँदें मूत्र की हृष्टिप्राप्ति लिंग गई।

आप्त वचन की प्रामाणिकता में सशय की स्थिति उत्पन्न होने पर कारण के गुणों से उसका परिहार कर स्वतः सिद्ध प्रामाणिकता की व्यवस्था शास्त्रों ने दी है। या तो केवल आकार ग्रहण करने के लिए ही घड़े को मिट्टी, घात या धाक को घुमान घाटे ढंढे आदि कारण की आवश्यकता होती है घड़ का उन्नाहरण भर देना हो तो कारण की कोई आवश्यकता नहीं होती।

यह सच है कि काव्य-कला के उत्तर प्रपन्न का अध्ययन-आस्वादन करने के अवसर पर उसके रचना-काल को मैं बहुत अधिगम महत्त्व नहीं देता। कला की साधिका के बहुतेरे दावेदार पारिभाषिक शब्दावली पर जीने हैं अपनी ओर से कला को बला बताने हैं पर धिसे पिटे उन्नाहरणों की लीक से हट कर नव गति नव लय ताल छल नव' को शक्ति-परीक्षण का क्षेत्र बनाते नहीं देग जाते। इस मामले में मैं व्यासदेव की उक्ति—'राजा कालस्य कारणम्—का समर्थक हूँ। निराला ने जब जुही की कली खिलाई तब हिन्दी काव्य के उपवन में एक ऋतु आई, जब बुकुरमुत्ता उगा सब ऋतु अपने आप बदल गई।

यह सच है कि संस्कृत के पाँच सत हजार वर्षों के साहित्य से नई हिन्दी के पचास वर्षों का साहित्य अति सामीप्य के कारण अधिगम व्यामोह उत्पन्न करने वाला है। अभी गिरोहो द्वारा योजना बना कर पश्चिमी शैली का वैज्ञानिक इतिहास लिखा लिखाया जा रहा है। जो कवि है ही नहीं उसे हिन्दी का सब श्रेष्ठ कवि सिद्ध करने के लिए हर साल डेढ़ दजन वैज्ञानिक वितावें निकल रही हैं।

इधर महाभानव, महाकवि निराला के लिए महापण्डित राहुल साहूदायन का यह एक ही निर्घोष आठ पेपर पर छपे हुए मुनहली जिल्ला वाले डेर सारे अधरे को उडा देने के लिए काफी है

“निराला साहित्यगङ्गा के भगीरथ हैं। आधुनिक युग में जब हिन्दी-साहित्य-गङ्गा का माग अवरुद्ध हो गया था, उस वक्त पवत गात छेद कर उन्होंने द्वार खोला और पाञ्चजन्य बजाते आगे आगे बढ़े, और अब तो—

दिङ्नागदन्तमुसलविषमेऽपनीते

सुख क्लमा प्रयाति ।

“निराला ने द्वार ही नहीं खोला बल्कि अपन अनमोल सृजन द्वारा हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया। कोई समय था, जब कि ईर्ष्याविष कितने ही साहित्य-कार निराला के महत्त्व को स्वीकार नहीं करते थे, लेकिन यह बीते युग की बात है। आज निराला को न माननेवाला नास्तिक समझा जाएगा।

‘आनेवाली पीढ़ियाँ इस महान कलाकार की प्रतिभा के बारे में कितनी ही कल्पनाएँ करेंगी किन्तु वह उसके सरल, निष्पट, उदार जीवन की झाँकी नहीं पा सकेंगी ?

“निराला जैसी विभूति दुर्लभ है। उनकी साहित्य प्रतिभा की भाँति उनकी महामानवता भी साधारण मानदण्ड के माप से बाहर की चीज है।”

संक्षेप में, जैसे कालिदास विभ्रमादित्य के समकालीन हैं या द्वितीय चन्द्रगुप्त के —

निद्रावशेन भवताऽप्यनवेक्षमाणा

पर्युत्सुकत्वमबला निशि घण्डितेव

लक्ष्मीविनोदयति येन दिगतल्पञ्चो

सोऽपि त्वदाननर्घञ्च विजहानि चन्द्र ।

की अपसम्पदा और ललित कला का बोध कालाश्रयी नहीं है, क्योंकि उस अनिर्णीत काल में भी सी कालिदास नहीं हुए थे।

ऐसी भूलें (1) डा० शमा म भी कम नहीं हुई हैं। कुमारसम्भव के सग निष्णय में उन्होंने निराला को ही नहीं टैगोर को भी प्रामाणिक नहीं माना है। अपने ‘चतुर्भिः’—नामक काव्य संग्रह में टैगोर ने कालिदास के ऋतुसंहार में घ दूत, कुमारसम्भव आदि पर सुप्रसिद्ध कविताएँ लिखी हैं। कुमारसम्भव गान का अन्त —

सहसा घामिने तुमि असमाप्तगाने

बह कर किया है। कालिदास न मधदूत को भी असमाप्त स्थिति में ही समाप्त किया है। किसी कवि ने या किन्हीं कवियों ने इन दोनों महान कला-कृतियों को पूरा करने का साहस किया है। कालिदास के अधूरेपन को कोई भेष महिष स्वामी क्या छाकर पूरा करता। हाँ उस सतही प्रतिभावाले ने कुछ मपाट-

खल्वाट लिख कर अपनी असहृदयता को अवश्य उध्वबाहु उदघोषित कर दिया है।

ऐसे ही जिन छोटे और छोटे कामों की अतियथायता में निराला का बड़प्पन बलकाया गया है वस्तुतः वह विपन्न और अति श्रांत मन का आशिक चित्र मात्र है। वह मर्त्य विश्वामित्र द्वारा कुत्ते का, जूठा मास खाने जसा है। लाख सचाई की दुहाई दी जाय उमम निराला की समग्रता कही अनुबिम्बित नहीं है।

सत्ताईस वर्षों के अनिश्चय सांनिध्य ने मेरे अंत पट पर निराला की कोई और ही आकृति आनी है। उसका विश्लेषण यहाँ अनपेक्षित है।

सक्षेप में मेरे लेख से बिदके हुए निराला कुछ ही दिनों में प्रकृतिस्थ हो गए थे। उस क्रम में मुझे कुछ बड़ब पत्र भी लिखने पड़े थे।

मैं जिन दिनों रायगढ़ में राजकवि या पण्डित रूपनारायणजी पाण्डेय के पत्र आते ही रहते थे, माधुरी में घडाघड मरी रचनाएँ छपने लगी थी, 'सरस्वती' ने भी प्रथम पन्थ पर मेरे कुछ गीत छापे थे, उन दिनों निराला ने अपने पत्रों में मुझसे तरह-तरह के साहित्यिक प्रश्न पूछे थे। मित्रों ने कुछ अच्छे पत्रों पर ही हाथ माफ किया है फिर भी अभी इस सञ्चलन में दो चार स्मृति चिह्न रह गए हैं। ए सहो मौन मत रहा — बबिता लिखते समय निराला ने सोल्ह शृङ्गार कौन कौन स हैं गममाण जानना चाहा था। मैंने सोल्ह शृङ्गारों के नाम उज्वलनीलमणि के इस श्लोक—

स्नाता नासापजाप्रम भेरसितपटा सूत्रिणी यद्वेणि

सोत्तसा घञ्चिताङ्गी कुमुमितचिबुरा श्रग्विणी पचहस्ता

ताम्बूलस्योरविस्तृप्तपरितचिबुका बज्जलाक्षी सुचिन्ता

राधा-लक्ष्मी-बलादिभि स्फुरति तिलजिनी पोडशाकल्पनीयम् ।

यं गाय तत्काल लिख भज य । इसी प्रकार जब उह मस्कन-नाटकों पर वार्ता प्रसारित करनी थी मैंने उनसे मागन पर अश्वपोष शिन्नाग आदि के अपना कृत अल्प प्रचलित नाटकों की एक नातिविस्तृत तात्का लोत्ती टाक स भेज दी थी। एक बार बुद्ध और शङ्कराचार्य के दशना में कटी-कहीं गमना है इस पर एक मीमांसा लिखनी मांगी थी।

यन्तुं उनका अभिप्राय मुझे जानना की भावना से पीड़ित न होने दना ही था। शूद्र क्या नहीं जानते य । मुगल काश्मिर और रबीन्द्रनाथ के मिलन कृत एक भागों का पत्र पृष्ठ और रबीन्द्रनाथ को धेप्टार मिद कर अट्टहाम दिया कटा य ।

मेरे प्राण तो प्रभात के उदय-भालोक में जागना चाहते थे असीम मिथु की ओर झरने का उन्चल जल उन्मुक्त बलकल ध्वनि करता हुआ बह चला था। यदि मेरे आरम्भिक अज्ञान तिमिराध लेखों का प्रभाव ही स्थायी हो तो मेरे इ सुदृढ़ अकिञ्चन लोक जीवन को जो सशय विपश्य के गहरे कुहामे में मुह छिपा कर आत्यिक रङ्कता में डूब गया था, निराला ने अपनी व्यथा वेदना के अन्तर्दोष चेतन प्रकाश से कदापि उन्तनी न किया होता। अन्तर की आकाङ्क्षाओं और स्वप्ना के मधुगन्धी आकाश का आभाम भी मुझे न मिलता यदि आदिगन्त फले हुए निमग अधकार को छिन विच्छिन कर कपूरी ली उठानेवाली निराला की कल्प प्रशान्त दृष्टि का रत्नदीप मेरे सतत साधना के पथ पर न जलता रहना।

मैं मुजफ्फरपुर में जितने दिन बीमार रहा, निराला लगातार पत्र पर पत्र भेजते रहे। उन पत्रों में कोरा आश्वासन ही आश्वासन होता तो नाशिक नाको को औपचारिकता की शय ही लगती, किन्तु मेरे अशक्त मीन पर जो उनकी व्यग्रता प्रकट होती थी वह जैसे व्यथा-तप्त रण मन की अपरिमित वत्रान्ति मेट कर तृपातुर कण्ठ में शान्ति की सुधा उडेलनेवाली थी। लगता जैसे विषय के सर्वोच्च पद से सभी द्वन्द्व और निरोध विरोधों को अपदस्थ करता हुआ एक अरण आह्वान मेरे मुमुर्षु प्राणों को अपनी दुनिवार प्रकाशधार में खींच रहा है जहाँ पाथिव क्लेद पङ्क धुलता और जीवन में मृत्यु की ग्लानि मिटती है।

डेढ़ साल के जीवन मरण सघष के बाद मैं जब नीरोग हुआ, तब निराला का एक नया ही स्थितप्रज्ञ रूप अन्तर्दृष्टि में उभर कर चिर स्थायी हो गया

This man is freed from servile bands
Of hope to rise, or fear to fall,
Lord of himself though not of lands
And having nothing yet hath all

शताब्दियों बाद कभी कोई निराला के नतोनत किन्तु अनुल्लङ्घ्य धरातल का महाकवि हो भी जाय, पर युग के निम्नाभिमुख बदलते हुए परिप्रेक्ष्य को मद्दे नजर रख कर अभी यह कहना अति कठिन है कि वह भावी महाकवि महामानव भी होगा।

मेरा अन्तर यन्त्र-कठोर सहज सवेदनशील निराला ही लिख सकते थे, और किसका कलेजा पत्थर का हो गया था जो एक साथ जब शत घान घूण आते थे मुझ पर तुले तूण मैं प्यडा देखता रहा अपल, वह शरदोप वह रणक्रीशल को एमी तटस्थता से ऐतिहासिक शिलालेख बना जाता ? और कौन एक साथ पेट

और प्रतिष्ठा की दुहरी मारें यो झेल जाता जैसे तुलसीदास का चातक तडातड बरसते ओले तोल रहा हो अपनी अतुल अनय निष्ठा से ? चौकोर तिकडम से कमाई कीर्ति को कलेजे से लगा कर रखने वाले इतिहास के सतत प्रवाह की राह में पड़े हुए इस पवत को लांघने की बोशिश में बह जायगे, अपने ही भूगोल में गोल हो जायग जाल डाल कर भी मछुए उनके अष्टावक्र अस्थिपञ्जर का अता पता न पा सकेंग। निराला का अन्न, रस प्राण छीनकर मुह जुठारनेवाले अब उसकी वाणी छीनने के लिए हाथ लपका रहे हैं, ऐसे हूठा दे कर सरकसी मृत्यु-रूप में इन । इठला कर गाड़ी दौड़ाने वाले कब गाड़ी में हेल मारने के लिए हाथ हाथ मचाएग कहना कठिन नहीं है ।

संस्कृत के एक कवि ने इस जटिल समस्या का ऋजू समाधान ढूँढ लिया था

लोको मदयुगजमा कृतकृतकर्मा न भद्रमां

इति हेतोरिव बलिना बलिना सम्पीडयते साधु ।

कलियुग कहता है कि जन्म मरे युग में और काम करने लग सत्य युग का, अब ऐसे अकृतज्ञ साधु जनो को अगर मैं तोड़ मरोड़ कर कूड़े में न डाल दू तो बेचारे मेरे बफादार हमराही सुख चन की चौड़ी सड़क पर अडक कर कैसे चलेंगे ?

तभी तो यहा फना फी अल्लाह बहा, पौ-बारह है । दोनो युगो की पगडी अटकी है । यो 'सत' जोर मारता रहता है मगर हर बार तम उसे झडी दिखा देता है । बहरहाल—

माना कि हर बहार में पर दूदते रहे

फिर भी तवाफे सहने गुलिस्तां किए गए ।

(३)

एक न एक दिन निराला के ये पत्र अध अन्तममि से निकल कर प्रकाश के आकाश में छवि मधु सुरभि भरेंगे, यह मैं जानता था । अवश्य इनके असा धारणीकरण पर ध्यान जाता तो मुझे अन्तगूढ मूर्त्ता आसती भी थी वसु का तगडापन ही काफी नहीं होता, बोद्धव्य की विशेषता पहले परखी जाती है । किसी भी भाषा में अनूठे भाव सब को नहीं चौंकाते । भाषा कोई होय—' बस, कहने सुनने की बात है ।

जो जमीन अभी अभी जुती है उसकी सोधी गंध स अटाऊ बटाऊ की नाक भर सकती है किसान की नजर अडकुर खोजती है । मेरे बजर में पिछली पञ्चवर्षीय योजनाएँ कौन से अय-तत्त्व उगा सकी हैं, धकी-थकी हैरान निगाह गद बचाते मुद जानी हैं ।

मरे एक इश्तहारी कवि मित्र ने विविक्त ही तक दिया कि किमी स्वयम्भू प्रतिभा का निराला ऐसे एक विवादास्पद व्यक्तित्व को बीच में ला खड़ा करने की आवश्यकता क्यों हो ?

मैं प्रयत्न अनियोजित ढंग अपना कर खण्डन-मण्डन पर उतर आया 'पड़ले तो अपनी ही सीमाओं के सम्यग बोध के लिए उस अद्वैत-असीम तक दृष्टि फैलानी पड़नी है फिर प्रत्यया और निषेधों के सुदृढ आधार के लिए विवेक न विवादास्पदता का टहन मिटाने वाला निराला सा अप्रतिहत अग्रगामी मोढ़ा और बहो वितागा ?

'प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में किसी-न किसी साहित्यिक विद्वान से प्रेरित प्रभावित हो कर ही हम अपने या दूसरे के काव्य-व्यक्तित्व की जाच पड़ताल या मूल्याङ्कन करते हैं। अकेले निराला की काव्य माधना ऐसी है जिस पर किसी भी एक सिद्धांत का धिमा पिटा निष्कष निछावर हो सकता है। मैंने कुछ मतो के विसर्जन और कुछ के नवनिर्माण के लिए ही निराला की मध्यवर्तित स्वेच्छया स्वीकृति की है।'

मेरी यह आत्मघाती स्वीकृति उन्हें यथा-तथा ग्राह्य ही भी जाती यदि सबके अन्त में मैंने अपना यह क्षेपक न जोड़ दिया होता कि उनके छायाद्वेषी नग्न विभा विलास में मैं निराला को जीवित डोलती हुई परछाइयाँ प्रबुद्ध हिन्दी-सभार को कभी भी दिखला सकता हूँ।

पहली बात यह है कि मैं पत्र एक ऐसे व्यक्ति को लिखे गए हूँ जिसका कर्तृत्व अभी अनदेखा और व्यक्तित्व अनजाना है। निराला ने उसे लिखा, यही उस अज्ञात कुल शील की सबसे बड़ी उपलब्धि है।

दूसरी बात यह है कि ये पत्र कोई लेख या किताब छपाने के लिए प्रश्न पूछ पूछ कर औपचारिक उत्तर के रूप में लिखवाए हुए नहीं हैं। आत्यंतिक सहजता ही इनकी मौलिक विशेषता है। इनमें अभिव्यक्त राग विराग हृष-विषाद, कठोरता विह्वलता—सब निराला की भिन्न भिन्न मन स्थितियों के निर्विकार विकार, निश्चल चाञ्चल्य, असाधारण साधारणता एवं अश्लिष्ट श्रद्धा के प्रतिमान हैं। जिन्हें निराला-माहिय रहन गिरि वातावरण सा दुग्ध प्रतीत होता हो और निराला का व्यक्तित्व विरोधा और असंगतियों का स्तूप, वे भी इन पत्रों में उनके बहिरन्तर में प्रवेश पा कर अनिरुद्ध कृताघता का अनुभव करेंगे। निराला से उद्भूत होने के कारण ही ये बोल अनमोल बन पड़े हैं।

अब जब निराला के जीवन और उपलब्धियाँ पर ढेर सारे प्रश्न निकल रहे हैं इन पत्रों की उपयोगिता और भी स्पष्ट है। इनके द्वारा उनका जीवन और

जीर प्रतिष्ठा की दुहरी मारें यो झेल जाता जस तुलसीदास का चातक तडागड वरसते ओले तोल रहा हो अपनी अतुल अनन्य निष्ठा से ? चौकोर तिकडम से कमाई कीर्ति को बलजे से लगा कर रखने वाले इतिहास के सतत प्रवाह की राह में पड़े हुए इस पवत को लांघने की कोशिश में वह जायग अपने ही भूगोल में गोल हो जायग जाल डाल कर भी मछुए उनके अप्टावक अस्थिपञ्जर का अता-पता न पा सकेंगे । निराला का अन्न, रस, प्राण छीनकर मुह जुठारनेवाले अब उसकी वाणी छीनने के लिए हाथ लपका रहे हैं, ऐसे हूठा दे कर सरकसी मृत्यु-रूप में इन । इठला कर गाड़ी दौड़ाने वाले बब गाड़ी में हेला मारने के लिए हाथ हाथ मचाएंगे कहना कठिन नहीं है ।

संस्कृत के एक कवि ने इस जटिल समस्या का ऋजु समाधान ढूँढ लिया था

लोको मदयुगजमा कृतकृतकर्मा न मदर्मा

इति हेतोरिव कलिना बलिना सम्पोडयते साधु ।

कलियुग कहता है कि जन्मे मेरे युग में और काम करने लगे सत्य युग का, अब ऐसे अकृत्रज्ञ साधु जनो को अगर मैं तोड़ मरोड़ कर कूड़े में न डाल दू तो बेचारे मेरे बफादार, हमराही सुख चन की चौड़ी सडक पर अकड कर कसे चलेंगे ?

तभी ता यहाँ फना फी अल्लाह वहा, पो-वारह है । दाना युग की पगडी अटकी है । यों सत जोर मारता रहना है मगर हर बार तम उसे झडी दिखा देता है । बहरहाल—

माना कि हर बहार में पर टूटते रहे

फिर भी तवाफे सहने गुलिस्ता किए गए ।

(३)

एक न एक दिन निराला के ये पत्र अथ अन्तर्ग्रामि से निकल कर प्रकाश के आकाश में छवि मधु सुरभि भरेंगे यह मैं जानता था । अवश्य इनके असा धारणीकरण पर ध्यान जाता तो मुझे अन्तर्गूढ मूत्ता आसती भी थी वत्ता का तगडापन ही काफी नहीं होता बोद्धव्य की विशेषता पहले परखी जाती है । किमी भी भाषा में अजूठे भाव सब को नहीं चौंकाते । भाषा कोई होय—' बस, कहने सुनने की बात है ।

जो जमीन अभी अभी जुती है, उसकी सोधी गंध से अटाऊ बटाऊ की नाक भर सकती है किसान की नजर अडकुर खोजती है । मेरे बजर में पिछली पञ्चवर्षीय योजनाएँ कौन-से अय-तत्त्व उगा सकी हैं भकी-भकी हैरान निगाहें गन बचाते मून् जाती हैं ।

मेरे एक इश्वरारो कवि-मित्र ने विचित्र ही तक दिया कि किसी स्वयम्भू प्रतिभा को निराला ऐसे एक विवादास्पद व्यक्तित्व को बीच में ला छड़ा करन की आवश्यकता क्या हो ?

मैं अत्यन्त अनियोजित ढंग अपना कर खण्डन-भण्डन पर उतर आया पले तो अरती ही मीमांसा के सम्बन्ध बोध के लिए उस अद्वैत-अधोम तक दृष्टि फँकानी पड़ती है फिर प्रत्ययो और निषेधों के सुदृढ आधार के लिए विवेक से विवाद प्रमाद को काटने मिटाने वाला निराला-सा अप्रतिहत अप्रगामी योद्धा और कहा बिलगा ?

"प्रत्यय अथवा अप्रत्यय रूप में किसी-न किसी साहित्यिक विद्वान से प्रेरित प्रभावित हो कर ही हम अपने या दूसरे के काव्य-व्यक्तित्व की जांच पड़ताल या मूल्यांकन करते हैं। अकल निराला की काव्य माधना ऐसी है जिस पर किसी भी एक विद्वान्त का घिसा पिटा निष्पन्न निष्ठावर हो सकता है। मैंने कुछ मर्तों के विमर्शन और कुछ के नवनिर्माण के लिए ही निराला की मध्यवर्तिता स्वेच्छया स्वीकृत की है।"

मेरी यह आत्मघाती स्वीकृति उह यथा-तथा ग्राह्य हो भी जाती यदि सबके अन्त में मैंने अपना यह क्षेपक न जोड़ दिया ज्ञान कि उनके छायाद्वेषी नमन विभा बिलग्न में मैं निराला की जीवित डोलती हुई परछाईयाँ प्रबुद्ध हिन्दी-सगर का कभी भी दिखला सकता हूँ।

पहली बात यह है कि य पत्र एक ऐसे व्यक्ति को लिखे गए हैं जिसका कतल्व अभी अनदेखा और व्यक्तित्व अनजाना है। निराला ने उसे लिखा यही उस अज्ञान कुल शील की सबसे बड़ी उपलब्धि है।

दूसरी बात यह है कि य पत्र कोई लेख या विज्ञाप छपाने के लिए प्रश्न पूछ वृष्ट कर औपचारिक उत्तर के रूप में लिखवाए हुए नहीं हैं। आत्यन्तिक सहजता ही इनकी मौलिक विशेषता है। इनमें अभिव्यक्त राग विराग हृष विषाद, कठोरता विह्वलता—सब निराला की भिन्न भिन्न मन स्थितियों के निर्विकार विकार निरवल चाञ्चल्य असाधारण साधारणता एवं अस्तिष्ठ श्रुता के प्रतिमान हैं। जिन्हे निराला-साहित्य गहन गिरि-वान्तार या दुग्म प्रतीत होता हो और निराला का व्यक्तित्व विराघो और असगतियों का स्तूप, व भी इन पत्रों में उनके बहिरन्तर में प्रवेश पा कर अनिरुद्ध कृतापता का अनुभव करेंगे। निराला से उद्भूत होने के कारण ही ये बोल अनमोल अन पद हैं।

अब अब निराला के जीवन और उपलब्धियाँ पर डेर सारे घण्टे निकल रहे हैं इन पत्रों की उपयोगिता और भी स्पष्ट है। इनके द्वारा उनका जीवन और

साहित्य के किनारे ही नए पहलुओं का प्रयत्न प्रत्यय होगा, कितने ही अन्तर्मुख प्रश्नों का ऊर्ध्वमुख ज्योति प्ररोही साक्षात्कार।

किसी साधना की कल्पलता के फूल फलों के साथ उसके पत्तों की प्राथमिकता पर दृष्टिपात करना द्वितीय वास्तविकता पर पहुँचने के समान ही है।

आज जब छायावादी सत्कारा को निमूल करने के लिए सघन प्रयास चल रहा है छायात्मक सशयो को रेखाङ्कित कर उन पर निस्त्ववाद विवाद का घघा चालू है, इन पत्रों में जहाँ-तहाँ निर्दिष्ट कुछ परस्पर विरोधी से प्रतिभासित होने वाले वक्तव्यों पर यहाँ टीका टिप्पणी करना व्यर्थ प्रतीत हुआ। अभी उसके उपयुक्त स्थल और अवसर अनेक हो सकते हैं।

डा० नगेन्द्र के रस-बोध को चुनौती देना रस को चुनौती देना नहीं है। शङ्कराचार्य के अद्वैत ज्ञान का (माहिष्मती पुरी के मीमांसक मण्डन मिश्र की पत्नी भारती के) काम विज्ञान की ललकार ने निम्तेज कर दिया था। किसी के विशिष्ट ज्ञान को अमर्यादित कर अपनी अविशिष्टता स्थापित करने की पद्धति नई नहीं है। इससे तात्कालिक चर्चा में सरगरी आती है, जो मूर्ति भजकों के सलीके बड़े काम के सिद्ध होते हैं। अगली पीढ़ी उन्हीं के अस्त्रों से उनका छिन्नमस्ता प्रतिष्ठा को पुनः स्थापित करती है।

यद्यपि मैंने निराला की त्रिविध ज्वालाओं की बहुविध चिनगारियों को समान मूल्यवान माना है, किन्तु यदि मूल्याङ्कन के प्रतिमान किसी एक ही स्तरीय ज्वाला से उद्भासित होने हों तो मैं अपने अधनचरे अध्यात्म की छाक निराला के प्रतिमित्र आगे के पर न उड़ाऊँगा। मेरा विरोध वहाँ है जहाँ विमय को मृण्मय मान कर ज्ञान-रव-दुर्विदग्ध आलोचना लम्बी छलांग लगाती या मृण्मय को विमय स्वीकार कर सतय की पिल्लियाँ उड़ाती है। निराला जो हैं वह आलाप्य काम और विवक्ष्य अधिव हैं। आलोचना के घनाटोप से ढके हुए निराला को ये पत्र मुलन-खोले में घोड़ी बन्द मार करें तो फिर और क्या चाहिए।

ज्ञान क्या निराला को अपनी अधिक से अधिक छोटा रचनाओं का बड़ा प्ररोध था। प्रत्येक पत्र के साथ वह एक-एक छोटी-छोटी जरूर भेजा करता था। आलोचकों का एक दम त्रिहो नगण्य मानता है मैं अत्यन्त बड़ी उनका कथ्य और गिन्य की विस्तृत व्याख्या करना चाहूँगा।

मनु न मन्त्री (चाह वह मीधे मन्त्री से उड़ कर आई हो) को अपवित्र

नहीं माना है। मैं पवित्रता अपवित्रता की बात नहीं कर रहा, सफाई देने के सिलसिले में—

ईरण तन की ज्योति तपन की
गगन-घटा काली-काली।—

कवि क इसे हुए मम की विरक्त धूमिलना का प्रकाशित करने का प्रयास भर करेगा। तन के बजर म और मन की चमक को निराश्र के छोटे गीत वस्तुतः वेहद सफरता के साथ व्यक्त करते हैं। कहना न होगा, जीवन और मरण का रहस्य निराला ने किताबों के माध्यम से नहीं जाना था, वह जिन स्थितियों में गुजर थे, जैसे वतमान का सामना किया था जिस भविष्य के मपने बुने थे, जैसे अतीत को अपने गौरव से तुङ्ग हिमालय शङ्ग बनाया था उन सबों की सम्यक अनुभूति की किरणें उनके गीतों के वाष्पाच्छादित स्तरों में से झाँकती हैं।

निराला दूसरे कवियों से अनेक अर्थों में भिन्न थे। मयू की तलहटियों में प्रमथ करने में उन्हें कभी हिचकिचाहट नहीं हुई, किन्तु जीवन की अजेयता का विश्वास उन्होंने कभी नहीं खोया। विशङ्खलता की छिन भिन्न करने के लिए उन्होंने निस्सन्देह कोई शङ्खला नहीं गढ़ी, कालुष्य को जलाने के प्रयत्न में बार-बार उनका होम करते हाथ जला, किन्तु प्राणों का प्रदाह प्रवास प्रवाह के लिए अथ उर के तट-वध काटता ही रहा। घसकती हुई कगार से हट जाने के लिए उन्होंने फिर फिर भानवता को आवाज दी, तटस्थ हृदयों को सावधान किया। अवश्य वह उन्हें न प्रभावित कर सके, निष्ठुरता जिनकी सामर्थ्य का गरुडध्वज है, विश्वासघात विकास का कला विलास और प्रतिहिमा ननिक उछाल। महाकवि अकबर की चेतावनी—

नेटिव की क्या सनद है, साहब कहें तो मानूँ।

मुझे याद है। भुमीवत है तो यही कि कोई नेटिव की माने न मान साहब अपनी साहबी की सलामती की खातिर नैतिक आदश को मौत के घाट उतारते नहीं शिक्षकते।

निराला के असकुचित विचारों, उज्ज्वल और निस्वार्थ कायकलाओं के आदिगन्त प्रसार से ही ऐसी सारी विवृतियों की इतिथी समावित है। घातक प्रेरणाओं के शमन से उदात्त भावों का सजन होता है। कुछ चहल-पहल बनाए

रखन के लिए निराला की चौकाने वाली चर्चा यह नहीं है। निराला से दीपकालीन निकट और घनिष्ठ सम्पर्क ने मुझे आतङ्क पर टिकी विडम्बनाओं से सचेत रहने की प्रेरणा नहीं दी है। मैं जिसे तप से न पा सका उसे तपक-तमक से पाने का कभी विश्वास ही न था। हाथ बड़ा कर मीना को ले लेने वालों की मीयाणी शक्तिमत्ता ने मुझे कभी आतङ्कित नहीं किया। कविता की मीनार पर खड़ी एक दूसरी मीनार से निराला की कोमल-कठोर भाषा कैसे गङ्गा स्नान और गङ्गा जल-पान कर घुलते घुलते धराशायी हो गई, मैंने अपनी आँखों देखा, ये पत्र न देखनवालों को भी दिखलाएंगे। अपने-अपने बचाव के लिए हमला करनेवालों को अपनी ही दीवारों की दरारा से निशाना साधने की सीख भी इनमें है। पार पाने की बेकली धार की लहरो या भवरो का कसे धीर समीर की तरह तरण करती है, कसे शुष्क ज्ञान से विरक्ति भक्ति रस के अंत में परिदत्तित हो जाती है कुछ फट चित्रों जैसे इन पत्रों में यह सब भी देखा जा सकता है। किसकी वेदना दिपी कौन सी छवि छिपी, किस नपे-तुले धरातल पर घूतपाप अमाप अतिरिक्त उतर आया, किसने ऊपर से मूख भीतर से तरों ताजा महानुभाव धाव को रक्ताक्त बोल दिए रुधे कण्ठ को नीलकण्ठ की निष्पुण्डना दी—इन पत्रों में मुदा-मुदा ऐसा क्या कुछ नहीं खुलता। किस भटठी में फौलाद गन्ना, किस शिद्वत की शरबती सर्दों में जीवन धारा जम गई अजेय ज्योति का ताजा मिमाल मी उजला कर कसे आत्मप्रतीति की मशाल स्नेह के अभाव में निधूम जलता-जलती जल गई कुछ सकेत उपलब्ध होते हैं इनसे।

राम ने सामने उल्लोल-वल्लोल भरे समुद्र को देखकर कहा था कि अब कोई किन शब्दों में इसकी प्रशंसा करे। पाताल व कहर में धर ससार बसान वाले शेष भी इसकी अपेक्षा—भ्रगाधता का अतापता पाने में असमर्थ रहे, स्वयं दिखाएँ ही इसकी सीमांत रेखाएँ बन गई और द्वीप हो गए बालू के बड़े बड़े टीले। अब इसकी यह अपरिमय व्यापकता किन शब्दों में अटे।

‘किन्तु किन्तु मेरे जिन पूर्वजों ने इन्हे नाखूनो से खना था या जिन्होंने यह खाई भरी थी उनकी कल्पान्त तक बनी रहनेवाली महिमा को कौन बसाने।’

मैं समझता हूँ ये पत्र चरन-वन में कस्तूरी की गंध फलानेवाली हवा की धारों में ही नहीं तरत इनकी सुगंध सबत्र आनन्द मय ही नहीं है, आकाश

गङ्गा की हिमफुहारों से इनका अन्तर निरन्तर शिशिर शीतल ही नहीं रहा है, य आग भी उगलते हैं, ऊँच चढ़ कर कुछ कहते भी हैं, बातों का ठीक ठीक जवाब न देन पर चिढ़कर सरी-घोटी भी सुनते हैं ।

जिन्होंने इहे लिखा, उनके सातो रंगों में एक यह भी सही । उनका प्रत्यक्ष इस रङ्ग के माध्यम से भी हो सकता है । यद्यपि शाब्द प्रमाण से कोई अनुभव नहीं दबाया जा सकता, किन्तु वेदाती प्रत्यक्ष एवम् अनुभव को अभिन्नायक मानता है । अनुभव पारमार्थिक रूप में परम तत्त्व तक जाता है लौकिक व्यवहार में वह प्रत्यक्ष का पर्याय है । जो हो, इन पत्रों के होने न-होने से निराला का कुछ नहीं आता जाता, अल्बत्ता य न हो तो मेरी प्रत्यभिज्ञा न हो, कोई न जाने कि किसी परमशिव ने कभी स्वेच्छा से अपन पट पर मरा चित्र आँका था ।—‘स्वेच्छया स्वमित्तो विरवो मीलनम् ।’

—प्रत्यभिज्ञाहृदयम्

अब यह परम भ्रम मेरे मिटाए न मिटेगा, क्योंकि *What is bred in the bone cannot come out of the flesh* भारतीय साहित्य में देवचरित्र ऋषिचरित्र के बाद मानव चरित्र का स्थान है । देवत्व एवम् आपभाव मानवता की ही उत्पत्ति ध्याप्ति के भीतर हैं । निराला का मानव पहले देवता या ऋषि है,— मूल्यांकन में इस निष्कर्ष की उपेक्षा यद्यपि आलाचक की एकाङ्गिता की ही विनप्ति है, समग्रता में निराला के जिज्ञामु आधे-अधूर परिचय से विपण्यस्त तप्ति ही पाते हैं ।

वे देवतो का ठिकाना आलीक से प्रज्वलित दुग्ध दुर्बोध स्थान में बनाते हैं उस आलोकित प्रदेश में प्रवेश असम्भव नहीं है, सूर्यरश्मियों के सहारे वचागिक उच्चता के शिखर पर भी पहुँचा जा सकता है ।

जिसका मन विवेक से आक्रान्त है, जो भीड़ में भी अकेला है शील और ओगध्य जिसके विनेय गुण हैं, ज्ञान निलय चैतन्य में चित्त को स्थिर रखने वाले उस आप भावापन को क्या नहीं समझा जा सकता ? जिसका मोहावरण केंचुल की तरह उतर गया है, जिसने तप कर अमाध्य साधन किया है,— इसी शरीर से लंबी शक्ति को आपत्त कर महाप्राणता का अखण्डनीय प्रमाण प्रस्तुत किया है उस छोड़कर क्वचिन् वदाचित पञ्च मवार की प्राणिशास्त्रीय दुर्वलता का दुष्प्रचार मानवीय चरित्र के सबसे कमजोर पाए को शहजोग मिट्ट करन जैसा है ।

अब तब प्रकाशित अप्रकाशित तथ्यों में यह भ्रामक्य नहीं देखी गई कि वे निराला के सत्य या मत्त्व को साकार कर सकें । गुलाब की एक एक पंखी

को नोचकर गुलाब की अग्रण्डता का मम नहीं उदघाटित किया जा सकता। विराट रूप दिखलाने के पूर्व कृष्ण ने अजुन को शिष्य दृष्टि दी थी चम चक्षु मम तक पहुँचने में असमर्थ हैं। निराला केवल नाम और रूप नहीं अनाम अरूप आत्मा भी हैं। लोक रुचि की दृष्टि से यह विषय चाहे जितना थरोचक हो तत्त्व विश्लेषक के लिए तो यह रोचक भी है प्ररोचक भी। मानवीय परम्परा के सहस्राब्दियों के इतिहास में मुकरात बुद्ध इसा गाधी एस नाम कितने हैं ?—कबीर सूर-तुलसी के समान निराला भी हिंदी-बिबि परम्परा में एक बसा ही बालजयी नाम है।

अब कोई भावात्मक गल्बो या साह्यिकी के तथ्या से निराला के सत्य को नहीं ढक सकता। जिसके यश का चिराग तनिक श्वास उच्छ्वास से लप लप करने लगता है उसका नाम महाप्राण निराला नहीं होता।

जला है जीवन यह आतप में दीघकाल

+ + +

किन्तु पड़ी "योम-उर बधु नील मेघ माल ।

—अनामिका

इस घनघोर भौतिकवादी युग में, जब अर्थोपाजन के लिए कितन ही धिनोन हथकड़े अपनाए जा रहे हैं, कठोर तपस्या का दावा अकेले निराला ही तो कर सकते थे

लगे जो उपल पद हुए उत्पल ज्ञात

कण्टक चुभे, जागरण बने अवदात,

+ + +

समझ क्या बै सकेंगे मोर मलिन मन,

निशाचर तेज हत रहे जो बय जन —

धय जीवन कहा ?

—गीतिका

जिस जीवन को निराला ने धय मानकर सुख से जीने की वर्द्धित सुविधा का बलिदान किया उसका मूल्याङ्कन बहुमत के आधार पर क्या हो सकता है ? सतही बहुमत निराला ने अभिमत की तरह तक उतरता नहीं गिचना, क्योंकि अपरोक्ष स्वानुभूति के चतय से निराला के अभिमत में आकार ग्रहण किया है।

अनुभूति की मघनता को ई० सन् से तोलना ठीक नहीं है। सन् '३५-३६ की नमयता साध्य गीतों में प्रखरतर हो उठी थी। अन्तिम स्वरो की प्रशान्त क्रान्ति, आनन्दमयता निराला की धारणातीत महिमा को चिरविस्मय के रूप में निरूपित करने को विवश करती है। मेरे अन्तर की रिक्तता उसे पूणता में न प्रस्फुटित करे, मलिनता उज्ज्वल रेखाएँ न आँक सके, तो यह मरी ही अदृता यता है, उन गीतों की क्षमता और योग्यता तो भ्रम और सभ्रम से परे है।

भौतिकवादी की दृष्टि समसामयिक सृष्टि पर टिकती है, अध्यात्मवादी तात्कालिकता को अधिक महत्त्व नहीं देना। क्योंकि अनन्त जीवन का विश्वासी कुछ क्षणा में टटका और कुछ क्षणों में बासी नहीं होता। निराला की ताजगी का राज एक अपने युग के प्रवतन या उसके प्रतिनिधित्व में ही पिनहा नहीं है यह बदलते हुए परिप्रेक्ष्यों के साथ आनेवाले युगों में क्रमशः स्पष्ट होता रहेगा।

कौन जाने, तब ये पत्र उनके दीप्त और दण्ड जीवन के आस-पास झुके हुए घूमिल आकाश को गहन आत्म प्रकाश से उद्भासित करने में आशिक सहायता प्रदान करें।

निराला जयन्ती
निराला निवेदन
मुजफ्फरपुर (बिहार)

जानकीवल्लभ शास्त्री

निराला
के
पत्र

प्रिय बाल पित,

तुम्हारी कान्शी नर नही। तुम्हारे जातीय सत्य से पूण, आकाश और पृथ्वी को मिला रही है। इसमें मैं अपने तादृश्य की नई पहचान पा कर चकित हो गया, देर तक मुग्ध होकर सुनता रहा।

मैं अग्रे किमी पत्रिका में, इसकी चर्चा करूँगा।

तुम्हारा
'निराला'

१ 'काकली' मेरे प्रायोगिक सस्कृत गीतों और प्रगीत कविताओं की प्रथम पुस्तिका है। सन ३५ में उसका प्रकाशन हुआ था। बदीमन्दिरम् (खण्डखाद्य) और लीलापदमम् (मुक्तक काव्य) उसके बाद की रचनाएँ हैं।

२ काकली शीपक प्रगीत कविता की प्राथमिक पक्तियों में कोयल को सम्बोधित कर लिखा था कि मैंने तेरी शोरी जुवा पुरा ली, तेरी ही बोली की नकल उतारी है इसलिए मेरी काकली में तेरी काकली की असलियत नहीं, एक नकलधी की कामयाब-नाकामयाब कोशिश भर है —

कोकिल, कृत कलालापो नदने त्वया सानन्दम्,
तत्प्रतिध्वनि प्रेक्षितो घृता दिशि दिशि मद् मद्म् ।

+ +

यो यस्यानुकरोति विभ्रम तस्मात् स्वयं स हीन,
त्वद्वाचोऽनुकृतेमलिना काकली, ततोऽस्मि च दीन ।

—काकली प० २८

मभवत् निराला ने इसी संग्रह की ओर संकेत किया है।

58 Nariyalwali Gali

Lucknow

30 7 35

प्रिय बाल कवि,

दोनों पत्र यथासमय प्राप्त हुए। पहले के उत्तर में देर इसलिए हुई कि मैं बहुत ज्यादा उत्तर देने का आदी नहीं। लिखनेवाला था कि दूसरा पत्र मिला।

आपकी रचनाएँ स्वाभाविक उच्छ्वास तथा प्रेरणा के अनुसार हुई हैं

१ रचनाएँ भी —

(क)

बिरब तुम्हारी माया !

उद्योतिमय, यह अधकार—

छाया कि तुम्हारी छाया ?

जलता नभ रवि की पी हाला,

उगल रहे तरु पल्लव ज्वाला,

जग के सजग ताप में निखरी—

कनक तुम्हारी काया !

तोड़-तोड़ कर प्रस्तर के स्तर

झरता जीवन निम्तर झर झर

भरण यहाँ पाने को जीवन

शरण तुम्हारी आया !

(ख)

मेरा नाम पुकार रहे तुम,

अपना नाम छिपाने को !

सहज-सजा मैं साज, तुम्हारा—

दब यज्ञा, जग भी शनकारा

पुरस्कार देते हो मुझको,

अपना काम छिपाने को !

मैं जब जब जिस पथ पर चलता

दीप तुम्हारा गिद्यता जलता

मेरी राह दिखा देते तुम

अपना धाम छिपाने को !

जय ये गीत (मन ३६ में प्रकाशित) परे (प्रथम हिन्दी काव्य-ग्रन्थ)
‘रूप अर्थ’ में संकलित हैं।

इसका सादर उही से मिलता है। भावना जसी पुष्ट है, गति भी वही ही सुधर। मुझे आशा है, आपकी प्रतिभा अच्छे अच्छे चमत्कार प्रदर्शित करेगी।

मैं कई कारणों से खिन्न रहता हूँ। कुछ-कुछ काम करता जाता हूँ, पर जैसे थक गया हूँ। क्या इधर दो माल तक व्याकायदा आपने 'सुधा' देखी है? शायद अब हम नये ढंग से मुझे विशेष रूप से लिखने का मौका न मिले। कारण दुलारे लाल जी की बहुत सी बातें मुझे पसंद नहीं। विनोपाङ्क के लेखकों में उन्होंने मेरा नाम नहीं दिया यह मुझे आपसे मालूम हुआ, बल्कि उसके सम्पादक चतुरमेन जी टहलते हुए मिले, वह भी पूछ रहे थे कि आपका नाम क्यों नहीं है आप विनोपाङ्क के लिये क्यों नहीं लिख रहे। पर सत्य यह है कि दुलारे लालजी के माँगने पर बहुत पहले ही 'मित्र के प्रति' शीघ्र मैं अपनी एक कविता १२० पद्यों की (पच्चीस रोज पहले) दे चुका हूँ फिर भी उन्होंने ऐसा किया। इसके कारण हूँ। पर देखा जायगा। मैंने बल्कि उन्हें सूचना दे दी है कि मेरा कविता के न छोपें।

मैंने 'प्रभावती' एक नया अविज्ञापित उपन्यास लिखा है, ऐतिहासिक रोमांच के रूप में। यथा के 'सरस्वती पुस्तक मठार' से प्रकाशित होगा। और जिनके लिये आपने लिखा है पूरा करने की काशिष करूँगा। कारणों से नहीं पूरा कर पाया।

इस महीने एक लेख मेरा 'माधुरी' के विनोपाङ्क में छप रहा है— स्वकीया। 'सरस्वती की श्री सुमित्रानन्दन पत्र' लिखकर भेजा है। 'सुधा' की जो कुछ दिया था, वह वापस ले लिया।

'चित्रपट' का अभी-अभी मैंने एक कविता उनके माँगने पर भेजी है। पहले भी एक भेजी थी, पर वह उममें छरी है मुझे मालूम न था। विनोपाङ्क के लिये माँगी थी, विनोपाङ्क में तो नहीं छनी। उस कविता का शीघ्र मैं 'होनी' दिया था, आर गुल्फना लिखने हूँ बदल दिया होगा। वह यह है—

मार दी तुझे विवकारो,

कौन री, रँगो छवि चारी ?

१ पुलस्वैप माइज क दो पद्यो मे प्रस्तुत कविता की मूल पाण्डलिपि इस पत्र के साथ मन्गन है। हाशिये पर हिदायत के ये शब्द हैं— इस पद्य को कभी छपने के लिये न दीजियेगा।—निराला

२ निराला का यह पद्य नहीं प्रकाशित हुआ। इसकी पाण्डलिपि ही नष्ट कर दी गई।

फूल-सी बेह, द्युति सारी,
हल्की तूल-सी सँवारी,
रेणुओं मली मुकुमारी,
कौन रो, रंगी छवि वारी ?

इसमें दूसरी पंक्ति खरा पेंचदार है और तो साफ है। मतलब है उसका
— रो, वह कौन है जिसने तुझे रंगी छवि वार दी ?

अभी जो भेजी है वह यह है —

वे गये असह दुख भर,
वारिद झरझर झर कर ।^१

आशा है आप प्रसन्न है। उपदेश के रूप में तो मैं कुछ कह ही नहीं
सकता। उपदेश आपको अपने ही भीतर से मिलेंगे। मैं आपको केवल प्रसन्न
वदन^२ देखने की इच्छा रखता हूँ। इति।

सस्नेह—
निराला'

१ पीछे ये दोनों गीत गीतिका में संकलित हो गये हैं। मेरे पास भेजने के
कितने ही दिनों बाद मित्र के प्रति कविता माधुरी में पहली बार
प्रकाशित हुई थी अब यह अनामिका में संगृहीत है।

२ प्रसन्न वदन ? — क्यों नहीं तभी तो मैं लिख रहा था —
नाबिक, अभी सबेरा है,

पहचाना क्या तेरा है ?

तरी खोल झट कह, वह तट भी—

त करनी है कितनी दूरी ?

खे लेने की ताकत पूरी ?

तब ले चल, हाँ निस्तल जल का—

रहता डर बहुतेरा है ?

सभी भार कुहरा कुहरा ही
तू बठा, जया थक कर राही,
सुनता हूँ उस ओर सभी का

होता (नवमेरा है ।

नारियलवाली गली, लखनऊ

१४ न ३५

प्रिय कवि,

मैं बहुत दिनों तक नहीं लिख सका। मरी कब्र का १७ साल की उम्र में उसी समय देहात हुआ था। आपन ठीक लिखा है—किन्तु करोपि सदमितमेव।^१

आपका विद्यार्थी जीवन जसा चमकीला रहा है, मुझे विश्वास है, आपका कवि जीवन भी वैसा ही होगा।

प्रसिद्धि से मनुष्य नहीं, मनुष्य से प्रसिद्धि है।

संस्कृत में आपन जसा दखल पाया है, हिन्दी में पाते के लिए भी प्रयत्नपर रहिये, थम निश्चय सायब होगा। मैं कुछ स्वस्थ होकर आपकी आलोचना लिखूंगा। इस समय अनेक प्रकार की उलझना में हूँ। यहाँ पर रामनारायण जी पाण्डेय स० माधुरी संस्कृत जानते हैं। उनसे मैंने आपकी चर्चा दो-तीन बार की है। शीघ्र उन्हें 'बाकली' पढ़ने के लिए दूंगा। आप यदाकदा अपने विचार

१ 'सरोज-स्मृति में सवा-अट्टारह वष लिखा है —

ऊनविश पर जो प्रथम चरण

तेरा यह जीवन सिद्ध-तरण।

यहाँ शक्य है सांत्वलिक शोक के सवग में उन्होंने हिसाब जोड़कर न लिखा हो और कविता लिखन समय अपेक्षाकृत अधिक प्रवृत्तिम्य होन पर ठीक सख्या लिखी हो।

२ अन्तर्यामी' शीषक मरी एक संस्कृत कविता की पठित्तियाँ हैं —

उपालभेय मु क ? कस्य च पुरतो हृतेयमिह लोके ?

किं बुभ्यां कृपण प्राण सापास्तमागने शोक ?

सदा सहव वगनपि नाद्यावधि ददशे सृष्ट्यामिन,

किन्तु करोपि सदेष्टितमेव, न वेत्सि किमन्तर्यामिन ?

हिंदी में प्रकट किया कीजिये मैं उनसे कह दूंगा—‘माधुरी’ आपको जगह दे। दूसरे पत्र भी दूँगे। मैं डग समेत आपका परिचय आलोचना में कर दूँगा।^१

आप विषय की तरह तक पहुँचने की कोशिश करते हैं, वही आपको ऊँचाई तक उठायेगी।

कालिदास और श्रीहृष के सम्बन्ध में आपने ठीक लिखा है।^१ कभी मैं भी इन्हें कुछ-कुछ पढ़ा था। समय नहीं कि दोनों की सौन्दर्य-दृष्टि पर लिखूँ दोनों महान हैं पर श्रीहृष का प्रभाव अधिक स्थायी होता है। फिर भी कला की जानकारी कालिदास को अधिक है—अगर कुछ गहन होते।

हाँ प्रभावती कुछ बाकी है। नहीं कह सकता पूरी खूबसूरत उतार दूँगा। अप्सरा से अलका जैसे भिन्न है वैसे ही यह दोनों से। आपको शायद ‘अप्सरा अधिक पसंद है थम ‘अलका ने अधिक लिया।

आप शायद वहाँ अमरेजी के कला विभाग में पढ़ते हैं, किस दर्जे में हैं, लिखियेगा शीघ्र। फिर बस। मैं अधिक क्षुब्ध करना नहीं चाहता।

— निराला”

१ मरे बार-बार मना करने पर कि मैं स्वयं आप पर लिखने की तयारी कर रहा हूँ और अहोरूपमहो ध्वनि से मरे खिलाफ मण्डल घघने लगेगा यह आलोचना कभी कलमबंद न हुई। यो मैंने दिल में यकीन कर लिया था निराला जल भूल जायेंगे मगर वह यहाँ लिखते रहेंगे।

२ यह निबन्ध निरालाजी की असावधानी से नष्ट हो गया। इस तुलनात्मक अध्ययन में मैंने जो खपा डाला था।

ऐसे ही पत्र की काव्यकला शीपक मेरा विशाल प्रबन्ध वीणा सम्पादक पं० कालिका प्रसाद दीक्षित कुसुमाकर ने खो दिया। यह प्रबन्ध निराला की काव्यकला के साथ ही लिखा गया था।

प्रेम और मरु शीपक निबन्ध ने रसूलपुरी जी की लापरवाही से काशी कारवट के ली उसमें मेरे अग्रेशी साहित्य के टिप्टपुत्र अधकचरे ज्ञान की कुछ रेखाएँ अङ्कित थीं।

और सबसे अधिक दुःख स्मृति काव्यकला शीपक प्रबन्ध के लो जाने की है। इस दलिकोग मम्पादक शिवचन्द्र शर्मा मेरे घर पर आ कर स्वयं ले गए थे। इस निबन्ध में मैंने पट शास्त्रा का अध्ययन प्रस्तुत किया था।

३ काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में।

पिय बाल कवि

आपका पत्र म लिख रहा हूँ। पर एक काम उमी वक्त कर दिया था। आप की कविता इमी बार माधुरी में निकलेगी मुझे श्री पाण्डेय जी ने ऐसा ही कहा था। उसे प्रथम पद्य पर देने, पर कुछ बढी है इसलिए अथवा दंगे। आपकी कविता मुझे बहुत पसन्द आई।

लेख भी अच्छा है। दा या तीन जगह (बिहारी) भाषा की (यू पी की दृष्टि से) गलतियाँ हैं। मैं उनके कानून व्यवहारण के अनुसार अगले पत्र म लिख दूँगा। यो आप बहुत अच्छी हिन्दी लिखन हैं। आपको हिन्दी म भी नाम बरना होगा। क्योंकि यहाँ गुञ्जायम ज्यादा है। आपका सिद्धि भी हा सबती है, मुझे ऐसा ही विश्वास हुआ।

मैं ६/७ रोज के अन्दर एक बार काशी जानवाला हूँ। गया तो आपम मिठूँगा। मैंन रायट्णदाम जी के भारतीय मण्डार को 'भौतिका' दे नी है। उमी के मन्व्यध म प्रयाग तथा काशी जानेवाला हूँ। पाण्डेय जी का पत्र आपको मिला होगा अगर उहाने फिर लिखा है। याद नही मैंने भी आपको हमम पहूले, इमी मन्व्यध म लिखा है या नही।

इमी १२ ता० के बाद मैं यह मवान छाड दूँगा।

आपरा

—निराला

१ यह लेख काव्य प्रतिभा' पर था। एक हजार वय के भारतिय मान्थिय का निष्कष इमने सोदाहरण निवचित हुआ था। मवनाधारण के गिठ ममान रूप से खले हुए निराला के घर से यह भी रहस्यपूर्ण ढंग म गायब ३ गया।

२ मैं श्रीमान् गरगजमिह वर्मा साहित्यशास्त्र के चानुक्' न अभावधान न था। मरस्वती म्पादक हों या उला भगवान्गीन या , ममन मनी करिदा' कौन मुनना ?

तूने ऐ गुञ्ची। इजाजत वासवा से 'नी हजार तोडने के यों न गुल मुगेंचमन के खबर।'

५

58 Narajalwahi Gali

Lucknow

29 10 35

प्रिय जानकीवल्लभ

बहुत दिनों से आपको नहीं लिखा। यहाँ आन पर आपका पत्र मिला था, पर उलझनें थी, जिनसे आजकल बरत-बरते पूजा की छुट्टी आ गई, मुझ प्रताप्या करनी पड़ी। पाण्डेय जी के पत्र से मालूम हुआ आप घर गए हैं २०/२२ तक बनारस लौटगे। मैं इस समय मोरावा उनाव गया था एक साहित्यिक समारोह में। एक पत्र मैंने पहले लिखा था, पर आल्स्पदश भेजा नहीं।

यहाँ पत्र के साथ जो कविता भेजी थी उस मैंने अपनी एक रचना के साथ श्री नागर को दे दिया था उनका आग्रह पर। वह कविता यहाँ के एक मिनमा पत्र में प्रकाशित हुई है विजयाङ्क में बनारस वह भेजा गया होगा, पर आपकी अदम मौजूदगी में पहुँचने के कारण अगर न मिला हो तो लिखियगा दूसरा अङ्क भेजवा दूँगा। कविता अच्छी है, शायद कुछ अशुद्ध छप गई है—स्मरण नहीं।

माधुरी में जो कविता आपकी इधर निकली उसकी एक पङ्क्ति गलत है, व्याकरण सज्जत मालूम देने पर भी 'लाना' और पाना' क्रियाएँ एक auxiliary Verb के साथ ने-वर्जित चलती हैं। Present perfect tense में सक्रमक क्रिया के साथ हमशा नहीं रहेगा, Past future tense में न नहीं दोनो रह सकते हैं, असमापिका क्रिया के पहले नहीं कभी नहीं होगा, न रहेगा। (यो नहीं स्त्रीलिङ्ग है—नहीं की नहीं सही।)

१ लो, बोल उठे वन वन विहङ्ग ।

खोलो तन मन के वातायन,
क्यों मुँदे-मुँदे, उमन उमन ?
मेघो मे भर आया जीवन,

प्रतिपल पुलकित सारङ्ग-अङ्ग ।

—इसमें मेघो में भर आया की जगह जाने कस पण्डित रूपनारायण जी पाण्डेय की आज वचाकर मेघो ने भर लाया छप गया था, किन्तु गुरुद्व निराला ऐसे शोहर-ए-आफाक उस्ताद को कौन फाँकी दे सकता था ?

गल्पित्यां हम लोगों से भी होती हैं, निरुत्साह न हुआयेगा ।

आपकी दो कविताएँ 'माधुरी' में और आई थीं । एक पाण्डेय जी ने रखी है एक उन्हें कभी अच्छी लगी, मुझे काफी अच्छी लगी, पर बीर और रौद्र का यह रूप कुछ दिनों बाद आप स्वयं बदल देंगे, इस विचार में अपनी पसन्द के अनुसार आपको हिंदी में रखना चाहता हूँ अगर आप भी पसन्द करेंगे ।

पाण्डेय जी 'ज्वलित ज्वाल' नहीं पसन्द करते । पर आप धैर्य से सब देखत-सीखते आगे बढ़िये, इन लोगों की इसलाह से आपको हिंदी में ढग के साथ उतरते हुए सहूलियत होगी । सविनैय फिर लिखूँगा ।

मैं यही रह गया मवान नहीं बदल सका । आरुछा मैं कोई कविता नहीं भेजी । गीतिका साल भर पहले से तैयार थी चाहता तो छपवा कर भेजवा देता ।

मेरा प्रकाशन अच्छा नहीं, यह अच्छा है । समझदार आयेंगे तस्वीरें रखनेवाले नहीं ।

'सखी' छप गई । 'प्रभावती' प्रेम जा रही है । दोना मैं ही आपको एक साथ भेज दूँगा ।

अंगरेजी खूब पढ़ते जाइये । 'काकली' मैंने पाण्डेय जी को पढ़ने के लिए दी थी, शायद उन्होंने छो दी, तब आपसे मँगवाई मुझे देने के लिये, दी थी । पर देखता हूँ मेर पास से कोई दोस्त उठा ले गये । अगर होगी तो मैं तीन चार दिन बाद आलोचना लिखूँगा, ले लूँगा, नहीं तो आपको लिखूँगा ।

आपका

— निराला

२

नित मनाते हो रहे प्रिय,

आलि, विर-अभिमानिनी म !

सजल जलद-पटल हटा

विष्णु विष्णु-अक अशक देखा,

निठुर जग की घोट-सी

मत अमत की भी बक देखा,

लोक लोचन श्याम तम

निजल जली सौदागिनी म !

को पाण्डेय जा ने खूब सराहा था, किन्तु—

जीवन रण में हों दोष भाल

लेकर कर में करवाल बाल,

यौवन घन उगले ज्वलित ज्वाल ।

का "उद्वृष्ट दण्डघर अतिप्रचण्ड ढग उन्हें न रचा न जेँचा और १ १० ३५ की लिखी हुई यह कविता सदा सवदा के लिए अप्रकाशित रह गई । फिर शोरगुल-झगडा पसन्द-वाले हुल्लाहवाज शाली में मैंने लिखना ही छोड़ दिया ।

58 Nariyalwali Gali,
Lucknow
23 11 35

प्रिय कवि,

फिर बहुत दिन लग गये आपको उत्तर देने में। यह भी उत्तर नहीं केवल सान्त्वना है। उत्तर फिर लिखूंगा क्योंकि बहुत लिखना है।

आपकी 'निराला पर लिखी कविता' ध्वनि पर लिखा लेख^१ और 'मुग्धा' के नोट की आलोचना^२ मिली। उसी वक्त सब पढ डाला था।

आपकी काव्य प्रतिभा 'निराला की तारीफ में उसके तुलसीदास के मुकाबले' यून नहीं। पर मैं इसे कही भेज नहीं सकता न भेजवा सकता हूँ। इसे तारीख डाल कर, रक्वे रहिये। मेरी राय में प्रसिद्ध होकर यदि इच्छा हुई तो कही भेजियेगा।

१ 'तुलसीदास' का पहला जग मुग्धा में पढकर मैंने तत्पण उसी छंद में निराला पर एक लम्बी कविता लिख डाली थी।

२ यह लेख भी निराला के घर से सायब हो गया।

३ मुग्धा में एक सम्पादकीय नोट में निराला ने चुनौती दी थी कि सस्टुत के बड़े विद्वान भी काव्यास की कला का बारीकियों को नहीं समझते मैंने महज अटठारह की उम्र में उम टिप्पणी का बठोर प्रतिवात् लिख भेजा था। तब तक निराला से साधात्वार नहीं हुआ था। मेरा प्रतिवात् मुग्धा में नहीं छपा। माक्षात्कार के बाद निराला ने उसी प्रतिवाद की प्रतिलिपि मंगवाई थी।

४ गुह्येव का प्रादश सिर ओखा पर। मैंने बारह वर्षों बाद सन् '४७ में, कविवर श्री शमशर बहादुर सिंह के अनुरोध पर उसे बम्बई से निकलाने वाले नया साहित्य में प्रकाशित कराया था। जो प्रसिद्धि की जिल्ली तत्र क्या, अय भी दूर है।

आपकी आलोचना के सम्बन्ध में ही मुझे अधिक लिखना है, इसलिये दूसरे पत्र की आशा दिलाता हूँ ।

ध्वनि' वाला लेख काफी अच्छा है । पर अच्छी ध्वनि के प्रदर्शन में वैसा अश्लील उदाहरण^१ न देना था, और संस्कृत साहित्य में इधर के कवियों ने अश्लीलता में ही कमाल दिखाया है मैं समझता हूँ । कुछ ही, यह भी मुझसे सम्बन्ध रखता है । मैं वह नहीं सकता, क्योंकि लेखक स्वतन्त्र है, पर मुझे अपने मित्रों में स्नेह की ही इच्छा रहती है ।

आपका लेख माधुरी में इस बार नहीं प्रकाशित हुआ । अब के प्रकाशित होने वाले अङ्क में उसे गौरव वाला (प्रथम) स्थान मिला है,^२ पाण्डेय जी कहते थे ।

मैंने आपके पाम सिनेमा-समाचार' का अङ्क भेज देने के लिये फिर कहा था, अगर न गया हो तो जल्द लिखिये मेरे पास एक अङ्क है भेज दूंगा । आपकी कविता मुझे सुन्दर छपा है सिनेमा समाचार में ।

— निराला'

१ सम्भवत आवाप्य गोत्रजन की यह आर्या उदाहृत थी —

अवधिदिनायधिजीवा, प्रसीद जीवतु पयिकजनजाया
दुलङ्घ्यवतमशली स्तनी पिघेहि प्रपापालि ।

संस्कृत में यह स्वस्थ, एक सम्पूर्ण आर्य श्लोक है अश्लील नहीं । तभी महर्षि वात्सीकि योगवासिष्ठ में भृशुण्ण म देवाधिदेव महादेव का वचन बरवात है —

षट्पदधेगिनमना मस्योच्चस्तवस्तनी,
विलासिनी शरीरार्थं सता चूनतरोरिव ।

२ 'स्त्री' में यही मरा प्रथम प्रकाशित लेख था जिसे माधुरी-सम्पादन प० रूपनारायण जी पाण्डेय ने प्रथम स्थान प्रदान किया था ।

58, Nanyalwali Gali

Lucknow

11 2 36

प्रिय जानकीवल्लभ जी,

बहुत दिनों बाद आपका लिख रहा हूँ। आपके दो पत्रों पर भी निरुत्तर रहा। मैं मानसिक स्फूर्ति उत्तरोत्तर खोता जा रहा हूँ। केवल विश्वास रह गया है। नहीं कह सकता देवी वीणावादिनी की क्या इच्छा है।

इस पत्र के साथ इधर की लिखी 'सरोज-स्मृति' रचना आपके पास भेज रहा हूँ—मेरी पुत्री सरोजकुमारी की स्मृति पर लिखी गई है।

आपकी कावली की आलोचना के लिए कुछ और समय ले लिया है कारण आपका हिन्दी-कवि रूप भी साथ रखना चाहता हूँ पुनः कुछ आवश्यक कामों से फुसत पा लेना चाहता हूँ तब तक तुलसी कालिदास की प्रत्यालोचना मैं लिखा निवृत्त आपका मैंने देखा दिया है पिछले महीने स्थानाभाव के कारण नहीं जा सका, अब के सुना जा रहा है इस बार मेरा भी एक बहुत विवेचन मरे गीत और कला शीपक से जा रहा है चार-पाच अङ्कों में निकलगा माधुरी में।

मैंने देखा हिन्दी के आलोचन परले दर्जे के उजबक हैं। जब तक मैं कला का आधुनिक रूप घोल कर न रखूँगा व कला-कला करके ही कला की इति करते रहूँगे। लेख दखियेगा।

जब तक मैं स्वयं आप पर इच्छानुसार न लिख लूँ तब तक मुझ पर लिखा आपका कुछ प्रकाशित होना ठीक नहीं। यद्यपि यह सहन्यता व प्रति कूट नहीं फिर भी लोकाचार दमने विरुद्ध है। आप मरे विचार में विहार और समस्त हिन्दी-मगार में शीघ्र अपना सुन्दर कवि रूप रखेंगे, पर हिन्दी की तरफ़ी कीजिये। जिन विहारियों का डका पीटा जा रहा है मैं बहुत जल्द उनके समक्ष आपको भिजाना हूँ—ध्याम तौर से दिनकर जी के मुखावट दगा जाय। एन आन्टोन् विहारियों के वाक्य जान का छडा करके देवना

चाहता हूँ, डड्डा पीटनेवाले बाजदार ही हूँ या समझदार भी । इस पत्र का मम खोलियेगा मत ।'

१ बत्तीस वर्षों बाद ईमान के नाम पर मम खोलना पड़ रहा है, क्योंकि निराला के पत्रों का सम्पादन-संशोधन मेरा उद्देश्य नहीं । कहना न होगा, मैंने अपने 'यकित्तत्व और कलत्त्व को कुछ जान देना पसंद किया, किन्तु निराला को ऐसा अप्रिय और अवाञ्छनीय आन्दोलन कभी नहीं खड़ा करने दिया । एक तो विहारियों के ही काव्य ज्ञान की छिछालेदार क्या ?

दूमरे बेनीपुरी जी या प० बनारसीदास जी चतुर्वेदी का दिनकर जी के नाम का डका पीटना या आचार्य नन्दुलारे बाजपयी का अञ्जल जी का निशान उड़ाना यदि असाहित्यिक और अशोभन काव्य था तो निराला का यह आन्दोलन क्या होना ?

सच तो यह कि मैं ऐसी आरोपित कीर्ति का कभी प्यासा न था । यथाय के विरुद्ध अतिशय विनम्रता का विश्वासी भी नहीं । बीस बरस की उमर में भी मुझे अपनी सीमाओं का सम्यक बोध था । रंग बिरंगी विनयारिया छिटकाती हुई यह आनिशबाजी मेरे ठंडे दिल का कभे भाती ?

पीढ़े मुझे उस अप्रशस्त प्रशस्ति से बचाव का एक यही सही रास्ता मालूम दिया । निराला की बात ('जब तक मैं स्वयं आप पर इच्छानुसार न लिखूँ तब तक मुझ पर लिखा आपका कुछ प्रकाशित होता ठीक नहीं ।') काट कर मैंने उन पर एकांसी पंक्तों का प्रवचन—निराला की काव्यकला' लिख कर छपवा डाला ।

प्रचार और विनापन से नए साहित्य का जो सय जेरोज्ज्वर हुआ उधर मेरा मुनलक ध्यान न था । मैंने दो गीत रच कर निराला को जतलाया —

सिंघु मिलन की चाह नहीं, बस
मुझको तो बहते जाना है ।

दो पुलिनों से बँध कर भी,

कितनी स्वतंत्र है जीवन धारा !

रोक रखेंगे मुझको कब तक,

पत्पर-चट्टाओं की कारा ?

अपनी तुझ तरङ्गों का ही,

रहता इतना बड़ा धरोरा,

आपने पत्र के और सब विषय भल गये हैं। लेख और पत्र हैं तो, पर उठ कर उन्हें छोड़ कर पढ़ना मेरे लिये बड़ी मितनन का काम है। एका कष्ट देने कभी नहा उठाया। मैं समझता हूँ। एव ही विषय उत्तर का क योग्य है। जय सब सहज्य होकर हृदय में ही लीन हो चुके हैं। यह काव्यिक के दम श्लोक का अर्थ है। जिसका मतलब मेरे विचार से मलिनताय को भी नहीं मृगा न सस्वृत के पण्डित मेरे मित्र श्री वासुदेव शरण जी अग्रवाल शम्भू एम० ए० ए० ए० ए० वी० को, जिन्होंने कई साल पहले माधुरी व विनेपायु में इसी श्लोक का आधार पर (कालिकास पर लिखे हुए) अलग म सब समय सब ऋतुओं को छाया कर दी है। आपन मुने सहज्य हावर गमशाने व लिय लिखा है।

यह ठीक है कि भाषा की ओजस्विता कभी कभी प्राध की परिचायिका होती है। पर यह ध्रम है सत्य नहीं। मैं तो आपको छोटे बरि मित्र की हा तरह देखता हूँ। दूसरो पर भी बर नहा रखता। पर न जान क्या मुने बर ही दूसरो स मिला।

लौट-लौट कर नहीं देखता

मुझको तो बहते जाना है !

राह बनाकर बढना पडता,

इसीलिए एक एक चलता हूँ !

झुक्ना शील स्वभाव,

शिलाओं को पथ की चञ्चल, चलता हूँ !

आसपास में औरा के

मेरी भी एक धार लहराए—

यह विचारने की कब फुसत,

मुझको तो बहते जाना है !

(२)

मेरी शिथिल, मन्द गति ही क्यों

गिरि, बन सिंधु धार भी देखो !

पीले पत्तों में, घसत के—

लाल प्रवालों का बल सोता,

निराला के पत्र

अप्रिय सत्य में सत्य को छोड़कर यदि वे अप्रियता को ही देखें तो मैं हृदय से अपने को निर्दोष ही पाता हूँ।—और अप्रिय सत्य के प्रयोग मुझे इसलिए करने पड़ते हैं कि लोग सत्यप्रियता के नाम से असत्य या अद्वसत्य का पल्ला पकड़ते हैं।

आपने "सीमन्ते च त्वदुपगमज यत्र नीप वधूनाम" में 'वधूना' के द्वारा, सभी फूलों को, भिन्नरुचि के अनुसार लगाने की युक्ति दी है। युक्ति अच्छी है। पर दूसरा विरोध इससे भी जोरदार और साथ ही पायेदार रहता है। वह यह कि एक ही समय घोर जाड़ा और घोर गर्मी नहीं पड़ सकती इसलिये ऋतु प्रभाव से, धीरे धीरे खिलनवाले जाड़े के 'लोध्र' और गर्मी के 'शिरीष' एक साथ बगीचे में खिले नहीं मिल सकते। स्वर्ग में छहो ऋतुओं का एक साथ

काले जड पायाणों में

रहता उज्ज्वल जोदन का सोता

आँखों का खारा जल ही बघो,

उर का मधुर प्यार भी देखो।

बरसा कर अपना सारा रस,

नि स्व हो गई नीरव माला,

वन वन रंग, हृत्ति, मधु सौरभ भर

कलियों ने खुद को छो डाला,

ऊपर सूनी डाली ही बघो,

नीचे हरसिगा भी देखो

नभ के शून्य नयन भर जाएँ

तो अग्नी का ताप भला रे।

शीतल हो जो हृदय किसी का,

तो कोई ले मुझे जला रे।

सोने का तपना ही बघो,

सुम अपना मण्डहार भी देखो

आपके पत्र के जोर सब विषय भल गये हैं। लेख और पत्र हैं तो, पर उठ कर उन्हें छाज कर पढ़ना मेरे लिये बड़ी मिहनत का काम है। ऐसा कष्ट मैंने कभी नहीं उठाया। मैं समझता हूँ एक ही विषय उत्तर देना क योग्य है अथवा सब सहृदय होकर हृदय में ही लीन हो चुके हैं। यह कारिगम के इस श्लोक का अर्थ है जिसका मतलब मेरे विचार में मलिन्याण को भी नहीं मूझा न सस्त्रुत के पण्डित मेंर मित्र थी वामुदेव मरण जी अप्रमाल शास्त्री एम० ए० एल० एल० बी० को जिन्होंने कई साल पहले माधुरी क विगेपाङ्क में इसी श्लोक के आधार पर (कालिदास पर लिखे हुए) अलग म रात्र समय सब ऋतुओं की छाया कर दी है। आपन मुने सहृदय हाकर गमगाने क लिय लिखा है।

यह ठीक है कि भाषा की ओजस्विता कभी-कभी प्राध की परिचायिका होती है पर यह भ्रम है सत्य नहीं। मैं तो आपको छोटे कवि मित्र की ही तरह देखता हूँ। दूसरो पर भी बर नहीं रखता। पर न जान क्या, मुझे बर ही दूसरो से मिला।

लौट-लौट कर नहीं देखता

मुझको तो बहते जाना है !

राह बनाकर बढना पडता,

इसीलिए रक रक चलता हूँ !

झुन्ना शील स्वभाव,

शिलाओं को पथ की, चञ्चल, चलता हूँ !

जासपास में औरों के

मेरा भी एक धार लहराए—

यह विचारने की कब फुसत,

मुझको तो बहते जाना है !

(२)

मेरी शिथिल, मन्द गति ही क्या

गिरि, वन सिंधु धार भी देखो !

पीले पत्तों में, बसंत के—

लाल प्रवालों का दण सोता

अप्रिय सत्य में सत्य को छोड़कर यदि वे अप्रियता को ही देखें तो मैं हृदय से अपने को निर्दोष ही पाता हूँ ।—और अप्रिय सत्य के प्रयाग मुझे इसलिए करने पड़ते हैं कि लोग सत्यप्रियता के नाम से असत्य या अद्वयसत्य का पल्ला पकड़ते हैं ।

आपने “सीमन्ते च त्वदुपगमज यत्र नीप वधूनाम” में ‘वधूना’ के द्वारा, सभी फूलों को, भिन्नभिन्न के अनुसार लगाने की युक्ति दी है । युक्ति अच्छी है । पर, दूसरा विरोध इससे भी जोरदार और साथ ही पायेदार रहता है । वह यह कि एक ही समय घोर जाटा और धार गर्मी नहीं पड़ सकती इसलिए ऋतु प्रभाव से, धीरे धीरे खिलनवाले जाड़े के ‘लोध्र’ और गर्मी के शिरीष एक साथ बगीचे में खिल नहीं मिल सकते । स्वर्ग में छहो ऋतुओं का एक साथ

काले जड पाषाणो मे

रहता उज्ज्वल जीवन का सोता,

आँखों का चारा जल ही क्या,

उर का भधुर प्यार भी देखो ।

घरना कर अपना सारा रस,

निःस्य हो गई नीरद माला ,

धन धन रँग, रुचि, भधु सौरभ भर

कलियों ने खुद को खो डाला ,

ऊपर सूनी डाली हो क्या,

नीचे हरसिगाण भी देखो !

नभ के शून्य नयन भर आएँ

तो अवनती का ताप भला रे ।

शीतल हो जो हृदय किसी का

तो फोई ले मुझे जला रे !

सोने का सपना ही क्या,

तुम अपना कष्टहार भी देखो ।

होना माना गया है' पर वह काल्पनिक है, यहा इसी का आश्रय टीकाकारों ने तथा मस्कृत के विद्वानों ने लिया है, पर यह बालिदास की कला को न समझना है—जसा कि उन्होंने 'मेघ' म ही लिखा है, आप जानते हैं,—'दिडनागानां पथि परिहरन स्थूलहस्तावलेपान" (दूसरा अर्थ—रास्ते म दिडनाग-जसे पण्डितों के हाथ की भद्दी लीपापोती (स्थूल काय कला) छोड़ते हुए) । और आपकी ही युक्ति के उत्तर म कहूंगा कि ऋतु ऋतु का एक ही शृंगार सभी स्त्रियाँ कर सकती हैं । अस्तु दूसरे का अर्थ —

यत्रोमतममरमुखरा पादपा नित्यपुष्पा
हसध्रेणीरचितरसना नित्यपदमा नलिय ।
केकोत्कण्ठा भवनशिखिनो नित्यभास्वत्कलापा
नित्यज्योत्स्ना प्रतिहततमोवत्तिरम्या प्रदोषा ॥

इसके अर्थ से पहले इतना जान लेना आवश्यक है कि केवल यक्ष विरही है और सब वहाँ अपनी अपनी प्रिया से मिले हुए । इस श्लोक म शुरु से अखीर तक लुप्तोपमा है ।

१ स्वर्ग म ही क्या ? महाकवि माघ ने तो रावण के ऐश्वर्य का वर्णन करते हुए उमी क नगर मे सदा मवदा क लिए छहों ऋतुआ के घर सत्तार बसा देने का अशौचिक चित्र खिचूत किया है

तपेन सर्पा शरदा हिमागमो
यसत्तलम्या शिशिर समेत्य च
प्रसूनवल्लिपि दधत सदतव
पुरे ऽस्य वास्तव्यमुदुम्बिता मयु ।

इतना ही नहीं बालिदास ने अलका म हर रात चाँदनी छिटकाने के लिए भगवान शङ्कर का सहारा लिया है कि उनका भाल चन्द्र की चन्द्रिका अलका के महला म मरैगी करनी रनी है — 'गह्योद्यानस्थितहरशिरश्चन्द्रिकाधीनहर्म्या ।'

किन्तु माघ न पूराम क चाँद को ही रावण का नमसचिह्न बना लिया है — रावण क अननुर की मानिनी रमणिया को चाँदनी की मन्त्रिा पिला कर दिवाग क लिए टांगुल कर इन की नौसरो पर रमवा लिया है —

कलाममप्रेण गहानमुञ्चता मनस्थिनोदत्कपितु पटीपसा
दिलामिनमनस्य विनवता रति न ममसाचिव्यमकारि ननुना ।

यथ कृता है —जहाँ पागल (भ्रमर यानी प्रणयी, प्रणयी की तरह मुखर = भ्रमरमुखर) भीरो से (भ्रमर-मयुक्त हो कर) मुखर पादप (पुरुषा) नित्यपुष्प (युवतिजना) हो रहे हैं, हसधेणी (तारीफ करने वाले की मण्डली या हसा की कतार से) निर्मित रणना (वृत्त या करघनी वह करघनी जिसमे हसो की कतार बैठा दी गई है, या हसो की श्रेणी में आने वाले, क्षीर-नीर-विवेक रखने वाले सत्य प्रशमकों की मण्डली से घिरी), नलिनी (स्वरूपा कामिनिर्पा) नित्यपद्मा (नित्य 'पदम पुरुषा') हैं,—(उनके हृत्प पर उनके प्रिय हैं।)

इन दोनो पत्तियो में जैसा स्त्री-पुरुष-संयोग दिखाया गया है, वैसा एक-एक पक्ति में भी आ सकता है और शब्द रचना सावित करती है कि कालिदास का यही भाव है—जहाँ मत्त भ्रमर-याग से मुखर पादप (पुरुष) नित्य पुष्पधारण किय रहते हैं (खुश हैं—ध्वनि) और नलिनी (शय्याएँ) हसा की कतार वाली करघनी पहन हुए पदमरवरूपा स्त्रियो से नित्य युक्त खिली हुई हैं—हस श्रेणी रचित रणना नित्यपद्मा हो रही है (खुश हैं—ध्वनि) ।

देखिये, कसा घटता है ! —यही कालिदास की एकमात्र कल्प है जो अयत्न नहीं मिलती । (मैंने अनेक उदाहरण इनके ऐसे निकाले हैं, जहाँ अलङ्कार के घन विशेष के लाल से दूमरा महज अर्थ प्रतिभात है ।)

आगे देखिये —वेका स्त्रीलिङ्ग है और शिखी पुलिङ्ग, फिर ज्योत्सना स्त्री लिङ्ग है और प्रदाप पुलिङ्ग । पहले कालिदास रूप में स्त्री पुष्प संयोग दिखा चुके हैं—उनकी प्रसन्नता जाहिर कर चुक है, अब स्वर में दिखा रहे हैं—वही संयोग, फिर भाव में, जा और सूक्ष्म हो गया है ।

१ अप्रमिद चाहे जिनना हो, कितु 'पदम' शब्द पुलिङ्ग भी है —
भाति पदम सरोवरे ।

अमरकोश का प्रमाण प्रयत्न है —

वा पुंसि पदम नलिनमरविचमहोत्पलम् ।

२ यहाँ पद्मा का सम्भवतः पद्मिनी के अर्थ में निराग संयोग कर रहे हैं । अपनी कविताओं में तो बहुत बार कर चुके हैं । पद्मा शब्द की व्युत्पत्ति है —पदमम अस्ति अस्या इति पद्मा ।

यहा 'भवन शिखी द्रष्टव्य है । यक्ष भवन शिखी नहीं । कहता है—मकान के मयूर हमशा कलाप से चमकते हुए (क्योंकि खुश हैं) बेका से उत्कण्ठित रहते हैं (बेका का योग है, यह भीतरी स्त्री रूप मोर से संयुक्त किया गया है और बाहरी स्त्री रूप से मिलने का भाव उत्कण्ठा शब्द से दर्शित है । पुनः यह उत्कण्ठा शब्द अनिश्चयात्मक नहीं, मिलने की निश्चयात्मकता लिये हुए है ।)

प्रणय (शाय के भीतर, घातु भाव से पैठिये कसा रक्खा है) —साध्य काल, तमोवृत्ति से प्रतिहत होकर रम्य है (तमोवृत्ति शब्द भी देखिये, इसके से मानी नहीं कि यहाँ शाम का अधेरा नहीं होता नहीं, तमवाली वृत्ति जो दुःखदा है वहाँ नहीं,) कारण नित्य ज्योत्स्नारूपिणी स्त्रियाँ (घर घर) विराज रही हैं । प्रदाप-पुरुष नित्यज्योत्स्ना ज्योति युजति या स युक्त हो कर प्रतिहत-तमोवृत्ति रम्य हैं । नित्य-ज्योत्स्ना ज्योति होने के कारण तमवृत्ति प्रतिहत है इसलिए प्रणय रम्य है ।

अधिक और क्या लियू गाप अच्छी तरह मनन कर लीजिये । और बहुत कुछ कहता पर सोचने और मिला लेने के लिये छोड़ दिया है । लिखियेगा क्या लगा । मुझे समय नहीं आधी संसृत भूल भी गया हूँ फिर भी और बड़ी बड़ी बातों का आविष्कार किया है मैंने जहाँ गीता की टीका में शङ्कर भी बम बान्त हैं । मैं इसलिए जवान नहीं खोलता कि हिन्दी में ही बूझा नहीं साफ कर पाया कौन फिर उधर जल उल्लेख । मुझे आशा है, आप इसे सहृदय भाव से देखेंगे और अपना राय १२ दिन के बाद भजेंगे । मैं इलाहाबाद जा रहा हूँ । यहाँ १०/१२ दिन रहेगा ।

मैं फिर लिखता हूँ आप अपनी माफ राय दीजियेगा । क्याकि मैं आपका लिख गहन रूप में दर्शना चाहता हूँ वह असाध्य नहीं । अशास्त्रीयता से ही मुझे पता चला है । भर इस अर्थ का मित्राश्रयता ता पूरा के सब समय लिखने की आवे-शाय आप लिखियेगा मित्रता है या नशा पुनः पुनः पर से यह सम्बन्ध भी लिख तरह रहता है । जो कालिय हस्त लीलासम्पत्तम भक्तुआ का बगल गुणर क्रम रखत हुए भक्तुसम्पत्त का घोषा दे जाने हैं वे बातों को घात ही देंगे, या । समुचित है । मैं काली में आपसे क्या या कि बात का बिगाड़ दिया है, पर मुझे माफ कर लियेगा ११ अब देखिये ।

१ एक शब्द मानसिक में मगय गायधन (प्रमाणों के पर) जाने गमन निगमन न मुन अरुन संसृत माण्ड्य के गमन जान म अभिमूढ किया

आप जब तक उठू न पड़ें, उठू के किसी शब्द के नीचे बिन्दी न लगायें। न बसा उच्चारण करें। अर्द्ध प्रगति बीजिय, बहुत पटना और बहुत आगे आना है। फिर और बातें लिखूंगा।

आपका
निराला

था। मैं उह टकटक देखने। लगा था तभी, विश्वाय की सँकरी गली में, हमार बीच से एक साँद निकल कर सीधे सरस्वती पाटक की ओर चला गया था।

उस दिन गीतगोविन्द की वनातपरक व्याख्या, कपूरस्तव, सौदम्यलहरी आदि के नाथ नाथ मेघदूत के उक्त श्लोक पर भी बहुत कुछ कहा सुना था। निराला टकसाल चल चुके थे, रात बड़ी टकमाली करत थ उमे रला डालन की हिम्मत वहाँ थी। फिर वह हीसंग अफजाई करनेवालो में भी अव्वल थे।

मैं निराला के शब्दा को ही दुहराए देता हूँ —

‘आलोचना साहित्य का मस्तिष्क है। अतः साहित्य के विकास का श्रेय अनेक अंश में इसे ही प्राप्त है। हृदय का महत्त्व देकर निकलने वाली कविता भी यदि विचार और शृङ्खला से सम्बद्ध नहीं, तो शंशय-मलाप की तरह भावोच्छ्वास मात्र है उससे साहित्य को कोई बड़ी प्राप्ति नहीं हो सकती। काव्य साहित्य के बड़े उग्र आलोचक ऐसा ही कहत हैं, और पहले भी कह चुके हैं। एक उदारण लाजिए —

हस्ते लीलापमलमलके धालकुदानुविद्ध
नीता लोघ्रप्रक्षवरजसा पाण्डुतामानने श्री
चूडापाश नयनुरवक खासण शिरीष
सौमते च त्वदुपगमज यत्र नोप वधूनाम्

(मेघदूते कालिदासस्य)

अर्थान् वहा अलका में वधुआ के हाथ में श्रीला-कमल रहता है कशो म कुन्द की नई कलियाँ। लोघ्र पुष्पा क पराग से उनक मुखो की श्री पाण्डुना लिए हुए है। उनके चूडापाश में नया कुरवक खोमा हुआ है सुन्दर काना में शिरीष और माँग में (ह मघ) तुम्हारे आगम से पदा हुआ कस्य पुष्प।

इस वचन में एकाणक हाथ में लीला कमल लिए, कशो में कुन्द की कलियाँ चुन, लोघ्र रज मुखों में लगाए, चूडापाश में नया कुरवक और काना में शिरीष खास और माँग पर कस्य लगाए हुए अलकापुरी की सुन्दर वधुएँ इष्टिगीचर होती हैं।

जो आलोचक नहीं वह इस पदय का अन्तमहत्त्व न समझेगा फूला से उज्ज्वल नारिया का विकच सौन्दर्य देख कर कालिदास को ध्य कवि, ध्य कवि बह कर बबल ध्यवाद देगा। उसे फूल ही से महाकवि कालिदास के हृदय के मित्रा समुक्त कण्ठवाधार मस्तिष्क—जिस पर यह कोमल कला टिकी हुई है—क्यापि अनुभूत न हागा। वह चोरेगा, जब आलोचक एकाएक पूछेगा क्यों भाई बुद ता हेमन्त ऋतु का फूल है वर्षा में वह खिलता ही नहीं, फिर महाकवि कालिदास ने मघ से जो आपाढ़ के पहले दिन रवाना होता है कैसे कण्ठ निया कि अलका की वधुए केशो में बुद की कलियाँ चुन रखती हैं ?

बबल हृदय को काव्य में महत्त्व देनेवाला वह मनुष्य तब कालिदास पर निश्चय ही दोषारोप करेगा। दोष एक ही नहीं लोभ्र जाड़े में कुरवक बसत में और गिरीष ग्रीष्म में गिलत हैं। फिर एक ही समय एक साथ इतने फल अन्ता की सु रियों को कम प्राप्त हो जाते हैं ? बबल कमल और बदम्य वर्षा में मिलत है।

जय तत्र किमी आलोचक का मुनाया हुआ उसरी समझ में आएगा, तब वह समझेगा कालिदास ने यहाँ मस्तिष्क से काम लिया है। कमल का यद्यपि बसतान में गिलना जारी हो जाता है तथापि जल पूरा शरद ऋतु में उमका पूरा विकास होता है इमल्ल के हिम से मुरगान से पहले। इसलिए महाकवि कालिदास वर्षा के बाद वाली शरद ऋतु से शीतलेश कर छाँटा ऋतुओं के पुन विगो में अन्ता की सगवनी यत्नों को भूषित करते हैं। शरद में हाथ में बसत कर इमान में कुरवी की कलियाँ गुंथ कर गिरीष में लोभ्र पुष्प की रज द्वारा उमका में कुरवक स्यांग कर ग्रीष्म में गिरीष और वर्षा में बबल लगा कर।

पुष्पा का तम दगिए, विनाना अच्छा है। इस प्रकार महाराजि के हृदय के माघ मस्तिष्क का परिषय मित्रने पर कविता कितनी गिल जाती है। कालिदास महाराजी यद्युभा पर एक माघ इतने पुष्पा का भार नहीं रखन, मौस्य इतने के इतने कोमल कवि हैं, एक ही पुष्प प्रति ऋतु में अन्ता की गोस्य से इतना परिष्क कि बबला का तन है। उद्गमना में स्पष्ट हो जाता है कि महाराजि ने पुष्पा का ताना को एक ही गन्ध-व्यय में माघ में दर्शित कर दर्शित किया है।

यदि यह आलोचना न की गई होती आलोचना न यह मौस्य न छाँटा हाता हो भाइ बबल-वद परिष्क एक ही माघ इतने पुष्पा का ताना के भार से अन्ता से बबला का परिष्क करे रहता।

यह महाराजि पुष्पाका काव्य के भी विभाग का कारण है। यही कालिदास का ही है। यदि महाराजि कवि परिष्क है त्रियम काव्य मौस्य और इतने है।

८

प्रिय जानकीवल्लभ जी,

एक लम्बा पत्र जिममे कालिदास के 'यत्रो मत्तभ्रमरमुखरा' वाले श्लोक का अपना अर्थ लिखा है, यहाँ आने के एक दिन पहले आपके पास भेजा था, लखनऊ से साथ 'सरोज स्मृति' मरी लम्बी कविता थी। पत्र आपको मिला होगा।

यद्यपि मैं उत्तर दस पत्र हूँ दिन ठहर कर लिखने के लिए लिखा है जब तक मैं लखनऊ लौटूँ, फिर भी आपकी राय जानने की इच्छा हो रही है कि उस श्लोक का वह अर्थ आपको जँचा या नहीं। लिखियगा।

मैं यहाँ दस दिन के करीब रहूँगा। प्रसन हूँ। एक फाम 'प्रभावती' का छपना बाकी था, लौटकर दोगा कितानें—सधी—प्रभावती—भेजूगा। यहाँ निरुपमा दे रहा हूँ। ३/४ महीने में यहाँ से भी दो पुस्तकें निकल जायेंगी।

१७ २ ३६

आपका
'निराला'

१ निराला की हस्तलिपि में वह उतनी बड़ी कविता और बड़ी लगती थी। विधि की विटम्बना ऐसी कि होस्टल में मैं एक बनजारे की ज़िदगी गुजारता था। उधर बचपना ऐसा कि देर गये नल्यू खरे बियी को भी ललक कर निराला के पत्र लिखलाया करता था। किसी की दुरभिसाधि को ताड जानवाली दूरदर्शिता कहाँ था? फिर क्या, एक दिन उसे पढ़ने-पढ़ते नीद आ गई और लड्य से न डूकनवाला को हाथ उसे उठा ले गया।

'सरोज स्मृति पर विद्वत्प्रवर थी दामोदर ठाकुर ने 'The ANIMA figure in the poetry of Nirala'—शीपक निबंध में अपना अभिमत यों प्रकाशित दिया है

" I have intentionally not spoken of a poem like सरोज स्मृति That would show the highest level at which per onal feeling and the classical imagination fuse in his poetry because one should speak of it singly The daughter image becomes an angelic guide a brief existence where the meaning shines forth from it But even in shorter, simpler less powerfully felt and less commandingly expressed poems, it is the union of traits found together only in the best poets that characterises Nirala's poetry

—The constant pursuit
Page, 52.

३ जनवरी, १९३१ को अल्मोडे से श्री मुमिदानन्दन पंत ने निराला को
ब्रजभाषा में लिखा था —

छमहु बंधु, अपराध !
रसन की कछु बान तुम्हें, प
हमें मनावन साथ ! !
ध्याध भयो तब रोष, मौन चिर
लागत शर मों जात,
मो मन को कुरङ्ग तुम समुसत,
प धह कोमल गाव !

डुबल मेरो मानव मन,
जग जीवन अगम, अगाध,
कौन स्नेह सों पार लगहै
मो लागि साँच असाध !
सुद हृदय को नारो रे रो,
अहकार भयो बाँध,
कसे मिलिहै प्रेम सिधु मे,
बहि बहि मुक्त, अबाध ।
तुम्हें मनावन बंधु ! पठाई
मृदु ब्रजवाला आज,
चतुर बतावत सब जग याको,
समुसत दूनी-बाज,
पाती पाइ तुम्हारी देहीं
याको आदर दान,
देखों, या जुग की राधा को
मिटै पाइहै मान ?

इमना उत्तर निराला न लखनऊ से ६ जनवरी, १९३१ का बंगला में दिया
था —
बंधु हे—

भालो बासी, भाली बासियाछो,
नूतन किछइ करो नाइ,
आमि मने-मन जयियाछि,
द्वारे तुमि आसियाछो ताई ।

सहियाछि आमि जतो थ्यया
 तोमाय वासिते गिया भालो,
 तोमार हृदये उठियाछे
 ततोइ होइया ताहा कालो ।
 आमि करि नाइ कृपणता
 तोमाय करिते सब दान
 जानियाछि यदिओ जीवने
 मोर चये तुमिइ महान ।
 तोमार नयने राखि आखी
 जीवनेर सुधा करि पान,
 छाडाये सकल दिक् सीमा
 तोमाते मिलाये जाबो प्राण ।
 पय जाहा जानि आमि, चीलि,
 आगुन द्विगुण मने जालो,
 जतोइ जलिबे देह मान
 ततोइ पाइबे तुमि जालो ।
 गाहिया उठिबे तव प्राण
 प्रभातेर आलोकेर गान,
 सकलेर जीवनेर घा ।
 तोमाते लभिबे जवसान ।

वधु

आमि एइ भाषाय प्रथम कविता लिखिया छिलाम,
 ताइ इहातेइ तोमार अभिनन्दन करिलाम ।

तोमार—

सूर्यकान्त ।

मैं उन स्त्रिया एक छात्रमाला था । इस स्तर के रूप और दम्भ का एक अनाम
 आतक तो छा जाता था मेरी मुकुमार मति पर, किन्तु मुझे यह उच्चता की
 प्रिय बहूत अच्छी नहीं लगती थी । मैं तब तक भवभूति और पण्डितराज के
 रूप को भी नहीं समझ सका था ।

गाने में सँभलने की कोशिश करूँगा ।' पर मत्स्य और सुन्दर रूप से प्रकट होता रहता है, यह एक उक्ति है, अतः 'तब प्रभु मोसम आन बनै है' मुझे अच्छा लगता है ।

रवीन्द्रनाथ की नकल बनू, मेरी इच्छा नहीं, मैं मैं हूँ सूय्यकान्त रवीन्द्रनाथ नहीं,—कान्त 'इन्द्र' और 'नाथ' की गुरुता चाहेगा ?

उही दिना आचार्य सनेही के 'सुकवि मे गोरखपुर बचहरो के किमी महेशप्रसाद मुख्तार रसिक' का छायावाद पर लिखा हुआ एक धारावाहिक लेख प्रकाशित हो रहा था । रसिक मुख्तार ने प० बनारसीदास चतुर्वेदीवाला रागता बख्तियार किया था । वह भी कविता नहीं समझते थे, आलोचना लिखकर अपने पाण्डित्य की बखिया ही उधेड़े जा रहे थे, कि तु निराला उसे नजर छदाज न कर सके । सनेही जी को पत्र लिखकर मना किया कि उस बकवास का प्रकाशन बंद हो । गधा घोडा नहीं हो सकता ।

इस मुहावरे पर मुख्तार साहब ने तिनककर निराला पर मानहानि का मुकदमा दायर करने की धमकी दी । सनेही जी के सुपुत्र प० मोहन प्यार भुवल न निराला को सूचित किया । निराला न जवाब म एक लम्बा-सा छत लिख भेजा । दोनों पत्र 'सुकवि मे प्रकाशित हुए थे ।

+

+

+

निराला को पत्र लिखते समय अवचेतन मे कुछ ऐसी ही पूर्वस्मृति की क्षीण रेखाएँ थी, फिर तुरत-तुरत 'पल्लव और पन पना था, आषाय चन्द्रबली पाण्डे प दो भक्त (गोरखपुर, आजमगढ के) छात्रों की कटूतियों से उत्तेजित होकर मैंने लिख दिया था कि लोग क्त हैं आप बहून कटु आलोचना लिखते हैं ।

१ मूर भीरा और चण्डीदास के कुछ पद उद्धृत कर मैंने पूछा था आप ऐस गान क्यों नहीं लिखते ? मैं उन दिनों सेया और भीनिमारय के गीत गुनगुनाता रहता था अज्ञानवश छिठाई कर बठा आपकी पत्न्या रवीन्द्रनाथ क समान क्यों नहीं है ?

१०

58, Nariyalwahi Gali,
Lucknow
17436

प्रिय जानकीवल्लभ जी,

आप पर मेरी पूरी नजर है। सखी और प्रभावती मेरे पास रखी हैं, पर मैं भेज नहीं सकता। क्योंकि कांग्रेस भर में मेरा अर्जित अथ खर्च हो गया है। आप आठ आने का टिकट भेजिये या मुझे बरतन भेजने के लिये लिखिये।

आपका
निराला

१ 'कला की रूपरेखा' नामक कहानी में इन्हीं दिनों की चर्चा है—

एक मन्थानी उम्र पतालीस के लगभग, भौर का रंग घामा मोटा तगड़ा, एक ञ्गोटी से किसी तरह लाज बचाय हुए उतने जाड़े में नगा बदन दौड़ा हुआ, निराला के पास आया और एक साँस में इतना कह गया कि वह कुछ न समझे। जब दूरी फूटी हिंदी में पूरे उच्छ्वास से वह फिर बोला तब मतलब उनकी समझ में आया कि वह हर तरह लाचार है, दिन तो किसी तरह धूप खाकर भांग खाकर पार कर देता है, पर रात काटे नहीं बटती। जाड़ा लगता है। और निराला अधिक विचार न कर सके अपनी एक मात्र मोठी चादा की चादर उतारकर उमर दे दी।

वही सन् ३६ के माच महीन में होने वाले कांग्रेस के ञ्खनऊ वाले अधिवेशन का अवसर पर स्वयंसेवकों में भरती हो गया था।

काँग्रेस में ही गई। निराला शाम को कसर बाग में टहल रहे थे, तभी वह तेज बंदम आता देख पड़ा, निराला घड़े हो गए। पास आकर उसने कहा

अब गरमी बहुत पन्ने लगी है। देश जाना चाहता हूँ। रेल का किराया कहीं मिलेगा? पैरल जाना चाहता हूँ।

निराला ने बीच में बात काटकर कहा—

क्या कांग्रेस के लाग आपकी इतनी भी मदद नहीं कर सकते।'

उमर कहा—'नहीं कांग्रेस का यह नियम नहीं है। मैं मियाँ था। मुझे यह उत्तर मिला है। खर में भीख मागता खाता पैरल चला जाऊँगा। पर गरमी बदन पडनी है पैरल जाते हैं अगर एक जोड़ी चप्पल आप ले दें।'

निराला पर जैसे बज्रपात हुआ। वह लज्जा में बही गड़ गए। तब उनके पास कबल छह में थे। उमर चप्पल नहीं लिए जा सकते थे। उन्होंने अपने चप्पल देना जीण ही गए थे। ञ्जित होकर कहा

आप मुझे क्षमा करें इस समय मेरे पास पैस नहीं है।

११

58, Narayalwali Gali

Lucknow

30 4 6

प्रिय जानकीवल्लभ जी,

काशी के पते पर सखी और प्रभावती आपको मिल चुकी होंगी। छाप की भूलें हुई हैं खास तौर से प्रभावती में। 'निरपमा छप रही है। गीतिका' और 'निरपमा' गरमियों की छुट्टी भर में प्रकाशित हो जायेंगी। कितारें आप को कैसी लगीं लिखियेगा स्पष्ट मेरी दूसरी रचनाओं के मुकाबल।

आपका गीत माधुरी के मुखपृष्ठ पर निकला है आपने देखा होगा।

आप पर मैं लेख लिखना चाहता हूँ 'काकली का सम्बन्ध ले कर और निकालना भी चूकि माधुरी में है इसलिये अपने इस लेख (मेरे गीत और कला) के निकल जाने पर देना उचित समझता हूँ। माधुरी से प्रकाशन ज्यादा अच्छा होगा।

'सुधा को मैं आपका लेख-कविताएँ देता पर सुधा-सम्पादक कुछ दूररी तरह के आदमी हैं फिर मेरी घनिष्ठता भी अब बसी नहीं रही। फिर भी मैं पूछूंगा। वे चाहते हैं लेखक या कवि स्वयं उनसे पत्र व्यवहार कर। मैं आपका जिक्र उनसे करूंगा। आपको सूचित करने पर आप स्वयं उन्हें लिखियेगा।

कविता का sense में मेरा वही मतलब था जो आपका है। Personified कविता से मेरा मतलब है वहा। यद्यपि आपका व्याकरण वह नया नाम से सूचित करता है कि वाक्य को उस form की जरूरत हुई और यह ठीक भी है अब भी हम कविता-तत्त्व लिखते समय मालूम होता है फिर भी मेरा खयाल है कि नया पत्रण में अब कवितात्व नहीं चल रहा, बगला साहित्य से तो इसका बहिष्कार हो ही चुका है मुमकिन नवीपवाला ने 'याय से मरुत में भी किया हो मैं ठीक नहीं कह सक्ता आप पना लगाइयेगा।

मैंने (जयन्त्रक) —

उरमि मुरारंरूपन्तिहार घन इव तरललावे

तन्त्रिण पीन रतिविपरीत राजमि मुहुरतविपाक —को त्रिय अथ में लगा

लिखा है और फिर वेदांततत्त्व में इसका घटाव । बात यह कि समय नहीं मिलता । कितना काम पढा हुआ है ! क्या-क्या किया जाय !

मैंने फिर मे सस्कृत अंग्रेजी पढ़ना शुरू किया है अगर तार बँधा रहे ।'

अपने स्वास्थ्य-समाचार दीजिएगा । और अगर मजा देखना ही तो 'महतो' (प० मोहनलाल महतो 'वियोगी') से मिलकर कहियेगा कि निराला जी आप का अपना चेला कहने से, कहते से कि दिल्ली में उन्होंने मुझसे अपनी कविता शुद्ध कराई थी । देखिये फिर क्या रूप देखने को मिलता है ।

आपका
निराला

१ 'नीलिका बनारस के सरस्वती प्रेस में छप रही थी । निराला जी नयाबगज महल्ले में प० वाचस्पति पाठक के साथ रह रहे थे । मैं प्राय प्रति दिन आठ-दस घंटे साथ रहता था । उन दिनों 'बन्नी-मन्दिरम' नामक एक राष्ट्रीय छण्ड-काव्य लिख रहा था । सुनाता, तो कहते मैं फिर सस्कृत पढ़ूँगा । एक दिन हम सबके साथ प्रो० राम अवध द्विवेदी के यहाँ गए तो उनसे 'मकवेय' क कुछ आरम्भिक पृष्ठ पढ़ डाले । द्विवेदी जी के कमरे में निराला का एक अत्यन्त सुन्दर चित्र टंगा हुआ था । चाय-जम्पा और काव्यपाठ के बाद जो वहाँ से लौटे तो फिर कभी नहीं गए । सस्कृत का भी लगभग यही हाल रहा ।

२ 'साहित्यिक सन्निपात' वाले हुडदग में वियोगी जी भी प० बनारसी दाम धनुषेदी के साथ मठाल निबाल रहे थे । 'छ' जोड़कर निराला की कृति को वह भी साँप का मंत्र सिद्ध करने पर तुले हुए थे । उन्होंने उस जमाने में तो 'गण' का नब" पुरस्कार भी घोषित किया था । यदि कोई 'साहित्य का फूल' अपने ही मूल पर" नामक निराला के निबन्ध का अर्थ उन्हें समझा देता तो उसे वह नब" इनाम मिल जाता । एक दफा मेरी पत्नी ने मुझे उकसाया भी था अगर दुष्ट मित्रों ने मना कर लिया कि मारी मेहनत मिट्टी में मिल जायगी, वह समझन से इन्कार कर देंगे, प्रोपेनैण्डिस्ट बनारसीदास जी नाम का द्विद्वारा न पिटे होने से, तुम्हारी 'भाषा भणिति' को 'सधन्यवाद' वापस कर देंगे ।

१२

58 Nariyalwali Gali

Lucknow

11 5 36

6 P M

प्रिय जानकीवल्लभ जी,

आपका पत्र मिला। प्रभावती पर आपकी जो राय है वह मेरी भी है। कुछ दूसरे मित्रों ने भी यही सम्मति दी है। पर कुछ की राय है वह अप्सरा' से बढ़कर है। ये लोग ऊँचे विद्वान हैं। जान मिस्टर मालवीय जो कायकुञ्ज कालेज के अध्यापक है यहाँ प्रभावती की बड़ी तारीफ करते थे और अप्सरा से बढ़कर बताया।

निरूपमा बड़ी सीधी भाषा के भीतर से है। जिन्होंने पाण्डुलिपि पढ़ी है व सब (अभी तो) प्रभावती से बढ़कर कहते हैं। मेरा विचार है अभी रोचकता में अप्सरा ही सबसे अच्छी है।

इस बार फिर आपकी कविता माधुरी के मुखपृष्ठ पर है। बढ़ाई।

पन्ना जी पर अंगरेजी का प्रभाव पड़ा है जो लोग कहते हैं उन्होंने अंगरेजी में सिर्फ परीक्षाएँ पान की है।'

१ मैं अपने ही सपना की सज पर खुरटि लेने का आदी था। जगन पर ताजगी और तदुम्स्ती का गुमान होन लगता। किसी के झँपौडने पर आँखें न खुलती तो किसी न घूल झोकन पर झिलमिलाती भी न थी।

दरअमल यह बात लोगो की कही हुई न थी। मेरी ही ओंधी खोपनी की उपज थी। ससृष्टवाली शली से मैंन 'गोल्डन टेंजरी लगभग घोट डाली थी। पत जी की एक कविता पडी

बाँसों का झुरमुट,
सध्या का झुटपुट,
वह बोज रही बिडिया—
टी० बी० टी० टुट-टुट !

तो मुझे T Nash की—

Spring the sweet spring is the year s pleasant
Then blooms each thing then maids dance in a ring
Cold doth not sting the pretty birds do sing
Cuckoo jug jug pu we to witta woo !

निराला के पत्र

मुझे लोग नहीं मानते, इनीलिय इम साहित्य मे मैं आया हूँ। जिहें मानते है, वे साहित्यिक होने तो मेरे आने की जरूरत न होती।'

बलाबाला लेख जून मे निकलेगा। विरोध फिर। आप प्रमन हागे।

आपका
निराला

याद आ गई। फिर शेक्सपियर के 'क्वटर' की पत्तियाँ—
Tuwhoo!

Tuwhul! towhoo!—माथे मे लरजने लगी, और मैंने 'गेगो' के नाम पर अपना ही पुलकित कुतूहल पत्र मे प्रकट कर दिया और कहना न होगा उसी घूमिल बह्ति मे से निराला का यह कपूर सौरभ उडा था।

१ मग '२२' मे प्रकाशित 'अनामिका' ने हिंदी ससार का पहला विनापन निकला था क्योंकि इसके प्रतिभाशाली लेखक खनीवोली के कर्मियों की तरह सनातन भेडियाप्रसान के पीछे नहीं पडे हैं बल्कि उटाने अपने लिए एक ऐसा मुक्त माग निश्चित किया है जिस पर बेरल वही चल सकता है जो स्वभावतः भावुक कवि है और जिनके मुख से अनवरत धारावाहिक रूप से ललित भावमयी साय पाठको को भी कल्पना की अगाध तरङ्गिणी मे दरोच नेता है।

हिंदी साहित्य ससार के प्रसिद्ध महारथी पण्डित महाश्रीप्रसाद जी द्विवेदी और साहित्याचार्य पण्डित चन्द्रशेखर शान्सी—ऐसे विद्वानों की राय मे यह पुस्तक हिंदी मे युगांतर उपस्थित करनेवाली है।

—मतवाला प्रथम वप, प्रथम अंक
२६ अगस्त '२३

+ + +

सन् '२४' मे मुझी नवजादिक लान जो श्रीवास्तव ने लिखा था 'निराला जी की कविताएँ' उम हिंदी की सम्पत्ति हैं जो हिंदी राष्ट्रभाषा होगी।

'मैं पढ़ते भी लिख चुका हूँ और थक भी लिखना हूँ कि निराला जी किसी समाज या किसी प्रांत के कवि नहीं' वे राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रथम महानवि हैं।

—मतवाला, ६ अगस्त '२४
१० ६७४ ६५

58, Narayalwali Gali
Lucknow
3 6 36

प्रिय जानकीबल्लभ जी,

मैं शीघ्र आपको नहीं लिख सका। आपने गीत पसन्द आये। दो-तीन अधिक। आज बीणा सम्पादक को भेजता हूँ।

आप मेरी प्रसिद्धि की ओर ध्यान न दें। हिन्दी वाले जसा समझते हैं लिखते हैं। केवल तारीफ से कुछ नहीं होता साथ समझ चाहिये।

मैं जल्द प्रयाग जा रहा हूँ। कब लौटूंगा, ठीक नहीं। 'निष्पत्ता-गीतिका' के प्रकाशन से सम्बन्ध है। बाकी पुस्तकें मैं लिख पाया तो समय-असमय निकल जाएंगी।

सब तरह विपत्तियाँ हैं—यत्र गच्छति भाग्यरहितस्तत्रव। आदमी यथा शक्ति लड़ता है, मैं भी जीने के लिए लड़ता हूँ। साहित्य अपना रास्ता आप निवाल लेता है। मैं उसका एक बहुत ही छोटा करण-नारण हूँ। अब उसका काम आगे आप लोग करेंगे।

अगर मई का 'भारत' पूरा देखने को मिले तो देखिये। मेरी पत्त जी की लिखी विवेचनाएँ हैं।'

१ मैं समझता हूँ पन्त का प्रथम कवि परिचय निराला ने ही लिखा था। सन् २४ के वसन्त में 'राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रथम महाकवि' निराला पन्त के लिए लिखते हैं

'हिन्दी में जब से छोटी बोली की कविता का प्रचार हुआ तब से आज तक उसमें स्वाभाविक कवि का अभाव ही था। जो पौधा लगाया गया था उसे कुसुमित करने के लिए अब तक के कवियों को सीचने का श्रेय जरूर दिया जा सकता है परन्तु वे उस पौधे के माली ही हैं कुसुम नहीं।

'पौधे में फूल एकाएक नहीं लग जाते वे समय होने पर ही आते हैं। छोटी बोली की जिस कविता का प्रचार किया गया था जिसके प्रचारको और कवियों को जितनी ही गालियाँ खानी पड़ी थीं, उसका स्वाभाविक कवि अब इतने दिनों बाद आया है और हिन्दी का यह गौरव कुसुम श्री सुमित्रानन्दन पन्त है।'

—मतवाला ३ मई २४

आपने अपने गीत में कही विषमता दिखाई है, स्मरण आता है। असङ्गति, अधिकादि जो हो, मैंने समझा, ध्यान नहीं दिया। और कुशल है। इति।

आपका
निराला

१

बासर विभावरी

जीवन की लहरों से घिर घिर
तिरती स्वण-तरी !

निज निश्वास—समीरण से क्या भीति ?
जगत्-जलधि परिमित परिचित तल-गीति,
क्यों ऐसी उत्कट उस तट से प्रीति ?—
बढती ही जाती,
अप्रिम-दुख उमुख,
मुख सिहरी !
बासर विभावरी ! !

पहुँच सकेपो क्यों न लक्ष्य पर ? —पार
निमल जीवन ! कहीं भवर ? —मत्तपार ?
अपनापन कि सुमन-सौरभ सभार !

तिरते को क्या डर

श्यामल जलराशि कहीं गहरी !
बासर विभावरी !

१४

C/o Pandit Vachaspati Pathak Esqr
Nawabganj
Benaras City
19 6 36

प्रिय जानकीवल्लभ जी

वीणा सम्पादन के पत्र से लखनऊ में ही आपकी यविनाआ^१ के छपने की मजूरी के साथ साथ मालूम हुआ कि उहाने आपको यथालिखित पत्र भेज कर धन्यवाद दिया है।

मैं आजकल काशी ऊपर के पते पर हूँ। गीतिका छप रही है सरस्वती प्रेस में भारती भण्डार द्वारा निरूपमा भी लीडर प्रेस में। १५ २० टिन रहेंगा।

चाँद^१ में अपना लेख देखा। खुशी हुई। आपको माधुरी^१ में मेरा दूसरा जग मेरे गीत जीर कला^१ का कसा लगा, लिखियगा। और सब कुशल है। जल्दी में हूँ।

आपका
निराला

१ इतना सुख, मुँह खोल न सकता।

जब्द-अब्द से सोच रहा पर—

एक शब्द भी बोल न सकता।

बेतुक कौसुक मेरा

सति में उसकी अनुसति करता आया

इतना पास रहा

फहा गया मैं उसकी ही जीवित छाया,

पय भ्रम क्या, उसके पद त्रम से—

अलग तनिक भी डोल न सकता।

कब तक धरे धरोहर रहता !

दिया उसे अपना अपनापन,

सौमित्र गति विधि, शून्य मनोरथ

मेरा गत गौरव, नीरव मन,

इतना लघु जीवन, कोई भी—

कभी इसे अब तोल न सकता !

× × ×

चल रहे साँस के तीक्ष्ण तीर !

क्या सोच काल को ? —बलक का—

है अमल कमल-फोमल शरीर !

कसा पुनीत यह था अतीत,

जो भी छल चलता बना ओह !

कसा नीरस यह बतमान,

कसा भविष्य का मधुर मोह !

पह-बह जाती क्या कागो मे—

कलिका के, —पतझर की समोर ?

चल रहे साँस के तीक्ष्ण तीर !

तपती मर भूमि तवा सी है,

तपने दो, मन नम-व्यामी है,

तनु तन भी यदि टूटी कुटीर,—

रहने दो, प्राण प्रवासी है !

हो उदा उदय, ढलने को तो—

नक्षत्र तभी से है अधोर !

१५

C/o Vachaspati Pathak Esqr
The Leader Press
Allahabad
7 11 36

प्रिय आचार्य जानकीवल्लभ,

मुझे उत्तर देते हुए देर हो गई। पहले भी मैं बड़ी तलाश करता रहा। प्रतिज्ञानुसार काशी ५/१० को जा रहा था, पर रोक दिया गया। कु० चंद्र प्रकाश को चिट्ठी लिखी उत्तर में तुम्हारा सवाद नहीं। उनका घर से पत्र मिला लिखा था, काशी छोड़ने के कई रोज पहले से मैंने जानकीवल्लभ जी को नहीं देखा। फिर मि० शर्मा (डा० रामविलास शर्मा) का पत्र मिला। लिखा था

जानकीवल्लभ जी नारियल वाली गली से यहाँ आये 'राम की शक्तिपूजा' पढ़कर प्रसन्न हुए' पञ्जाव गये थे काशी जा रहे हैं।

मुझे खुशी हुई पर काशी का नया रूम नम्बर भूल गया था। पुन छुट्टी के दिन हैं, घर जाना सम्भव है सोचकर सोचता ही रहा, फिर आपका पत्र मिला।

गीतिका कल तयार हो जायगी, निरूपमा हो चुकी है। कुवर चंद्रप्रकाश दीपावली तक यहाँ आने वाले हैं। उनके हाथ दोनों पुस्तकें भेज दूंगा।

आपके बदीमन्दिरम को (छपा हुआ) देखने की प्रबल इच्छा है। चार वाक्य सस्कृत में लिखते मुझे दिव्यत न होगी।^१

१ कुवर चंद्रप्रकाश के डेरे में, मेरे सामने काशी में ही 'राम की शक्ति पूजा' का पूर्वोक्त लिखा गया था।

० बदीमन्दिरम् की प्रस्तावना लिखवाकर मैं यह चमत्कार प्रदर्शित करना चाहता था कि सस्कृत भाषा और साहित्य में भी निराला की कितनी गहरी पैठ है। काकली में तो भारत भर के महामहोपाध्यायों की ऊँची से ऊँची सम्मतियाँ सकलित थी ही। महाकवि निराला लिखित प्रस्तावना उन्हें भी चौंकाती।

निराला के पत्र

'विशङ्कु' वाली दशा खूब रही। पर जब आप हठी नहीं, तब आपके लिए वह डर भी न होगा—स्वर्ग ही पृथ्वी पर उतरेगा।'

मैं सचेष्ट हूँ। केवल आपके हिन्दी गीत मुझे यहाँ नहीं मिल रहे। आप कष्ट का विचार न कर कुछ भेज दीजिये, जल्द।

अप्रेञ्जी की पढाई धीरे धीरे कीजिये। स्वास्थ्य पहले है।

आपका

निराला

१ गम्यन से हिन्दी में आकर अपने सुतले प्रयागों से सतुष्ट न था।
डरना या बहो गुरभारती भी बेगुरी न हो जाए।

१६

C/o Pdt Vachaspati Pathak Esqr
The Leader Press
Allahabad

12 1 37

प्रिय तरुण आचार्य

आपका पत्र मिला । 'सम्राट' पर वाली कविता भीरो की तरह आपको भी अच्छी लगी । आपन सस्कृत की रूढ़ से ठीक पकड़ पकड़ी है—स्त्रीणा स्पर्शात् प्रियङ्गुर्विकसति ।^१—और वह भी, जिसके लिए 'प्रियङ्गु' को कामाग्रो से बन्द किया है ।

कविता तो मैंने यो ही एक दिन लिख डाली सम्राट के गद्दी छोड़न स प्रसन होकर ।

इधर काम करना बन्द कर दिया है । पर की अवस्था उत्तरोत्तर खराब होती जा रही थी ।^२ अब ३४ दिन से एक दवा अच्छी मिली है काफी फायदा हुआ है । आशा है ४० दिन के सवन से अच्छा हो जाऊगा । अपनी व्याधि के कारण ही मैं अभी तक आपकी पुस्तक की आलोचना नहीं लिख सका । जी नहीं होता ।

१ स्त्रीणा स्पर्शात् प्रियङ्गुर्विकसति धकुल सीधुगण्डूषसेकात्
पादाघातादशोकस्तिलकपुरवकी वीक्षणालिङ्गनाभ्याम्
सन्दारो नमश्चाक्यात् पटु मद्बुहसनाच्चम्पको वज्रवातात्
क्षुतो गीतागमेश्विकसति च पुरो नतनात् कणिकार ।

२ निराला साहित्य के पुराने मरीज थे ।

निराला के पत्र

माधुरी वाली बात तो जो हुई हो गई, आप अपने स्वास्थ्य की ओर पहले देखिये। मैं बराबर आपका आपकी तदुस्ती की ओर ध्यान दिलाता रहा हूँ। अंगरेजी बंगला के लिए बहुत गमय है। बेफिक्र होकर रहिये और इलाज कीजिये।

मैं एन हफन के लिए लखनऊ जा रहा हूँ कविसम्मेलन। प्रकाशन की वहाँ बातचीत करूंगा—अल्फा आदि की। यहाँ प्रवचो का सप्रह जहा तक जा नकंगा, जायगा। इति।

आपका

निराला

१ 'बारवाँ वाले भुवनेश्वर ने निराला पर बहुत कठोर लिखा था। 'बन म निराला की तुलना की थी। मुहंतोड जवार देन के लिए मुझे 'बन' पढ़ना ही था। उधर १ = ३६ को निराला अपनी पत्नी हुई 'शोत्री-प्रभावली' अनि रञ्जित वाचिब आशसाआ समन भेंट कर गए थे Presented to Sri Janakiallabha Sahityacharya Shastri by Nirala/1 8 36 लिखकर।

मस्टून के गहनम समी तानाहितर ने अलामा में घोर परिश्रम के नाय यह मन भी पढ़ना रट्टा था। बीमार होना गतिमी था।

१७

C/o Pdt Vachaspati Pathak Esqr

The Leader Press

Allahabad

9 2 37

प्रिय जानकीवल्लभ जी,

कुछ देर से उत्तर दे रहा हूँ। लखनऊ तो वास्तव में जाना ही नहीं चाहता था। ५० नददुलारे जी ने बुलाया था फिर कविसम्मेलन का आमन्त्रण आया। कुछ प्रदर्शनी देखने का लोभ भी था।^१ इसलिए चला गया। पर फिर भी १०१) सम्मेलनवालों से लेने की बात लिखी थी। यह भी पेशगी। अपनी असमयता प्रकट करते हुए, आदमी भेजकर, यही उहोने २५) तिलाय और केवल एक रोज दस मिनट पढ़ने के लिए प्रायना की। इस तरह मैं गया। और दूसरे दिन पाँच मिनट दो कविताएँ पढ़ी। असली बात, प्रदर्शनी देखना था। वहाँ १५) फिर दुलारेलाल जी से लिया था। खच इस तरह पूरा हुआ।

आपका पत्र खच होगा इस विचार से नहीं लिखा। कुवर चन्द्रप्रकाशजी को खच देने के लिए लिखकर आमन्त्रित करने भी शायद उन लोगों ने खच नहीं दिया पढ़ने के लिए भी नहीं पूछा कारण भगवान जानें।

मैं तो दलच्युत होकर दूसरी जगह एक विद्यार्थी के वहाँ रहा था। पुन लखनऊ के मित्र मुझ प्रतिदिन दावत दे रहे थे मरे साथियों का मरे साथ दावत में शरीक होना अपनी अब तक की आदत छोड़ना या जान पर खेलना था।

आपके स्वास्थ्य के समाचार से प्रसन्न हुआ। गेप फिर। अभी भी मैं नय जीवन से लिखना शुरू नहीं किया। पूरा पता लिखा करें।

आपका

निराला

१ प्रमा जी न भी यही आखिरी मला दखा था इस मायापुरी का।
फिर तो—

Forgot the cry of gulls and the deep sea swell

And the profit and loss

A current under sea

Picked his bones in whispers

As he rose and fell

He passed the stages of his age and youth

Entering the whirlpool

—T S Eliot

१८

११२, मकबूल गज, लखनऊ

२४ ३ ३७

प्रिय आचार्य्य जानकीवल्लभ !

प्राप्त प्रियपत्र तव । समधिगतारब्ध सदशा । प्रयागादद्यवागताऽह्नि
प्राप्त पत्र । सत्यं यत्लिखितं त्वया, परंतु, गतेऽपि प्रतिकूलता कार्थ्ये कारणे
वा कस्मिंश्चित् न विरोधोऽभूना कथ्यते । नैतद् दृष्टिमात्रमपि कस्यचित् ।
प्रवाशांतरमेव दशतस्यालोचनस्य च ।

सर्वे पुरो गच्छन्ति, मया, सवन्नास्ति नवीनता । तथापि, जानामि, जना
परिहसति कमप्युद्बुधवाहि सागरपारकामिनम् ।

लिख यथा यदिच्छसि साधुचरितं स्वात्त सुखाय स्वच्छन्दतया ।

गोरक्षपुरे कविजन म्यापिते ह्यस्माकं हिंदीनवयुगसङ्घे समागच्छ । पठ
'भारत' मम लेखम् प्रकाशिते ।

स्वस्योऽस्मि । चिन्तयाम्यन्तगतमुख साहित्यम् । इति शम् ।'

तव

सुख्यवात्

पता नही, बिननी गलतिया
हुइ । फिर विस्तत लिखगा ।

—नि०

१ कशोर कुतूहलवश मैं उन्हें भिन्न भिन्न भाषाओं में पत्र लिखा करता था । यह मेरे सफ्टन में लिखे हुए पत्र का उत्तर है । मेरी बँगला उन्हें कभी न जवो एक खाटी बंगाली की तरह उन्होंने हमेशा मेरे बँगला पत्रों का हिंदी में ही उत्तर दिया ।

मरे खुरदुरे झोंदरे को बेवज एक बार चौड़ी भुँडेर की रोजनी की थोट लगी थी । श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित पर उन्होंने एक बँगला-कविता लिखी थी । उन लिनो दारागज के पण्डेवाले कच मकान में रहते थे । मुझसे उस लिख लेन को कहा । वह टहल-टहल कर बोलते गए मैं उनकी लंबी दाँट क उग्ये हुए साए में मुझे बँधम्पापन की तरह अपन ही मुच्छ-मुच्छ बंगला ने पोंगने में दुबरा हुआ चगुगुमा बगाधारा में, बगैर चोज हिलाए, जल्दी जल्दी लिखना रहा कि लिखावट को कचो गद्य से लिख कर जस उतोंन कपय कर कपय छीन ली थीर अपने सघे हाथ से अन्तिम तीन पक्तियाँ लिख डाली । यद्वाबमुनी हस्तलिपियों की वह कविता-भारसवती अभी तक मरे पास गुप्त है ।

डल्मऊ, रायबरेली
२७ ५ २७

प्रिय जानकीवल्लभ जी

मैं फिर दीघ काल तक आपको नहीं लिख सका। मेरा पर मुझे बहुत विपद्ग्रस्त किये हुए है।

एक रोज माधुरी आफिस गया था, आपकी आलोचना स्वीकृत हो गई थी, मुझे पाण्डेय जी ने पढ़ने के लिय दी थी सरसरी निगाह मैंने उसे देख लिया। शायद उसे वे एक ही बार में छापेंगे।

आलोचना आपकी निष्पक्ष तो है पर मैं ऐसी प्रशंसा नहीं चाहता न ऐसी उदारता मुझे प्रिय है। इससे तो पत्र जी क वे प्रशंसक मुझे भले मालूम देते हैं, जिन्हें पत्र जी के सिवा हिंदी में कवि ही नहीं नजर आता।

मैं जिस कला कहता हूँ उसका आपने झिंक नहीं किया।^१ फिर भा मैं आपके आलोचक का अदब करता हू। साथ ही एक मित्र की हैसियत से सलाह देता हूँ सत्य न घट कर है, न बढ़ कर।

आप पर कालिदास का जो रंग है वह मेरी धारा का बाधक है, मुझे ऐसा जान पड़ता है। जिसे मैं दुबलता मानता हूँ वह आप लोगों की निगाह में सौंदर्य बन जाता है।

मैं जानता हूँ आप बुरा न मानेंगे। मैं समुराल म हू। लिखिये — प्रेमा होटल अभीताबाद लखनऊ।

एक जगह इतिहास जय भ्रम मैंने ठोक कर दिया है।

—निराला

१ मैं निराला की मायताओं को आधार मान कर नहीं लिख सकता था। मेरे उस विशाल लेख का एक अकिञ्चन ऐतिहासिक महत्त्व जो प्राप्त होने वाला था। तब तक उस आकार प्रकार का कोई भी लेख निराला पर कहीं निकला था? निराला की माय कला ऐसे सौ सफे क प्रबंध का लेखन महज बीस साल का था और वह हिंदी में अभी बस साल डेढ़ साठ पहले से लिखने लगा था। अभी उमकी दृष्टि अधिक-स-अधिक तुलनाओं तक ही चली थी। उस कवींद्र रवींद्र की अच्युत सरसी-तीर की विजयिनी पढ़ते समय—

Beauty sat bathing by a spring
Where fairest shades did hid her
The winds blew calm the birds sing
The cool streams ran beside her

—Tony

की माँ आने लगती थी; निराला का कला या मोर वह एम आँसू था—

साह-चरित मनि गुन-मन जसे ।

प्रेमा होटल, अमीनाबाद

लखनऊ

२३ ६ ३७

प्रिय जानकीवल्लभ जी

आपका मधुर पत्र पढ़ा। आपने लिखने का ढंग बढ़ा अच्छा है। आप ही लोग हिंदी के भविष्य विद्वान हैं, आपको बनादूत करूँ मेरा ऐसा उद्देश्य नहीं था, मैंने जो कुछ भी लिखा, सीधे ढँग से लिखा।

कालिदास के प्रति आपकी जो धारणा है उस पर मुझे विश्वास है। किसी को समझने-न समझने का गव और विनय भी कुछ नहीं, समझ की सनद तो आपके पास ऊँची है ही।^१ इस परीक्षा में मैं तो समयदारों में बहुत पीछे हूँ।

मैं कल यहाँ आया और आपका आया हुआ पत्र पढ़ा। आज माधुरी-आफिस गया था। पाण्डेय जी नहीं मिले। मेरी समझ में उसे जाने दें आप, जसा लिखा है। अन्तिम परिच्छेद का मुझे स्मरण है। आवाज कमजोर है इसलिए मधुर है।

मैं एक तरह अच्छा हूँ। फिर से कलम उठाया है। दो गीत सुधा' में निकले हैं मे-न-जून की सख्याओं में।

'सुकुल की घोड़ी' एक कहानी दी है कुछ वैसी नहीं बन पनी, पर कुछ

१ जान क्यो निराला ही नहीं, प्रसाद जी भी कालिदास से खिचते थे। उन्हें भारवि पसंद थे, इन्हें थीहप। अब तो कोई उपाय नहीं निराला ने मरा लेख खो दिया, वह छपा होना तो निराला के तिनकने का रहस्य मालूम हो जाता। मुझे अब तक ऐसा कोई न मिला जो अपना तत्र-भ्रम से मेरे सर पर चढ़ कालिदास के अमृतगरल को उतार दे। मैं कालिदास को भारत का न भूतों न भविष्यति' कवि मानता हूँ।

अस पसन्द आयेंगे आपको । आपका गीत बड़ा भावपूर्ण है ।^१ मैं 'सुधा' सम्पादक को दगा ।

मैं अभी तक मानसिक बल नहीं प्राप्त कर सका पर मैं जसस्कृत नहीं ।
देखिये ।

सविनोप फिर ।

आपका

निराला

२ आँखें ही तो हैं बरौ हुई,
सूने प्राणों में आ जा रे !
गिरियो से घिरा हुआ, निजन,
मेरा निष्फल, जड, जीवन बन,
इसमें मैं नित रोता रहता,
तू एक बार तो गा जा रे !
कुहरा है मेरा अंधरा है,
पर जब यह भी घर तेरा है,
बया रत्नदीप ? मिट्टी का ही
दीपक तो एक जला जा रे !

प्रिय जानकीवल्लभ जी,

आपका पत्र हाटल में मिला था। मैं इधर ६० दिन समुगल रहा, एक महीने पहले तक। हीटल में आया हुआ आपका पत्र आकर प्राप्त किया था। आपका आधा लेख माधुरी में छप गया है। कहीं-कहीं कुछ अशुद्ध छपा है। मैंने सिर्फ 'मोगल दल् हरहर' का अर्थ सीधा सीधा लिख दिया है। बाकी कुछ बना बिगड़ा होगा तो उसके लिये पाण्डय जी उत्तरदायी होंगे। माधुरी ३४ दिन में निकल जायगी। आधा लेख अगले महीने में छपेगा। आपका उपसहार भी मैंने छिटा दिया है। आपके गीतों के लिये मुधा-सम्पादक से पूछा था। उन्होंने छापने के लिये कहा है। मैंने अभी दिया नहीं। मकान बदलते वक्त अगर ल आया हूँ याद है कि ले आया हूँ, तो अवश्य उन्हें भेज दूंगा। प० रामविलास जी इस मकान से गये, मैं आया। और सब कुशल है।

वनबला' का प्रूफ भेजता हूँ माय।

१ म स्वर हूँ, तू है शब्दकार !

सूखे आसू का मलिन दाग म,

तू सुन्दर, सुकुमार प्यार !

तेरे विपोग से, गिच्छुडन से—

है बना विश्व यह दशममान,

इसलिए तो यहाँ तडप टीस—

उच्छ्वास विकल हूँ सकल प्राण !

म यदु अनुभव वञ्चिन जग का,

तू मधुर यल्प बल्पनाघार !

साँसों से कसे कसे डर में

उमड़ो सुरसरिरी से मुक्ति व्यथ्य

जीवन के उडते क्षण से खग

मुड मुड कर बहते मम कथा

कथा कहें—महीं म तो कुछ भी,

पर तू भी निगूण निराकार !

गीत

(कवि नद की उक्ति)

पय पर मेरा जीवन भर दो ।

बादल हूँ अनन्त अम्बर क,

बरस सलिल गति उर्मिल कर दो ।

गीत

बादल, गरजो !

घेर घेर घोर गगन धाराधर ओ !

ललित-ललित बाले धुँधराते

बाल कल्पना के से पाले

तप्त धरा, जल से फिर शीतल कर दो—

बादल गरजो !

यह गीत माधुरी में गलत छपा है। 'बाल-कल्पना के से हो गया है' ।।
 अन्त में 'बादल गरजो की जगह मैंने ही 'धाराधर जो' कर दिया था ।'

२ सन् ३७ की बरसात के ये ऋचाओं से रचे हुए गीत ईलियट की याद दिलाते हैं

So here I am in the middle way having had twenty years
 Trying to learn to use words, and every attempt
 Is a wholly new start

कौन विश्वास करेगा सन २३ तक छपने वाले अवश्य किसी भी कविता
 पुस्तक में असकलित ये गीत भी कभी इसी महान कलाकार की कलम से
 निकले थे—

गये रूप पहचान !

सुनी राष्ट्रभाषा की जब से मध्य मनोहर तान

मिटी मोह माया की निद्रा गये रूप पहचान !

छिपी छुरी नीचा के छल मे,

देख दम्भ दुष्टों के बल मे,

बढ़ आगे, हो सजग भेट तू क्षण में नाम निशान !

चम चरण मत चोरो के तू

गले लिपट मत गोरो के तू

झटक पटक झटक को झटपट झोक भाङ म मान !

खल-बल बल दलदल में घसका

गा गौरव-गरिमा गुण-यश का,

क्या किसका गर तू उफसाता अपना प्राण महान ?

आपके तरन्तीवाङ्गानि स्वल्दमललावण्यजलधौ" के मुकाबले—

'अङ्गे अङ्गे यौवनेर तरङ्ग उच्छल
लावण्यर मायाम त्रे स्थिर भवञ्चल' कौसा है ?

आपका
निराला

आप आप कर अब न अपर को,

बना बाप मत बचक नर को,

अगर उतरना पार चाहता दिखा शक्ति बलयान !

मिटो मोह-माया की निद्रा गये रूप पहचान !

मतवाला (वप १, सख्या ३)

—'निराला'

८ ६ २३

गरीबों की पुकार

हमारे ईश हैं बस वे खड़े मदान में जो हैं,

न बदलेंगे कभी हमसे अडे इक शान मे जो हैं

नहीं वे ईश कहलाते, बड़ अभिमान मे जो हैं,

बड़े, पर वे गिरेंगे ही पडे अज्ञान में जो हैं !

वही निदर, त्रिपम बर्षा सलिल-सचार में बढ़कर

प्रलय का-सा अनप जो कर गया समार में बढ़कर,

तपडपता है पडा, भुरज उगलता आग जब उस पर,

कलेजा धाम कर कहता, 'गरीबों पर रहम अब कर !'

+

+

+

सगार्यों वही बेडा हमारा पार दुनिया में

हमे जिनका, हमारा भी जिहें, है प्यार दुनिया में !

मतवाला (वप १, सख्या ७)

— निराला'

६ १० '२३

३ निराला की काव्यकला' नामक प्रबन्ध में 'उपचारमनोजता के श्रम में मेर द्वारा उदघत पद्य

तरतीवाङ्गानि स्वल्दमललावण्यजलधौ

प्रथिन्न प्रागल्भ्य स्तनजघनमुमुद्रपति च

दशो लीलारम्भा स्फुटमपवदते सरलता—

महो सारङ्गादपास्तकणिमनि गाढ परिचय !

—वक्रोक्तिजीवितम द्वि० १२०

निराला के—'घेर अङ्ग-अङ्ग को लहरी तरङ्ग वह प्रथम तादृश्य की !' स तुलनीय ।

मैं नहीं जानता महात्मा गाँधी से सत्यार्थों को (Show them truth first and they will see beauty afterwards) इस सौन्दर्य-मागर का एक पारा कतरा भी प्यारा होना या नहीं, किन्तु टगोर और निराला ने तो—तिर जिन बूडे सब अग की ही सायकना प्रदर्शित की है ।

प्रिय जानकीवल्लभ जी,

आपका पत्र मिला । आपके मधुर गीत भी । आपकी प्रत्यालोचना माधुरी को दे दी । गीत देने की सोच रहा हूँ ।

आपने 'तोड़ती पत्थर' का उल्लेख नहीं किया, कहीं भी किसी पत्र में । यह सुधा में पहले छपी है ।

आपने मेरे लिये जो कुछ लिखा है सब ठीक है । पर अभी आप लड़के हैं, जब भी अपनी और पत्नी की समझ से समझदार ।

मैं जो कुछ लिखता हूँ साहित्य समझ कर । नहीं बन पड़ता, मेरी कमजोरी है । लोग क्या चाहते हैं लोग जानें । मैं क्या देता हूँ मैं समझता हूँ ।

आज परिमल के व गीत आप चाहते हैं, जिन्हें पहले (उन गीतों के जमाने में) लोग नहीं चाहते थे । मुमकिन फिर आज की चीजें आपको अच्छी लगने लगेँ —मेरा मतलब 'आप' से लोग है ।—क्योंकि आप उसी तरफ से कह रहे हैं ।

'रही लीडर' की जसी आलोचना की बात, इस—ऐसी के लिये मुझे कभी ज्यादा परेशान नहीं होना पड़ा । एक दफा आलोचक को देखा एक दफा समझा साहित्य गुना, रह गया ।

सीधी चीजें अच्छी हैं । मैंने नहा लिखी—आप कह सकते हैं ?—यह तोड़नी पत्थर कसी है ?

लकिन इसकी कुल बला समयकर आप इसे सरल कहेंगे मुझे विश्वास नहीं ।

जो गहन भाव सीधी भाषा—सीधे छंद में चाहता है वह धामेबाज

निराला के पत्र

है उसे भापा का ही नाम नहीं, वह भाव क्या समझेगा ?

कला के सम्बन्ध में पत्र में क्या लिख ? उसके विकास और सौंदर्य की बातें लाखा तरह की हैं दो चार आपको बताई थी आप भूल गये हैं जरूर ।^१ एक देखिये —

कोई न छायादार
पेड़ वह, जिसके तने घटो हुई, स्वीकार, (स्वीकार सी)
श्याम तन, भर बँधा यौवन,
तत नयन, प्रिय कमरत मन,
गुह हयौडा हाय, फरती बार बार प्रहार, —
सामने तरुमालिका अट्टालिका, प्राकार ।

१ सन १९० के मिनम्बर में 'भाव और भापा पर लिखत हुए निराला ने अपना अभिमत बड़ ही मामिक ढंग से प्रकट किया था ।

"विशाल भारत ने जिस तरह पद्यकारों की सपरमना की पलटन निकाली है अगर कुछ दिन भी साहित्य में यह साहमिकता जारी रही तो भापा की सफाई तो होगी ही, भाव भी माफ हो जायेंगे । फिर साहित्यका या साहित्य से भी कोई मतलब रहेगा या नहीं हम नहीं कह सकते सेवा अवश्य रह जायगी ।

'भाव शून्य क्या बसी ही है जैसे बल शून्य दाव । इमसे प्रतिपत्नी गिर नहीं सकना । कला अपने आसन पर सम्राज्ञी के अनुभव तथा एश्वयमयी काचित से तभी बठ सकती है जब वह पावती की तरह भाव के शिव की अर्द्धाङ्गिनी बन रही हो । उमना रूप तभी मनोहर है उमम तभी चमत्कार है जब याद किए हुए दाव-पैचों की तरह अपने बदन पर वह भाव के आवेश में आप निकल गई हो ।

"भवय वितन ही कलाविद ह्य, हर गाने की जान से परिचित हा बदन की चीजें गात हो, पर यदि भाव का माधुम गम नहीं तो सारी कला चर्क की पीसाई और समीत सिंह नाद है ।"

—निराला

२ निराला न कहा था—

कि मैं दूसरे बतियों की तरह उन्हें खण्ड-खण्ड करके नहीं गमग्रता देखू, कि उनकी प्रत्येक रचना सखिल्लिप्त है एक पक्ति दूसरी से, एक दूसरे से एक सबद्ध है जस तन न टाल, टाल से बट्ट, बट्ट से फूल । मु चमत्कार के लिए कही में दा पत्तियाँ निकाल पर गौष्ठव प्रश्नन या सी विष्णुपण करता निराला की वाद्यकला से विल्लाट करता है ।

यहाँ सीधा वणन होने पर भी, हथौड़े की चोट पत्थर पर पड़ने पर भी, देखिये, किस तरह अट्टालिका पर पड़ती है, लेखक के वणन प्रकार के कारण और निर्देश स ।

ऐसी बहुत सी बातें इसमें हैं ।

वह जहाँ बठी है वह पड़ छायादार नहीं, अट्टालिका तरफ मालिका है ।—
अट्टालिका भी तरफ मालिका है फिर आदमी कितनी छाह म है ।

किन्तु आलोचक भूलने की गुस्ताखी न करने पर भी अपनी और अपने पाठकों की सीमाओं को भी याद रखने के लिए विवश था । तब तक वह किसी दोषपूर्ण पंक्ति के दोष पर खोजना और किसी सरस पंक्ति की भावुकता कल्पना या अनुभूति पर रीझना ही तो जानता था । अवश्य उस खोजने या रीझने की प्रक्रिया में उसकी व्यक्तिगत अभिरुचि के अतिरिक्त शास्त्रीयता की सुदृढ़ भित्ति भी होती थी ।

फिर उसे वात्सल्य या समुदाय की प्रवृत्तियों के वर्गीकरण और वस्तु एवं शिल्प के सामान्य विश्लेषण एवं शालियों के वणन वाली ऐतिहासिक आलोचना से चिढ़ भी कम न थी । वह उसे कला की गव-परीक्षा ही समझता था । उसकी भावना थी कि कला के मामले में भी—

‘यमवयं वणुत तेन लभ्य
स्तस्यप आत्मा विवृणुत तनू स्वाम्’

वाली उक्ति ही सच है ।

और सब से बढ़कर उसे निराला की प्राथमिक कविताओं की भी सुधि थी —

दिव्य प्रकाश

रोकते हो क्यों उसको ?

क्या अनुरागमूर्ति वह प्यारे—

नहीं किसी के मुख शशव की जननी गीता अनुपम ?

और लगाना गले इन्हें

जो धूलिधूसरित खड़े हुए हैं—

कब से प्रियतम है ध्रम ?

अगर दुई में दुई कभी पहचान,

तो क्या रस है ?

है नीरस वह अनुमान,

अपने ही हित पर उसका रहता है सारा ध्यान,

गँवाया जड़ से उसने ज्ञान,

किन्तु है चेतन का आभास—

जिसे देखा उसने जन जन में—

प्रियतम ही का दिव्य प्रकाश ।

—निराला

(मत० प्र० व० सं० ५)

निराला के पत्र

'बेधा यौवन' छलकता नहीं कसी पवित्रता है ।

'मैं तोड़ती पत्थर' अन्त का स्वभावन शायद समझ में आ जायगा 'मैं तोड़ती पत्थर हृदय ।'

आप अवश्य बुरा न मानेंगे, मेरे लिखने में ह्वापन भले हो, वैमनस्य नहीं ।

मैं इतवार को—इसी इतवार को—१३ १४ वया तारीख होगी, प्रसाद जी के यहाँ मिलूँगा सुबह आदएगा । कुंवर चन्द्रप्रकाश जी को भी ले आइयेगा ।

आपका
निराला

112 Maqbool Ganj

Lucknow

30 8 37

प्रिय आचार्य जायकीवल्लभ जी,

आपका प्रिय पत्र मिला ।

काशी में 'पागल' जी से मिलने पर बड़ी प्रसन्नता हुई । डा० बाह्यवाल जी के यहाँ रात भर रहा काफी साहित्यिक चर्चा हुई अपने आट पर मैंने बहुत कुछ कहा ।

पागल जी की मिठाई और चाय खा पीकर प्रसाद जी को देखने के लिये चला ।

आपकी अनुपस्थिति रात को ही मालूम हो चुकी थी, जब आते ही तांग से उतर कर गया था—डा० बाह्यवाल के साथ । कुवर चन्द्रप्रसाद वाजपेयी परमानन्द और नरेश से मुलाकात नहीं हुई ।

प्रसाद जी को बहुत दुबल देखा । दुःख और शक्का हुई ।

उसी दिन दुपहर को भगवती प्रसाद जी सकलानी और उनके दो मित्र आय । ३/४ घंटे काव्यचर्चा हुई । फिर शाम को मैं प्रयाग चला आया ।

आपका अभाव खटका, पर सवाद सुखवर था ।^१ यात्रा बड़ी अच्छी रही । खूब वादल थे ।

संस्कृत की रचनाओं में आप आसानी से कामयाब होंगे, यह तो मानी बात है । वहाँ मैंने यही पूछा था कि इम्बहान में आपका नतीजा कहीं न बिगड़े, उत्तर पागल जी से बड़ा सन्तोषजनक मिला ।

आपकी रचनाएँ मैं सुधा को दे रहा हूँ । आपकी अस्वस्थता अब दूर हो गई होगी ।

१ आर्थिक विपन्नता के कारण मैं पटना छोड़कर रायगढ़, राजकवि बनने—चला गया था, यही वह मुख्य सवाद था । छायावाद शब्द के प्रथम प्रयोक्ता कविवर श्री मुकुटधर पाण्डेय मुझे काशी से अपने साथ रायगढ़ ले गये थे ।

निराला के पत्र

में 'किमान' लम्बी कविता लिख रहा हूँ। वषणात्मक है कह नहीं सकता,
कैसी होगी ?

हालत वैसी ही है। कही आता जाता नहीं। वाम में जानता हूँ, मैं थोड़ा
ही कहूँगा, बहुत के लिए आप लोग हैं।^१

आपका
-निराला

२ ऊँचे ऊँचे मुजरिमों की पूछ होनी हथ म,
बोन पूदेगा मुग, में दिन गुनगारा म हूँ ।

×

×

×

I have fought my fight

I have lived my life

I have drunk my share of wine

From Trier to Colm there was never a knight

I led a merrier life than mine

२४

112 Maqbool Ganj,
Lucknow
11 9 37

प्रिय आचार्य

बहुत व्यस्त हूँ। आपके दोना पत्र मिले। फोटो आपकी अवश्य दूँगा। पर देर होगी।

आप पर इधर तो कोई 'पडग्य' मीने नहीं किया। मीने सीधे तौर से लिखा था मैं थोडा व्यडग्य करूँगा आप बहुत। आपका सत्य-सन्ध ही मुझे आपम मिलाकर आपको महत्तर करेगा।

निमल जी ने क्या लिखा है नहीं मालूम। अभी किताब भी नहीं छपी।

मीने कल सुधा-सम्पादक को लिख दिया है कि निमल जी से पूछकर मुझे निकाल दें। वह मुझे ठीक समझेंग, मुझे विश्वास नहीं।^१

आपका
निराला

१ नवयुग काव्य विमर्ष नामक आलोचनात्मक सक्लन से।

२ कौन किसे समझता है। पाच वर्षों (—सन '३२) से देख रहा हूँ काशी में जयशकर प्रसाद की प्रतिमा तो पुजती है, किन्तु पुजारियों को पता ही नहीं, प्रसाद वितरण से शकर का रहस्य नहीं उजागर होता।

निराला तो ऐसा भी लिखते थे कि सब समर्थ —

(१)

लहर रहा नम चूम चूम आगे वह सागर,

जल भरने कवि सरल चला ले छोटा गागर,

मचल गया मन देख निरा छोटा घट अपना,

उधर उमडता प्रबल जलधिजल, इधर बल्पना,

घट छोटा था उसका सही मन का वह छोटा न था

उच्चाकाठ खाओ से भरे भावो का टोटा न था।

(२)
 झरने की अविराम झड़ी सी रहे लगाते—
 कवितामय कविनेत्र सदा आँसू बरसाते,
 धोकर युगल कपोल हृदयकन्दर से होकर
 ममस्थल की प्रकट व्यथा सी मानो रोकर,
 वह उतरा प्राकृत भूमि में छोड़ कल्पना-वेदना,
 या नयन सतिल से घट मिला पूरित और सुहावना ।

(३)
 भरा हुआ घों सरस सलिल से सागर पाया,
 और समाया विमल उसी में सागर पाया ।
 भाव भरा घट छलक छलककर रह जाता था,
 कविता के पद मधुर न जाने, कह जाता था !
 घन मण्डल की छाया न थी उसमें श्याम पड़ी हुई,
 काले बालों को खोलती कविता आप ढड़ी हुई ।

(४)
 (पया केवल वह सलिल ? नहीं, कवि का दपण था,
 विम्बित जिसमें सब चराचर का जीवन था)
 जलदजाल को चीर झरोखे में से शशधर—
 झाक रहा था चञ्चल चितवन से जनमन हर,
 या चन्द्रमुखी घटपट उल्ट कवि चकोर को मोहती
 या कवि भी उसको जोहता, वह भी कवि को जोहती ।

(५)
 जल भी बूँदें गूथ उसे पहनाई माला
 मोती का सा साज सभी लडियों में आला,
 बदले में ले अघर सुधारस तिचित प्याल,
 जीवन भर वह अमृत पिया बनकर मतदाला ।
 हाँ एण बिन्दु में ही उसे सुधासिन्धु दिखला दिया
 उसने जो कहलाती सदा कविता कवियों की प्रिया ।

— निराला
 कविः २० अक्टूबर सन् '२३

२५

112 Maqbool Ganj

Lucknow

17 10 37

प्रिय श्री आचार्य

आपकी विजया लिपि मिली। आपकी रचनाएँ और फोटो में कठ या परसो अवश्य अवश्य भेजता हूँ। रचनाएँ देतकर भेजते हुए बिलम्ब हुआ। अब न होगा। बड़ा दोषसूत्र हूँ। भेज चुका होता जरा दो एक गीत कुछ ठीक करने लगा फिर काम छोड़ ही दिया। परसो अवश्य भेजूंगा। फिर देर न होगी।

अत्यावश्यक है—१६ शृङ्गार क्या क्या हैं श्लाकोद्धार करके भेजिय जल्द। कालिदास को नीचा दिखाना मेरा अभिप्राय नहीं। वे मरे दहिक मानसिक—दोनों प्रकार के सर्वोत्तम भोग्य हैं।

एक गीत इधर लिखा था—

‘उक्ति’

कुछ न हुआ, न हो

मुझ विश्व का सुख थी यदि केवल

पास तुम रहो।

मेरे नम के बादल यदि न कटे—

चन्द्र रह गया ढका

तिमिर रात को तिर कर यदि न अटे

लेश गगन भास का,

रहेंगे जधर हँसते, पय पर, तुम

हाय यदि गहो।

७ = ३७

Note —

अटे—अट्=पहुँचे (देहानी प्रयोग)

आपका

निराला

१ टंगोर व ‘जीवनदेवता’ की तरह यह तुम भी एक अपावित्र प्रेरणा की प्रतीत होने वाली निच्य पापिवता है। एक पूर व खिलने पर भी जम बगन ऋतु का आगमन व्यथ नहीं कुछ उमी प्रकार हम तुम म भी उपस्थिति मात्र म निराला को सारी दुनिया का सुख मार सगार की समृद्धि दा की शक्ति है। वस्तुन मन के विष का पान हमी अमन चेतना म सभर है। तुम का चाँनी मी मोत्रगी मन की त्रिभय उजागओं पर नीत अमन छिक्की है नही तो व्यक्तिय का तपण त्रिपुर-दाह हो जाए।

निराला के पत्र

२६

112, Maqool Ganj,
Lucknow
25 10 37

प्रिय आचार्य,

आपका पत्र मिला। मैं इधर एक हफ्ता बुखार से बड़ा परेशान रहा। अब अच्छा हूँ।

आपकी रचनाएँ—तस्वीर इसीलिये क भेजूंगा, २३ दिन में।

दीपसूत्रता तो मेरे स्वभाव में आ गई है। रवि बाबू बहुत काम करते रहे हैं करते हैं, मैं तबियत से जो कुछ कर सकता हूँ मैं रवि बाबू नहीं।

रविबाबू का आदेश मैंने नहीं अपनाया। वे 'अहविगु रलडपने' वाले हैं, मुझे रोज गुरु-लङ्घन करने पड़ते हैं तरह-तरह के।

मैं बैसा बठा बनिया नहीं कि जिदगी भर इस कोठे का धान उम कोठे करता रहूँ।

काव्य में काम अवश्य करना है, करता हूँ। पर आप लोग तो कल्पना से मुझसे काम लेते हैं। पर बात यह, काम से काम करते यकान आती है, तबियत बिगड़नी है, आइडिया नहीं मिलता, कल्पना के घोड़े तो उड़ते ही रहते हैं।

तुलसीदास आपको बहुत अच्छा लगता है, मुझे नहीं, तो क्या कहूँ ? लिखूंगा दो चार बँसी चीजें और यथासमय आप लोगों की मनस्तुष्टि के लिये, फिर कालिदास को पढ़कर।

'मुघा में मेरा बहुत ज्यादा कुछ न जायगा। एक कहानी लिखी है—श्रीमती गजानन्द शास्त्रिणी। प्रसाद जी पर अभी लिखा ही नहीं। वाय म हर मनोभाव की छाप रहनी चाहिये, इसलिए आजकल एसा लिखता हूँ।

'मैं हूँ केवल पञ्चव—भाग्य' कर सीखिगया। विराट्पट्ट हीन नहीं जब भी गनीत इगमं भाव है। इगमं भावदिया की भावने गरीब नहीं की।

भाग्य

विराट्प

१६०३० का विनीत गुणों का प्रतिपत्त की रचना हुई थी। विराटा का दुर्लभ लाल विनीत कविता गने पाग भाव तो भी। इन्द्रजना की दृष्टि से कुछ गणों की ओर विराट्प गनेन वि। 'गुणों (पुत्रों और सहृदयों) का भाव म विराट्प की बल कायलगा महत्त्व प्रतीय हुई था। 'यहि पञ्चवमुपासम् क मपय भवत्य म प्ररित होकर मने पञ्चव का पा विनाई थी, बगति पञ्चव (पद + लव) का पञ्चव प्राय लव लव divided तक ध्यति विराट्प कर अद गौरव प्ररित करगा था। जुरी की बली का गिदिल पदाव भी इगो गरति से विराट्पार पञ्चव तक अद पदावा है। अस्तु !

अनामिका म त विगलय भागन रहा त पञ्चव भागन उपास पञ्चव आसत कर दिया। एम ती ग्या बह मई पञ्चव म विर भी गूढ ध्यत्य था।

अनामिका म लगी हुई कविता विराम वि हा क अभाव म दुचीध हा मई है। मो भी कुछ हेर पर है। पर पाग उमका यह भाव म मूल रूप है

मे जीणसाज बहुद्विज आज

तुम मुदल गुरग गुपात गुमन,

मे हूँ बवल विरालय—भाग्य

तुम सहज विराजे महाराज !

ईदो कुछ नहीं मुझ, यद्यपि

म इस वसात का अघडूत,

साह्यण समाज में ज्यों आता

म रहा आज यि पारवच्छेवि !

तुम मध्य भाग के, महाभाग,

तव के उर के गौरव प्रसाहन,

म पड़ा जा चुका पत्र, यस्त,

तुम अलि के नव रस रग राग ।

देखो पर क्या पाते तुम "फल"

देगा जो भिन्न स्वाद रस भर,

कर पार सुहृदारा भी अंतर

जय निकलेगा तव का सम्बल ! —

फल—सर्वोत्तम नायाव चीज

या तुम बाँधकर रेंगा धागा

फल के भी उर का, कटु स्वागा,

मेरा आलोचक, एक, चीज !

निराला के पत्र

२७

C/O Pdt Ramdham Dwivedi,
Sherandaz Pur, Dalmau
(Rai Bareilly) U P
28 11 37

प्रिय जानकीवल्लभ जी,

आपका पत्र लखनऊ से मुझे यहाँ मिला। आपकी पूरी आलोचना 'माधुरी' में निकल चुकी है १३ पृष्ठों में अतिमात्र नवम्बर के अंक में। पाण्डेय जी का पाप्य पुत्र सख्त बीमार था, इसलिए उन्होंने आपके पत्रों की तरफ ध्यान नहीं दिया शायद। एक और भजिये।

मैं प्रयाग होकर यहाँ आया। पाठक जी तो महीने से बीमार, अस्थियोप रह गये हैं। इधर प्रसाद जी का सवाद आपने पढा ही होगा। पहले की तरह चुपचाप रहता हूँ।

आपका उतना ना काम भी गीता का नहीं कर सका। ज्वर के बाद जो कमजोरी आई वह अब तक है। और बहुत-सी बातें हैं जो पत्र में संकुचित

१ मैंने प्रेस में देने से पहले रूप-अरूप' की पाण्डुलिपि अवलोकनाय भेज दी थी। ताल की दृष्टि से मेरे कुछ गीत उह अगेय जान पड़े थे। मैं गाता हूँ

Because the road was steep and long
And through a dark and lonely land,
God set upon my lips a song
And put a lantern in my hand

बजा छिन्न तार,
सुनो जो न, मधुर वही बोणा झकार !
मरु का मग, लगती है, पग पग पर प्यास
अजलि भर मिला नीर जो, वह तो क्षार !
पिया जो न वही बिडु सुधा सिन्धु धार !
वह पनसर जो ममर भरता मन से,
विजय फल कहीं कि गले पड़े फूल हार !
वही जो न, बस यही वसंत की वयार !
आँखों देखा अपनी जो था सपना,
पाया क्या माया का मधु हाहाकार !
ज्ञान दग्ध प्राण छेड़ प्यार का महार !

—रूप-अरूप

होती है। बिज में यहाँ भी भक्तों के उद्देश्य में, ले भाषा है। पर धृति वह
 त्रिभु-बोध में लया हुआ है। इगतिग भय है कि बाह्य में भीतने पर दबाव में
 टूट जायगा। भाव जिसे भी भक्त हैं। मगर बाह्य को लेने में विद्या नहीं होती
 रहा है। गीत, गुरु से मग्यीर तब पूरे भाव भेजे भी देखने की गठना होती।
 जैसा भावको जात पर। मैं यहाँ वह त्रि और रूपा।

द्वितीय साहित्य सम्मेलन में इग बार के पुरस्कार के विषय—इग बार भी
 दो ही सम्मेलनपुरस्कार—मरी गीतिका' मग्यी और ग प्रतिबोधिता में रखने
 का विचार किया था। मुझे विद्या जिसे थी। पर मैंने प्रतिबोधिता में जाने में
 इतरार कर दिया है।

विद्या की भाषा में मिलने में बँबर भाषाप्रकाश जी की लम० ल० पाठनप
 की पढ़ाई कर गई।

और कुशल है। इति।

भाषा

विद्या

कितना निठुर यह उपहास !
 जो अजाने ही गया,
 यह था मधुर मधुमास !
 कितना निठुर यह उपहास ! !
 अधु वष बहकर जिस
 मने बहाया हास !
 सूत्रम रूप घरे यही था—
 हृदयहारी हास !
 कितना निठुर यह उपहास !
 स्वप्न मुख की आस में
 सोया रहा दिन रात
 यह गया नित लौट—
 शत शत बार आकर पास !
 कितना निठुर यह उपहास ! !

निराला के पत्र

२८

श्री हरि

प्रिय आचार्य,

आपका पत्र मिला ।

आपको निश्चल होकर कहता हूँ, आप साथ कवि हैं ; आपकी रचना मुझे पूरा आनन्द देती है ।

आप मेरी परख को नहीं जानते मैं किसी एक ढर्रे की पसन्द रखने वाला व्यक्ति नहीं ।

इसकी अनेक वचानिक बातें हैं—आप सस्टृत से ही जानते हैं—भिन प्रान्त का कवि भाषा और प्रकाशन मे किसी भिन प्रात के कवि से पाथक्य रखता हुआ भी उसी की तरह श्रेष्ठ और मौलिक है, आनन्द देने वाला । आपम भी मुझे ऐसी बातें मिलती हैं । आपकी यह चीज भी बड़ी सुन्दर है ।

अब तक जो मैंने आपकी रचनाओ को देखा नहीं—वास्तव मे देखना बहुत घोडा है सुघार के लिये,—सिफ वहाँ जहाँ एक-आध पद्य मे सगीत की ताक ठीक करती है इसका कारण कुछ तो—

यार से छेड चली जाय असद
कुछ नहीं है तो अदावत हो सही

—है, कुछ मेरी बीमारी और लापरवाही, कुछ प्रमाद जी के प्रयाण का गहरा प्रभाव ।

मैंने इधर कुछ नहीं लिखा । 'शास्त्रिणी' गर्मियों की और अस्वस्थ क्षणों की रचना है । अब काम शुरू किया है । ३४ छोटी बड़ी चीजें लिखी हैं । आपका काम भी आज ही बरू कर रहा या । चित्र एक और दगा । दोनो एक साथ मैं वही भेग दूगा मावूती से बंधावर । दूसरा अभी तयार हो रहा है, छोटा है, पर कुछ को अच्छा लगा है ।

आपकी अडचनें क्या आपके आचार्य भी दूर नहीं कर सकते—उपस्थिति-वाली ? बाकी ता आपको ही हटानी है ।

बाहरी जीवन में परीक्षा फल रवि रश्मि की तरह फलित है, यह मरत्य है पर मेरी आँखों में तो वहाँ घनार्चोघ ही चकाचौंध है, कुछ देख ही नहीं पड़ता। आप यथोचित करें। पर परीक्षा फल स्वास्थ्य फल से अवश्य अधिक स्वाददार किसी के लिये न होगा। जघिन समय और साधारण अध्ययन ही मेरी दृष्टि में विधेय है।

'कला' के पेपर पर पत्र ऐसे ही लिख लिया उस आफिस से उठा लाया था आपकी यह रचना, 'कला' का दूंगा। माधुरी आप ही मगा लें।

मेरी दृष्टि में हाँ, आप पराजित हैं, पर वहाँ 'रा' उपसर्ग नहीं, विद्या है।

१६७ मकबूल गज

लखनऊ

१२ १-३८

आपका

निराला

बटुल चरण धर मलिन पुलिन पर री,
मधु-सध्या उत्तरी,
नयल नील क्षुति, अमल मधुर स्मिति री
गति शिजन तिहरी !

अघन गगन, घन-नखत मगन मन
तरल नीर पर धीर समीरण री,
सरि-उर भर लहरी !

रख जशक रस-बलस अक मे
नमित नयन ऋजु अघन बक में री
लौटी ग्राम परी !

२६

C/o Pdt Vachaspati Pathak Esqr
The Leader Press,
Allahabad
14 3 38

प्रिय आचार्य जानकीवल्लभ जी,

आपका पत्र मिला। बड़ा दुःख यह हुआ कि मैंने आपके इससे पहले वाले पत्र का उत्तर ३५ न० फाय होस्टल भेजा था—वह पत्र आपको नहीं मिला, उसके भीतर मेरा इधर का लिया अब तक के चित्रा म मक्श्रेण्ड चित्र था (फोटोग्राफ)। वह पत्र मुझे वापस भी नहीं मिला। इससे मालूम होता है, किसी विद्यार्थी ने लेकर चित्र के लोभ में पत्र आपका नहीं दिया।

मैंने सोचने की गल्ती की। सोचा, आपने ३५ न० फोय होस्टल को मङ्गलाश्रम बना लिया है, जमा कवि लोग करते हैं।

उस पत्र में मैंने लिखा था, आप इन्तहान देकर लखनऊ चले आइये। कापी दिख जाने पर प्रेस दीजिये। पर, अच्छा है, 'तनिमा' के दो काम छप चुके हैं देखने को कोई बात थी ही नहीं। जसा कुटनी भाट में मैंने लिखा है दशन एक है, व्यक्तिभेद होता है। आपकी मध पर रचना' मिली तो देखूंगा।

१ मङ्गलाश्रम लङ्का पर एक लांज था।

२ पहले 'रूप अरूप' का नाम 'तनिमा' रखा था। हिन्दी में यह शब्द अपरिचित विशेषी-जसा जान पडा तो छपे फर्मों से तालमेल बनाए रखने के लिए अनरूपे फर्मों वाले भाग को 'नीलिमा' नाम दे दिया। इस प्रकार भीतर 'तनिमा' और 'नीलिमा' नामक दो भागों में मेरे एक सौ एक गीत सकलित हुए। ऊपर आवरण पृष्ठ पर ही रूप अरूप' नाम जा मना।

३ मेघ राष्ट्र मे मद्र साद्र ध्वनि—

द्रिम द्रिम द्रिम उ मद्र मद्रङ्ग की !

मःद्र - समुद्र मद्र रव रसना,

नाच रही कस दम दिशि-वसना,

रिमसिम रिमसिम रनमून रनमून,

रुनकिट तच्छम रन रन रुन रुन,

रुमरुम रुमनन रुमनन रुमरुम,

मुक्तकेश सरका नीलाम्बर !

हरित-मस्य-अञ्चल चञ्चलतर ! !

आजकल आप रवि बाबू को पढ़ रहे हैं, अच्छा है।
 मैं कुल बातों में अलग, अकेला रहना चाहता हूँ।
 रवि बाबू के-जैसे निबंध, ठीक है लिखूंगा, हो सका तो। अभी तो ऐसा ही चलेगा।*

एक कविता भेजता हूँ। देखिये। मैं अच्छा हूँ। ३/४ दिन बाद लघनऊ जाऊँगा

वे किसान की नई बहू की आँखें
 नहीं जानतीं जो अपने को खिली हुई—
 विषय विभव से मिली हुई,—

वे किसान की नई बहू की आँखें
 ज्यों हरीतिमा में बंटे दो विहंग बंद कर पाँवों,
 भीरु पकड़ जाने को हैं दुनिया के कर से—
 घड़े बयो न वह* पुलकित हो कसे भी बर से।

६ ३ ३८

*वह—बर, हाथ।

आपका
निराला

ताल ताल पर उच्छल-उच्छल—
 चल जल छलछल टलमल टलमल,
 कुलकुल कुलकुल कलकल कलकल,
 प्रति पदगति मति जल तरङ्ग की ।
 तडित भङ्गिमा भङ्ग अङ्ग की ॥

—मेषगीत

मुकुल मुख फूलो ना, फूलो ना !
 देखी रेख सुनी धुनि पग की
 भूलो ना भूलो ना !

छूटपन के छाट टिन रीते
 आखमिचीनी के दिन बीते
 परछाई-सी पास पडा म,
 छू लो ना, छू लो ना !

रिमक्षिम फुहिया लोचन घन की
 —जीवन में बहार सावन की,
 प्यार-चपल उर के झले पर—
 झूलो ना झूलो ना !

—मेषगीत

४ तब ललित निबंध या यत्नितगत निबंध जैसे शब्दों का प्रचार नहीं हुआ था। मरे पाठयक्रम में या वक्त्र स स्टीवेंसन तब के निबंध थे, किन्तु रवि बाबू के जैसे निबंध मैं उसी अर्थ में लिखा था।

३०

C/o Pdt Vachaspati Pathak Esqr
The Leader Press,
Allahabad
18 3 38

प्रिय आचार्य जानकीवल्लभ जी,

आपका पत्र मिला। आपकी दानों रचनाएँ बहुत पसन्द आईं। मेघगीत बड़ा सुन्दर है।

काशी की तरह यहाँ भी दूधे की आग भड़की है जोरा से। पचासा हताहत हा चुके हैं। कल मे हिन्दुस्तानी अकडमी का मीटिङ्ग थी, अर क्या होगी? लखनऊ २१ को जाने का विचार था अब दो एक रोज रहकर जाऊँगा। आप लिखिये आपकी परीक्षा कब समाप्त होगी।

चित्र का एनलाज्ड रूप भी है पूरे कमरा साइज का लिया गया था, यह भेजा हुआ छोटा किया हुआ रूप है। और बड़े आकार में एनलाज कराया जायगा।

रवि बाबू की तरह के अनेक अर्थ हैं। लिखता भी हूँ जब बंसी तबियत होती है, कुछ। पर रवि बाबू अब जमाने के विचार से दूर हो गये हैं, यह आधुनिक साहित्य के विचार से लिख रहा हूँ।

मरी दृष्टि में रवि बाबू एक श्रेष्ठ कवि और साहित्यिक है, बस। उनमें कमजोरीयाँ भी अपार हैं। आपकी अच्छे इसलिये लगते हैं कि रवि बाबू भी 'कालिदासो विलास' हैं। फिर बातें कहेंगा इस सम्बन्ध में मिलन पर।

मरी कई चीजें और हैं काय मे, नई। फिर देखियेगा। बन्तु बहिमुख न हजिय। जो कुछ हाता जा रहा है देखत जादम, उस जसे निजलता आय। अभी तो 'अनामिका और तुलसीदास' निबन्ध रह हैं। फिर 'गाथा कथा ओ बाहिनी' का ही रूप होगा।

आपका और अधिक करना है पर विजयी धम और अभ्यनन होता है ।

ठूठ

ठूठ यह है आज ।

गई इसकी कला गया है सरल साज ।

+ + +

केवल बद्ध विहग एक बढता कुछ कर याद ।^१

—निराला

११ ६ ३८

1 Defeat rebellion and the barren bleak feeling of the modern world are in line. A deep sense of tradition places the modern in contrast with the ancient sources of vitality and finds its peculiar strength in this very power of contrast. We may think of the Waste Land in this connexion.

112 Maqbool Ganj,

Lucknow

16 5 38

प्रिय आचार्य जानकीवल्लभ जी,

आपका पत्र बल हस्तगत हुआ। बल ही मैं बलकत्ते से यहाँ लौटा सात रोज गृह कर। देहरा से गया होकर जात और आते आपकी याद की। आप अस्वस्थ हैं पढ़कर बहुत चिन्तित हूँ।

ईश्वर की इच्छा से आप स्वस्थ हो जाय, प्रायना है। इन्तहान की मिहनत तथा चिन्ता से चित्त उद्विग्न होकर रोग की वजह बनता है। कुछ भोग है, आपको ईश्वर नीरोग करे। यथासमय आपके अन्य काय भी पूरे होंगे, किताब भी निकलेगी।

इगहाबाद से अब तक मैंने आपकी बहुत याद की। फैजाबाद ५० पी० हिंदी साहित्य सम्मेलन में आपको बुलाना चाहा लेकिन सफल न हो सका कारण मैं स्वयं बहुत उलझा हुआ हूँ काम में।

लडके की शादी है रामवृष्ण की। विवाह एक मिन की ब्या से कर रहा हूँ। लडकी मेरे गाँव की ही है बगाल में पदा हुई वही साधारण बंगला पढी और रही। इस समय वह और उसके अभिभावक लखनऊ में हैं। शादी, मुमकिन, आपाद में ही। फिर लिखूंगा आपके स्वास्थ्य समाचार लेते समय।

कु० चंद्रप्रकाश, मुना है यहाँ हैं। आपको समाचार मिलने पर उनसे कहूँगा। राम विलास जी मसूरी गये हैं प्रोफेसर सिद्धांत के साथ।

इधर कुछ लिखा है, पर नबल करने तक की फुसत नहीं फिर भेजूंगा एसा ज्यादा कुछ लिखा भी नहीं, कारण उलझन में रहा।

आप इलाज करायें और चिन्ता छोड़ दें ईश्वर अच्छा ही करेगा।

आप ही योगा की तो हिंदी को जरूरत है।

—सस्नेह

आपका
निराला

३२

११२, मन्मूलगज, लखनऊ

२५ ५ ३८

प्रिय आचार्य

आपके पत्र का उत्तर लिख चुका हूँ। आप स्वस्थ हो रहे होंगे। जल्द अपने समाचार दीजिये। एव आवश्यक वाय से आपको फिर लिखना पडा।

मुझे लखनऊ के रेडियो स्टेशन से हिन्दी और संस्कृत के नाटक और प्रहसनो पर पंद्रह मिनट रेडियो में बोलने का आमन्त्रण मिला है। आप स्वस्थ हो तो पत्र पाते ही संस्कृत के नाटक और प्रहसनो की सूची, नाटककारो के नामो के साथ, भेज दें। जो भरे न जाने हुए नाटक और प्रहसन (संस्कृत में) होंगे मैं मासूम कर तयारी कर लूंगा।

४ जुलाई बोलने की तारीख है शाम सात बजे। अभी मैंने स्वीकार नहीं किया। सविशेष आपका पत्र मिलन पर। इति।

आपका

—निराला

उचित

जला है जीवन यह

आतप में दीघकाल,

+

+

+

किंतु पडी व्योम उर,

बध् नील मेघ माल ।^१

१६ ५ ३८

1 In Nirala it does not take a great deal of allusions and implication to direct the mind to the experience—the experience is all there whether we look at it literally or metaphorically

जग है जीवन यह आतप में दीघ काल

The sense of defeat in the world which is so real a part of Nirala's real experience broadens into a sense of the hard the difficult the devoted the bare which much hold itself a little stiff and aloof

(continued on next page)

११२, मकबूल गज़, लखनऊ

५-६-३८

प्रिय आचार्य,

आपके पत्र मिले। आप अब स्वस्थ हो रहे हैं अनुमान है। आपने साफ-साफ नहीं लिखा।

जदवाजी अच्छी नहीं। धीरे धीरे प्रसार होता ही है विद्वत्ता, अध्ययन और मननशीलता का।

मैं इधर बहुत ज़िना से माधुरी-आफिस नहीं गया। 'कुल्ली भाट' का बाकी हिस्सा लेकर दो चार दिन में जाऊंगा।

रेडियोवाली स्पीच मैंने कसिल करा दी क्योंकि रुपये कम मिल रहे थे। यह तो बिजनेस है, बिजनेस में धोखा खाना ठीक नहीं। अगर मुझमें शक्ति होगी वे फिर बुलायेंगे मुझे चिन्ता नहीं फिर इसी माल यहाँ रेडियो-स्टेशन खुला है।

मेरे पुत्र चि० रामवृष्ण का पहली जुलाई को विवाह है। इसी उत्सव में हूँ। मेरी 'नर्गिस कविता' आपने देखी होगी, 'भारत में छप चुकी है। इधर

(continued from last page)

The idiom is by turn abruptly modern and graciously quietly traditional

बद हुआ गुञ्ज, धूलि घतर हो गये कुञ्ज
and then the turn

किंतु पड़ी व्योम उर बधु, नील मेघ माल

The impulse of this kind of poetry is in a delicate and genuine rightness of experience in images that are the direct and direct modes of experience in poetry. The complex contrast of पड़ी व्योम-उर नील मेघ माल with all the rest of the poem is an arresting symbol of the satisfactory world of beauty at the heart of defeat.

एक सात पंक्तियों की लिखी है नासमझी—

समझ नहीं सके तुम,
हारे हुए झुके तभी नयन तुम्हारे, प्रिय ।'

१५ ५ ३८

स्वस्थ होकर अपना निश्चय कीजिये, तदनुसार लिखिये । मैं साथ हूँ ।

दिलबहलाव के लिए तो कुछ दिन यही आकर रहिये । रूप-अरूप
निकल गया ?

आपका
निराला

१ मैं उन दिनों रामकृष्ण जी के विवाह में शरीक होने जाकर उही के साथ रह रहा था । जिस रोज यह कविता गुघा' में छपकर आई, अमीनाबाद पाक की ओर चाय पीने के लिए चलते हुए अर्ध बीच में बोले "कसी लगी तुम्हे ? देखा नहीं डायमंड कट है । मगर गवाहियाँ गुजरेंगी, दरबारी किस्म की पद्यबद्ध वक्तताओं की ओर से । सब जज के चेहरे की तरफ टक्कती लगाए हुए हैं । सफाई में मेरी बहस बेकार साबित हुई है ।

बला की चर्चा छिड़ी घातक हमला हुआ । कुहराम मच गया कि निराला ने जिननी भी चोटें की, बाएँ हाथ से की ।

'मुसल्मान की दुकान में पीना पसन्द करोगे ? हिन्दुओं से अच्छी बनाते हैं ये लोग ।

अब ऐसी कविता पर दस रुपये भी मिलें तो हौसला बरकरार रहे । नहीं तो मरना क्या, हिन्दी

अभी तो सिर्फ चाय ही पिला सकता हूँ ।'

निराज के पत्र

३४

112, Maqbool Ganj

Lucknow

16 6 38

प्रिय आचार्य

माधुरी का भेजा आपका 'गीतिका' पर बाला लेख नहीं देख सका। बड़ी उलझन है। मेरे विरञ्जीव का आपाठ शुक्ल चतुर्थी पहली जुलाई का विवाह है। आपको निमन्त्रण दता हूँ।

विवाह बहुत साधारण रीति से कर रहा हूँ।

लडकी मेरे गाँव की है। कलकत्ते में उसके माँ-बाप रहते थे। वही पैदा हुई वही पत्नी और पढ़ी लिखी। साधारण बंगला, हिंदी और अँगरेजी जानती है। सुलभता और सुदरी है। पहले इस खानदान का अच्छा जमाना था, अब साधारण स्थिति है। दहेज के अभाव (न दे पाने) से लडकी के लिए योग्य वर न मिल रहा था मैंने दहेज छोड़कर विवाह स्वीकार कर लिया। मुझे लडके के लिये कई हजार का दहेज अमत्त मिल रहा था। तीन महाने से इसी चक्कलम में था।

फिर, आप आ मके तो बातें कहेंगा। इति। आप स्वस्थ होंगे।

श्री गणेशाय नमः

श्रीमान,

मेरे पुत्र चि० रामकृष्ण त्रिपाठी का शुभ विवाह मेरे ही गाँव के रहने वाले प० शिवशङ्कर जी शुक्ल की आयुष्मती पुत्री कुमारी पूरदुलारी से, लखनऊ में, आपाठ शुक्ल चतुर्थी पहली जुलाई, १९३८ को होना निश्चित हुआ है। आपसे सविनय प्रार्थना है कि उक्त अवसर पर पधार कर आप वर और वधु को अपना स्नेहाशीवाद प्रदान करें। इति शम्।

११२, मक्बूल गज,
लखनऊ
४ ६ ३८

सविनय
निराला

३५

मापन ५० वाचस्पति पाठक,
लीडर प्रेम, इलाहाबाद
६०८ ३८

प्रिय आचार्य,

आपका पत्र मिला । इससे पहले भेजा भी मिला था । उत्तर की कुछ सूझी ही नहीं, कहूँगा ।

इधर दस बारह दिन हुए माधुरी-कार्यालय में आपका लेख गीतिका पर वाला, देखा था । कुछ अच्छा प्रभाव नहीं पड़ा इसलिए नहीं कि उसमें मेरी काफी तारीफ नहीं है बल्कि इसलिये कि जमाना जितना बढ़ता जाता है लोगों की बुद्धि उतनी मंद होती जाती है ।

भले और बुरे का प्रभाव मनुष्य मात्र पर पड़ता है यह ठीक है कोई चाहे तो कह सकता है—चूँकि तुम्हारे मुजाफिक कम ठहरा, लेख इसलिये तुम्हें पसन्द नहीं आया । पर मैं अपने को इतना कमजोर नहीं पाता तारीफ में भी नहीं ।

आपने रवि बाबू के इस नीचे दिये वन्द के लिये जसा लिखा है कि गीत सीधे उतर जाता है, बिना मिहनत के मन में बसा ही आप बतला भी सकेंगे कि इन कारणों से उतरा । मुझे शक है मेरे दिल में नहीं बैठता ।

— को तुहें बोलवि भोय ?
हरि हासि तव मधुऋतु धावल,
शुनयि बाशि रव पिक फुल गावल,
विकल भ्रमर-सम त्रिभुवन आवल
चरण-कमल युग छोंय ।

इस वन्द में जिसका परिचय या नाम कवि जानना चाह रहा है, उस सामने देख रहा है यह इस पहली पंक्ति से सूचित है बाद को और साफ हो जाता है, जब उसकी हसी देखकर मधुऋतु दोड़ता है,—बगी सुनकर कोयलें गाती हैं और विकल भौरे की तरह तीनों लोक आकर चरण कमल युग छूता है ।

आपन भी रवीन्द्रनाथ की तरह बात-की बात में देख लिया है इस मूर्ति को, अच्छा, पूरी तस्वीर न सही, ये पैर ही मुझे आप दिखा दीजिये ।' अगर इन पैरों के देखने के लिये किसी विशेष दर्शन की जरूरत हो तो वह भी बताइयेगा ।

"तरलतीवाङ्गानि स्वल्पदमल लावण्य-जग्धौ" वाली आलोचना में भी यही हाल है, आपके लिये नहीं, मेरे लिये ।

जब 'स्वल्पत' 'लावण्य' है, तब वह "जलधि" कैसे होगा, यह आप समझ भले ही लें, समझा न सकेंगे ।'

सोता, गड्ढी, गढा क्षरना और नदी समन्दर नहीं ।

मल' और 'जल' के अनुप्रास की भूख इसे कहते हैं ।

फिर स्थिति की शङ्का है कि किम जगह (काव्य के स्थान में), अङ्ग समन्दर पर तरले-से हैं । जरा लिखियेगा ।

१ पैर नहीं, चरण-वमल कृष्ण के कौन जिसे दिखा सकता है ? उपनिषद वन्ती है यमेवप वणुत तेन लभ्यस्तम्यप आत्मा विवृणुत तनु स्वाम । हाँ, राधा की आलोकमयी दृष्टि ने उन अलोक सामान्य चरण वमलों के अवश्य दर्शन किए थे ।

२ कोरे दूधनशारत को दुहाई मैं न दूंगा । अरूप के आग्रही रूप का रस क्या जानें ? फिर भी नारद और शारङ्गल्य से सहायता की आशा की जा सकती है । भागवतवार के अनिरीक्त रूप और जीव गोस्वामी पथ प्रदर्शक हो सकते हैं । भक्ति-शन के अनन्य अनुभवों प्रह्लाद कह सकते हैं ।

या प्रीतिर विवेकाना विपयेष्वनपापिनी ।

त्वामनुस्मरत सा मे हृदयाभाऽपनपतु ।

३ मैं समझा सकता हूँ । 'स्वल्पत' का अर्थ 'रिमता हुआ' नहीं, 'हराता हुआ' है । स्वयं कुन्तक म्छल दमल-लावण्य-जग्धौ' का पर्याय 'समुद्र-सद-विमल-सौन्दर्य सम्भार सिधौ' बताते हैं । यहाँ लावण्य रिस नहीं रहा, सौन्दर्य का क्षणर लहरा रहा है ।

कवि ने वतमान काल की क्रिया में गत प्रत्यय का विधान जानबूझ कर किया है । वह बहुत कुछ उसी काटि का अभिव्यक्ति दे रहा है जिम कोटि की अभिव्यक्ति वेदव्यास न दी है

'आपूय्यमाणमचलप्रतिष्ठ

समुद्रमाप प्रविशति दृष्ट ।'

'घुलती मेरी शफाली' आपन। याद ही है। नही तो दख लीजियगा। वसा एक-एक गीत तुलसी मूर कबीर और मीरा स उदत करके भज दीजियेगा, यानी वसे ही ढग वा।

कवि कहता है मोदय्य वा सागर निरन्तर लहरें ले रहा है। जिसम उम (तरणी) के अन्न अन्न तरत से जान पड़ते हैं। सागर हर घडी लहरा रहा है जन्न सव समय तर रहे हैं।

रवीद्रनाथ क—

अङ्गे-अङ्गे योवनेर तरङ्ग उच्छल

म यह सोचव नही है। 'योवन की उच्छल तरङ्ग म शील की भङ्गिमा नही—अनङ्ग रङ्ग है। 'यद्यप्य कुछ भी नही सपाट रूप भर है। तरती वाङ्गानि' की बारीका देखते ही बनती है।

आप मुझे कहने दें रवीद्रनाथ के—

'अङ्गे जङ्गे योवनेर तरङ्ग उच्छल' की तुलना म आपकी अभिव्यक्ति अधिक आवजक है

घर अङ्ग अङ्ग को

लहरी तरङ्ग वह प्रथम तारुण्य की।"

इसम 'घर' का कोई जवाब नही। तारुण्य उससे अङ्ग अङ्ग को घरकर तरङ्गित होता है। वह अपनी तरफ से मासूम है। चाह कर भी लहरी के थपेड़ से नही बच सकती।

किन्तु यदि आप अमल जीर जल के अनुप्रास का लोभ सस्कृत कवि म दिखलाते है तो पूछता हू— लहरी तरङ्ग क्या है? यह क्या अन्न अन्न के नाद साम्य द्वारा विम्वात्मक सौन्दर्य को अधिक उद्दीप्त करने का लोभ नहा है? लहरी लहर वह भी तो चल सकता था फिर इस अनुप्रास स क्यों न काम चला? लहर का लहराना मुहावरे मे है तरङ्ग का लहराना नही।

मेरी समझ स सस्कृत कवि ने नात्र मोदय्य क 'अतिरिक्त जलधि' का लावण्य क साथ अत्यन्त साथक प्रयोग किया है। 'जलधि' वा कोई भी दूसरा पर्यायवाची शब्द तरङ्गित क सत्रम म लावण्य के साथ सटीक नही बठना।

मेरा अहङ्कार पीछे है सस्कार की बात पहल। आप जानत हैं हिन्दी, बंगला म मरो एक-सी रचि है। मुझ सस्कृत की सी कलात्मक पूणता कही नही मिलनी मैं क्या करूँ? पत्र जी लिखते हैं —

बजा दीध सासों की भगी सजा सटे कुछ कलशाकार
पलक पाँवड जिछा खड कर रोजों मे पुलकित प्रतिहार
घाल पुषनिर्घा सान कान तक चल चितवन के चदनवार,
देव तुम्हारा स्वागत करतीं घोल सतत उत्सुक दग द्वार।

“दिन” शब्द का प्रयोग महादेव के लिये गोस्वामी जी ने रामायण में किया है वह क्यों नहीं किसी को छटका, समझ में नहीं आता।” दिन दोन

अब इसका मुरावला सस्त्रुत का यह पद्य देखिए, पत जी की पत्तियाँ जिनकी छवि की छाया भर हैं —

अत्युन्नत स्तनयुगा तरलापताक्षी
द्वारि स्थिता तदुपयानमहोत्सवाय
सा पूणकुम्भनवनोरजतोरणस्रक्—
समारमङ्गलमयत्नकृत विद्यते ।

आप पहले कालिदास के ‘पयोधरोत्सेधनिपातचूर्णिता’ की मेरी व्यञ्जनात्मक विवृति पर अश्लीलता की बात लिखकर मुझे मौन कर चुके हैं, यदि यहाँ भी ‘अत्युन्नतस्तन-युगा’ आपको अश्लील प्रतीत हो तो मुझ सहज जिज्ञासु भाव से पूछना पड़ेगा

‘सजा सटे कुच फलशाकार’

—पन्त

या

‘उकसे ये अँवियों से उरोज’

—पन्त

क्या है? सस्त्रुत का अश्लील हिन्दी में श्लील कैसे हो जाता है? क्या कोई कालिदास से भी बड़ा कवि हो सकता है? अस्तु,

उक्त भाव को महाकवि अमरुक ने और ऊपर उठा दिया है —

दोर्घा चदनमालिका विरचिता दृष्ट्यक, नेत्रोवर
पुष्पाणां प्रकर स्मितेन रचितो, नो कुन्दजात्यादिभि,
दत्त स्वदेवमुखा पयोधरयुगेनाघ्र्यो न कुम्भाम्भसा,
स्वरेवावपय प्रियस्य विशतस्तथ्या कृत मङ्गलम् ।

४ गोस्वामी जी का प्रयोग लोगो को अघ भक्ति के कारण नहीं छटका। दोष युक्त तो यह है ही। मम्मट ने इसे ‘अवाचक’ दोष कहा है। तद्विच्छेद-रजाघकारितमिदं दग्धं दिन कल्पितम् का उदाहरण देकर बताया है—‘अत्र दिनमिति प्रकाशमपमित्यर्थे वाचकम् ।

मैं यह मानता हूँ, यहाँ वह दोष नहीं। रात में खिलनेवाली दिन में दीन दिख रही है। किन्तु ‘दिन दोन’ के तत्पुरुष न शब्द और अर्थ की मन्त्री पर चोट की है। हमारे क लिए यह दोष न भी हो—

“आओ आओ मधु पद
मेरे मानस की कुसुमित वाणी !”

लिखन वाले निराला के लिए है। हममें गम्भीरता की कमी नहीं, प्रसन्नता नहीं है।

म तो और बहून-भी बानें जा-बुगनर रक्की हागी लियन बाल न । "मजी री में दीन" घाजन उते देर न होनी, जबकि 'री रे व यह अनगर प्रयोग खाना है ।

इसी के स्पष्ट ध्वनि 'बाले व' के मुताबके 'मधुश्रुतु पावल' को रगन तो साधारण लोग भी कुछ रस लेते, अगर सीधे न उतार कर कुछ बान की भी बात होनी ।'

५ स्पष्ट ध्वनि आ धनि, सजी यामिनी भली
मद पद आ, मद कञ्ज उर को गली
मञ्जु, मधु गुञ्जरित बलि बल समासीन ।

के मुताबक 'मधुश्रुतु घावल' का मैं नहीं रस सकता । कारण,
हेरि हासि तय मधुश्रुतु घाओल,
शुनयि वीसि रय पिक् कुल गाओल
बिबल भ्रमर-सम त्रिभुवन धाओल,
घरण कमल युग छोमे ।
की तुँहु बोलबि मोय ?

इन दोनों के शिल्प और बंध्य में असाधारण अन्तर है । निराला के कठिन ताल वाले गम्भीर सन्नीत की तुलना में टगोर का सन्नीत यात्रा पार्टी वाला है । बाउल या कीतन या भाटियाली में सुरा की गतिमती दर्दोली टर प्राणा क पदे पार करने वाली होती है लय ताल की मन्थरता लिए हुए उस्तादी नहीं हाती ।

फिर हेरि हासि' वाली उक्ति में मामिकता चाहे जितनी हो श्रुतता उससे भी कहीं बढकर है । राधा की मुग्ध विभुषता साकार हो उठी है ।

निराला वाले गीत में एक अजब सा बाँकपन है, अनोखी नाटकीयता है । दोनों दो स्तर की प्रेयसियाँ हैं । बयोभेद भी है । उसका (निराला बाँकी का) उदगार प्रीति प्रकप लिए हुए है ।

फिर भी तुलनात्मक विवेचन करने पर कला का निखार निराला में दशनीय है ।

कसी बजी बीन ?—धुन सुनकर बावरी हुई सी पहले वह बिहुकती है कि यह ऐसी कसी बाँसुरी बजी जा दिन भर दीन दिखन वाली मैं सहसा सज गई ।

'वह कौन है जो प्राणो में बाँसुरी छेड़ रहा है—मिलन का मधुर सुर सुना रहा है कि जिसके अमित उल्लास के कारण अभी यह मायावी ससार चादनी-चादनी हुआ दिख रहा है—उसकी तामसी ईर्ष्या घुल गई कठोर दम्भ घुल गया है ? काइ मरी आर तजनी उठाने वाला न रहा और उस सजल स्वर में मछली की तरह डूबकर विलीन रही हूँ ?

इसी तरह आपका कुछ धातु है उनका ही अस्तार से। "उत्तमपाद" पत्तियों को ब्रजभाषा बनाकर दमिय, धातु बन जायगी, फिर सीधे उतरने में दिक्कत न होगी।

"कारण महाकारण" को निष्कारण कर के चुप की भाषणा कर रहा हूँ इसलिए पत्र लिखने की रधि नहीं होती—आपके अमफल का क्या अर्थ है ?"

'हाँ हाँ मैं माफ़ साफ़ सुन रही हूँ, सुरीली ग़ामुरी टर रही है सखी या कभी नशीली चाँदनी रात है यह ! होले-होले चली आ, उर की कुञ्ज गली बंद है। डरना महमन की कोई बात नहीं हम और तामन यामन वाला काई नहीं है। मुदरि, देखती नहीं जरा-भी मीठी गज सुनकर वट कली कैसे लल पर बिराज गई !"

पतिरेकी अतध्वनि है "और एक धर तू है जो टर पर टेर लिए जा रही है मगर हिलन का नाम तक नहीं ले रही है ! अब भी उधेड-धुन में पड़ी है अब भी मीन-मेख निकाल रही है ? अरी, अब आ भी जा !"

कली जैसे चित्र की सहनायिका है जो अपने दल (मानवीवृत्त) से मिल चकी है वह भी खुशामदी भौंरो की मीठी मीठी गुनगुनाहट सुनकर ! कसी नमदिल है कली जो जरा भी प्यारी गुंज सुनते ही उमग उठी झटपट अपने दल से मित्र गई और इधर एक यह एमी न जान कैसे है जिस सुरी का स्पश वचन नहीं कर रहा, लय की चोट नहीं लग रही !

कली को दल-समाप्तिन' दिखलाने का तात्पर्य तीव्र उद्दीपक वातावरण मिरजना ही हो सकता है। फिर वट तो नन्ही-नादान कली भर है जो भौंरो की चाटुकारिता की विवेकिनी नहीं महज मीठी घुंज सुनकर पल भर में पुलक उठी है, और यह ? यह तो गामुरी के सुरा की ममता है, स्वर क्या कहत है खूब समझती है, फिर कैसे ठगा-भी स्त्री खड़ी है ?

कली मधु-गुजार से मानी तो अपने दल के पहलू में पठ गई, यह इस मुर धुन की उत्तेजना ने उमन होकर दुनिया की आर से मधुदे हुए मन के मिलन मन्दिर में क्या नहीं जाती ?

अरे कही बाहर तो नहीं जाना जा चोर-पाँवो चलने पर भी हल्की फुल्की आहट होगी ! पुकारन वाला पहले ही प्राणा में पँठ चुका है द्रन्दा दुःखिओ का छाटनर, हीने हीने, अपने ही अन्तर के वासरगूह में तो प्रवेश करना है ! फिर कभी अमिक !

यह चाँदनी की धुली हुई वसन्त की रात, वह दल पर इठलाती हुई मस्त कली क्यों नहीं समझती है वह प्रकृति का कोई सकेत जबकि वह स्वयं भी अभी मधुमती कली ही है !

६ अमफल का अर्थ कलाकार के रूप में अमफल नहीं है। मैंने उसी लेख (गीतिका में निरागम माधुरी अगस्त, १९३८) में लिखा था

"अलौकिक निरागम की अभिमान के समान गुंज गम्भीर उत्तेजना के सदृश प्रबल जीवन की नाई जटिल गीति-जल धारा "

'भुवामनोमाहिनी' व मन्वन्ध म औरा १ जोर रवि बाजू १ भी िया है । यह आपसे बहुत मुझापित गहा ।

मुपरमधीर त्यज मन्जोर रिपुमिय बेलियु सोऽम
और

गिरियर-गदअ पयोधर पर सित गिम मज मोतिव हारा
की तरगतनिगल्य' कयो समता नही पर सतता यह ता अयो स ही साप है
पर आपसे—

सौध सिधर पर प्रात मनोहर
वनर गात सुम अरण धरण धर
सरणि सरणि पर उतर रहा भर
छन्द अमर-गुञ्जित नीलोत्पल ।'

उसके मुनावले कयो नही रया ?

योई अजभापा (ग्रामीण भापा) व लाहले अगर—

लङ्का पदतल शतदल
गजितीमि सागर जल
धोता शुचि चरण युगल

स्तय कर बहु अथ भरे !

वा उच्चारण न कर सकें तो यह धडी बोली वा कसूर नही कहा जा सकता ।

आपका

निराला

प्रसाद का समय निराला के गीतों में नहीं और निराला की उन्मुक्त उच्चभूमि प्रसाद की दृष्टि से ओषल । एक में दर्शन का प्रकाश है दूसरे में ज्योति के दान । एक सबल है दूसरा बलिष्ठ ।

आकषण पत व गीता का सबसे बड़ा गुण और दुरुहता निराला की सबसे बड़ी कमजोरी है । कला पर दोना की जबदस्त नजर है पर पन्त लक्षित नहीं हाते निराला छिपा नहीं सकते । पन्त अधिक से अधिक शान्ता भ याख्या करते हुए गाते हैं निराला कम से कम पदा में महत्तम का गान करते हैं ।

महादेवी का आरम्भ और निराला की परिणति मत्री की वस्तु है । महादेवी की नारी सुल्भ सुकुमारता और निराला की पुष्टपष्ट प्रौढि सत्य सष्टि है ।

प्रिय जानकीवल्लभ जी
आपका पत्र प्रयाग में मिला था। आप व्याकरण की तैयारी करेंगे, पढ़ कर प्रसन हुआ।

मैंने हिन्दी में जगह देखी थी सस्कृत से अधिक इसलिए लिखा था। मेरी जा कित्तों छप रही है उनका नाम आप जानते ही हैं। गीत आपका सुंदर है।

रवि बाबू का तपित आँख वाला बंद भी बसा ही है। क्योंकि राधा की तपित आँखें जिसके मुख पर फिरती हैं, जिसके स्पर्श से वह मिहरती हैं और जिसके चरणों में अपनापन खोकर हृदय प्राण भर लेती हैं उसके लिये 'को तुहुं बोलवि मोय ?' की गुञ्जायश नहीं, वह आप और रवि बाबू की

१ मैं चिदंबर, व्यङ्ग्य से लिखा था जब हिन्दी में कलात्मक विप्रेषण कोई नहीं सहता, ऐतिहासिक चेतना और विशिष्ट प्रवृत्तियाँ को प्रमुखता और रूप सौष्टव को तरह दन की चाल है ता मैं ऐसे साहित्य से भर पाया अब व्याकरण का आचाय्य बनूंगा। मैं हाल और अमरुत और गोनधन से बिहारी को बडा सिद्ध करने या मानने में अममय हूँ। भुस्म भरी प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिए मैं 'सरस्वती श्रुतिमहती' के अरविदासन में आग न लगाऊँगा। साहित्य साहित्य है—हिन्दी का हो, सस्कृत का। मैं तुलना करता हूँ आनंद का तारतम्य दिखलान के लिए।

२ कसे बंद रखू चल लोचन प्रिय अतिसुंदर हे !
कसे विबल कलश में भर लू सकल समुंदर हे !
जात विजन क्षण आता,
सजल नयन, सखि निरख न पाती तब तक निदय जाता !
ममर कर उठते तर पल्लव मुन उसका रव हे !
बदल बदल यह रूप रग चलता नित नव नव हे !
चरण चाप पहचानी,
प्राणों का आवेग प्रजल, दुबल मेरा मन मानी !
कह, कसे अपना घर भर लू वह सब का धन हे !
कसे रोक रखू जब सब का वह अनिकेनन हे !
दता रहता फेरी,
कहाँ कहीं, किस किसने उसकी राह आह ! भर हेरी !

ही तरह स्कूल रूप में मनुष्य है और उसका नाम बध्ण है, पहले के वाक्यों से ऐसा ही प्रमाण मिलता है। फिर जिसके मुख है जो स्पष्ट करता है और परो पर जिम्मे अपनापन चत्ता है वह अनाम ही क्यों होगा ? यह सब आपको अच्छा लगता है लग।'

आपने जो लिखा यह होता है यानी मैंने जो प्रश्न किया वह एक प्रश्न ही नहीं। होता है तो हो मैंने होता है सुनने के लिये नहीं पूछा था वैसे होता है जानने के लिये लिखा था।'

अच्छा यह बताइये—

मुकुत हुए आ नेह के छित्तिज
रूप परस रस गद्य-सबद धन',—

अब भी कविता उत्तानपाद है ?—मुखिल है ?—गाई जा सकती है न ?
क्या जी, सीधी कैसे हो गई ?

३ अच्छा इसलिए लगता है कि कवि ने—तुम कौन हो ?—बहकर अलौकिक अनुभाव का—विस्मय विस्फुरित आनन्द की अतिशयता का सजीव चित्र अङ्कित किया है। जैसे राधा पूछ रही हो कि तुम दिखाई तो दते हो ऐसे—एक अनिन्द्य सुन्दर पुरुष जैसे ही, फिर यह अलौकिक ऐश्वर्य कहीं छिपा खचा है कि तुम्हारे एक एक शब्दित स अकेली मैं नहीं अगेप प्रकृति तरङ्गित होने लगती है ?

'कसी बजो बीन ?'

अथवा

किस समीर से काँप रही यह बशी की स्वर-सरित हिलोर ?

किस बितान से तनी प्राण तक छू जाती वह कण मरोर ?

आपकी इन पक्तियों में कसी और किस की सुन्दरता क्या दूर-दूरतर-गामी गज क कारण ही मोट्ट नहीं है ?

४ तब मैंने Stopford Brook नहीं पत्ता था

Milton was a scholar and in his writings we continually find echoes of what we fancy we have heard before. But the alchemy of his genius turns the ore of his predecessors into pure gold. He borrows but to improve and give it back as his own. It little matters where this and that came from the Poem as we have it in Milton's every line in thought in style in build in imaginative and moral power.

यह क्या गीतिका व निरागा व लिए हा लिया हुआ नहीं जान पड़ना ?

भ्रष्टा, रवि वात्र का 'कठिन है हृदय' और 'गलते हैं प्राण', इसीलिये रचना साधक है ?

और जब प्राण गले और पैर सँदे (फंसे) तब खुद व खुद न निवर्लेंगे, यानी हमेशा हृदय म रहग, यही साधकता है न ?

मैं जानता हूँ आप साधक बन देने की मिहनत कर सकते हैं, और मेरी रचना चूँकि आपको मिहनत नहीं द सकी, इसीलिये असाधक हुई ।

उसन 'कृपा समीरण बहने पर क्या कठिन हृदय यह हिल न सकेगा' मे लगाने क लिय कुछ नहीं रक्खा ।

'दिल हिलने' का मतलब ही है हृदय म कर्णा का आना फिर हवा के चलने से पेठ पीछे हिलते ही हैं—सूखी लकड़ी टूट जाती है या नहीं हिलती—यह हिलना पेठ का हरा भरा होना भी बतलाता है इधर कृपा की समीरण से हृदय हिलता है—हृदय या दिल हिल कर करुणोद्भेक से, रस भाव पैदा करता है, या पहे क कह हुए—

स्तब्ध दग्ध मेरे मरु का तर

क्या कर्णाकर हिल न सकेगा ?

की साधकता मे आता है । —यह मरु एसा होने क कारण ही असाधक है—क्यों न ?

मैंने आपको काई कोई उत्तर देने की हिम्मत नहीं की । आप अच्छे हो जाइये । मानसिक अशान्ति ईश्वर दूर करें ।

सुनता हूँ कोई-कोई आपको जवाब देनेवाले हैं कोई गीतिका की तारीफ मे लिखने वाले हैं । यह मरु अपनी तवियत की बात है ।

मैं जसा समझता हूँ, लिख देता हूँ । जब बहुत धिरता हूँ, तब जवाब देता हूँ ।

1 मैंन उमी खे म रवी द्रनाथ के—

'जानि आमार कठिन हृदय

चरण राजार योग्य से नय,

सधा, तोमार हाओया लागले हियाय

तनु कि प्राण गलवे ना ?'

से निराला के—

'जग के दूषित बीज नष्ट कर पुलक रपाय भर खिला रपाटतर

कृपा समीरण बहने पर क्या कठिन हृदय यह हिल न सकेगा ?

की तुलना की थी ।

ही तरह स्थल रूप में मनुष्य है और उसका नाम कर्ण है, पहले के काया से ऐसा ही प्रमाण मिलता है। फिर जिसके मुख है जो स्पश करता है और परो पर जिसके अपनापन चढ़ता है वह अनाम ही क्यों होगा ? यह सब आपको अच्छा लगता है लगे।

आपने जो लिखा यह होना है यानी मैंने जो प्रश्न किया वह एक प्रश्न ही नहीं। होता है तो हो मैंने होता है सुनने के लिये नहीं पूछा था, 'कसे होता है जानने के लिये लिखा था।

अच्छा यह बताइय—

मुकुत हुए आ नेह के छितिज
रूप परस रस गंध-सबद धन',—

अब भी कविता उत्तानपाद है ?—मुश्किल है ?—गाई जा सकती है न ?
क्यों जी सीधी कसे हो गई ?

३ अच्छा इसलिए लगता है कि कवि ने—तुम कौन हो ?—बहकर अलौकिक अनुभाव का—विस्मय विस्फुरित आनंद की अतिशयता का सजीव चित्र अङ्कित किया है। जैसे राधा पूछ रही हो कि तुम दिखाई तो देते हो ऐसे—एक अनिदय सुंदर पुरुष जैसे ही फिर यह अलौकिक ऐश्वर्य वहाँ छिपा रखा है कि तुम्हारे एक एक इन्द्रिय से अकेली मैं नहीं, अनेक प्रकृति तरङ्गित होने लगती है ?

कसी बजो चीन ?'

अथवा

किस समीर से काँप रही वह वशी की स्वर-सरित हिलोर ?

किस वितान से तनी प्राण तक छू जाती वह कण मरोर ?

आपकी इन पक्तियों में कसी और किस की सुंदरता क्या दूर-दूरतर-गामी गज के कारण ही मोहक नहीं है ?

४ तब मैंने Stopford Brook नहीं पता था

Milton was a scholar and in his writings we continually find echoes of what we fancy we have heard before. But the alchemy of his genius turns the ore of his predecessors into pure gold. He borrows but to improve and give it back as his own. It little matters where this and that came from the Poem as we have it in Milton's every line in thought in style in build in imaginative and moral power.

यह क्या 'गोतिका' में निराला के लिए ही लिखा हुआ नहीं जान पता ?

निराला के पत्र

अच्छा, रवि बाबू का 'कठिन है हृदय और 'गलते हैं प्राण', इसीलिये रचना साधक है ?

और जब प्राण गले और पैर सवे (फँसे) तब खुद ब खुद न निव-अंगे, यानी हमेशा हृदय म रहेंगे, यही साधकता है न ?

मैं जानता हूँ, आप साधक बन देने की मिहनत कर सकते हैं, और मेरी रचना चूँकि आपको मिहनत नहीं दे सकी इसीलिये असाधक हुई ।

उसन 'कपा-समीरण बहने पर क्या कठिन हृदय यह हिल न सकेगा' में लगाने के लिये कुछ नहीं रखा ।

'दिल हिलने' का मतलब ही है हृदय में करुणा का आना फिर हवा के चलने से पेड़-पौधे हिलते ही हैं—सूखी लकड़ी टूट जाती है या नहीं हिलती—यह हिलना पेड़ का हरा भरा होना भी बतलाता है इधर कपा की समीर से हृदय हिलता है—हृदय या दिल हिल कर कणोद्रेक से, रम भाव पैदा करता है, जो पहले के वह हुए—

स्तब्ध दग्ध मेरे मरु का तरु
क्या करुणाकर खिल न सकेगा ?

की साधकता में आता है । —यह सब ऐसा होने के कारण ही असाधक है—
क्यों न ?

मैंने आपको कोई कोई उत्तर देने की हिम्मत नहीं की । आप अच्छे हो जाइये । मानसिक अशान्ति ईश्वर दूर करें ।

सुनता हूँ, कोई-कोई आपको जवाब देनेवाले है, कोई गीतिका की तारीफ । लिखने वाले है । यह सब अपनी तबियत की बात है ।

मैं जसा ममथता हूँ लिख देता हूँ । जब बहुत धिरता हूँ, तब जवाब देता हूँ ।

५ मैंने उसी लेख में रवीन्द्रनाथ के—

'जानि आमार कठिन हृदय

चरण राघार योग्य से नय,

सखा, तोमार हाओया लागले हियाय

तबु कि प्राण गलवे ना ?

से निराला के—

"जग के दूषित धोज नष्ट कर पुलक स्पन्द भर, खिला स्पष्टतर
कृपा समीरण बहने पर क्या कठिन हृदय यह हिल न सकेगा ?"

की तुलना की थी ।

आपको उत्तर तो मैं दूंगा ही नहीं क्योंकि खड़ी बोली अपने आप खड़ी होगी अगर खड़ी होगी। फिर मैं प्रचारक नहीं।

आप लोग बड़े बड़े निबन्ध लिखियेगा प्रथम लिखियेगा, बड़ी-बड़ी दोहाइयाँ दीजियेगा, मुझ भी, जितना समझूंगा, आनन्द आयेगा।

मैं तो कालिदास और रवीन्द्रनाथ से अपनी माँ का मुख ही अधिक पहचानता हूँ।^६

आप लोग जब कहते हैं रवीन्द्रनाथ गधों में घोड़े हैं और कालिदास घोड़ा में उच्च श्रवा तब मुझे आनन्द आता है, क्योंकि समानता हूँ, इसलिये मेरी माँ का मुख बहुत साफ मुझे नजर आता है।

आपका
निराला

६ मैं इस भीष्म तक के आगे अस्त्र डाल दान की विनय ही मानता था। एक बार परिमल की प्रथम कविता— मीन पर चर्चा चली। निराला न टैगोर की पकितियाँ—

थाक थाक राज नाइ, बोलियो ना कोनो क्या !

सेये देखी, चले जाइ, मने मने गान गाइ

मने मने रचि बोसे कतो मुख कतो धरया !

मुनाइ, शिल्प समझाया जोर धोल सस्त्रुत में इस भाव पर इसी निष्पुणता से कुछ बर्ता गया हो तो मुनाइए। मैंने भ्रमभूति का—

त्व जीवित, त्वमसि मे हृदय तिाय

त्व कौमुदी नयनयोरमृत त्वमद्ने

इत्यादिभि प्रियशतरनुसृष्ट मुग्धा

तामेव शान्तमथवा किमिहोत्तरेण ?

मुनाया, मा याहीस्वपमद्गल बाला पय गूनुगुनाया पर उरें मह शव कुछ यात अच्छा न लगा। हाँ प्राकृत की एक आर्षा अथ समान पर कुछ जैची—

कि भगिनो भण्ड किंति अथ कि वा इमेण भगिण

भगिणिनि तह्वि अहया भगिणि कि वा न भगिणिनि ।

कुछ इति कि 'न न व' थाया उनका मानदण मरी भी राह रावकर सदा हो गया था।

भूसागण्डी, हाथीखाना,
लखनऊ
५०६-३८

प्रिय जानकीवल्लभ जी,

अभी-अभी आपका पत्र मिला। हिंदी से आपको प्रेम होगा—कोई फज-अदायगी समझेंगे तो अपने आप लिखेंगे मैं एक पाठक की हैसियत से जितना आनंद प्राप्त कर सकूंगा आपकी चीजें पढ़कर प्राप्त करूंगा भरे लिये इतनी ही सुविधा है।

रही बात व्याकरण सीखने की यह आपकी तबियत पर है। विषय कोई नीरस नहीं, इतना मैं कुछ-कुछ समझ सका हूँ।

मुझे अपनी चीजों की अनुकूलता प्रतिकूलता बढ़न कम अनुकूल प्रतिकूल कर सकती है यो दूसरों की तरह कमजोरिया मुझमें भी हैं क्योंकि दूसरों की तरह आदमी मैं भी हूँ।

मैं देखता हूँ, चीज खुद अपने म कहीं तक बन सँवर कर खड़ी हो सकी है। जिन लोगों ने उत्तर लिखने के लिय कहा है उन्होंने अपनी तरफ से कहा है न ता मैंने अपने भाव दिए हैं, न उत्तर देवन के लिय मुझे कोई औत्सुक्य है।

मैं जानता हूँ, रवि बाबू के (आपने द्वारा) उद्धृत बंद—हेरि हासि तब—स गरा 'बजी बीन वाला—'स्पष्ट ध्वनि आ धनि"—बंद बहुत तगडा है, इसी तरह 'जानि आमार कठिन हृदय' स 'जग के दूषित बीज नष्ट कर'।

जो लोग मुझसे लिखन के लिय कहते हैं वे दूसरी जगह यह भी कहते हैं कि चूकि निराला जी की इच्छा है, इसलिये लिखेंगे। उनमें कुछ लोग ऐसे भी है जो ऊंचे दर्जे के हैं लिखने के लिये वे जो कुछ भी लिखें।

कुछ का कहना है, यह जो तुलसी-भूर आदि पर लिखा है यह अच्छा नहीं किना निराला जी न। पर व भूत जाते हैं निराला न दोषी भी नहीं बपारी, उसी भूमिका म अपना मस्वार क बलने की वान भी उमन लिखी है और मुझे तौर पर प्रभाव को स्वीकार किया है।

यह सब तो जा कुछ होगा होता रहेगा। आपने और नहीं तो इधर के विशाल भारत' और 'वीणा' के अङ्क तो देखे होंगे। उनमें लिखा है, रवि बाबू प्रमुख बङ्गालिया न हिंदी की मुखालपन करनी शुरू कर दी है—उनका कहना है, हिंदी में तुलसीदास के सिवा और क्या रक्खा है सिफ बँगला राष्ट्रभाषा होने की योग्यता रखती है कांग्रेस हिंदी का प्रचार बंद करे।

क्या आप बता सकते हैं रवि बाबू प्रमुख बङ्गालियों की ऐसी स्पर्धा का क्या कारण है? क्या इसीलिये नहीं कि रवि बाबू के डक्के की चोट ने हिंदी को मूखमण्टरी को विवश कर दिया है कि वह रवि बाबू के गू को भी सार देखे और खड़ी बोली के सार-पदाथ को भी गू?

मरी कित्तबेँ कब निकलेंगी मैं नहीं जानता। मुमकिन दो महीने में तुलसीदास और अनामिका' निकल जाय।

आपके प्रश्नों का उत्तर मैं अभी नहीं लिख सकूंगा।^१ क्योंकि बहुत काम पड़ा हुआ है पूरा करने में लगा हूँ। एक नया उपन्यास भी लिख रहा हूँ। इसलिये अभी यहाँ न आइय।

१ मैंने साहित्य में असम्बद्ध ढेर सारे प्रश्न पूछे थे —

(क) आप एक अदना आदमी के अदना से लेख पर इस तरह बिगड़ खड़े हुए क्या इसी कारण 'जीवितकवराशयो न वणतीय' उक्ति न चल पड़ी होगी?

(ख) सन'३५ में आपके दशन हुए थे। कब तक तीन वर्षों में मैंने आप द्वारा निदिष्ट कविया दाक्षिणिकी और सगीत शास्त्रियों का स्वाध्याय द्वारा सागत कार मात्र ही तो किया है अभी मुझसे परिणत प्रज्ञा की क्या अपेक्षा करते हैं?

(ग) आप पर न लिखूँ तो किस पर लिखूँ? मुरारि ने क्या कहा है—

यदि क्षुण्ण पूर्वैरिति जहति गमस्य चरित
गुणरेतावद्भिर्जगति पुनरयो जयति क ?
स्वमात्मान तन्मदगुणगरिमगभीरमधुर—
स्फुरद्वाग्महाण कयमुपकरिष्यति कवय ?

आज नहीं समझता तो कब समझने की चष्टा करूँगा। मैं लक्ष्मण आपकी कृपा पर हाँ तो लिखना चाहता हूँ। छायावादी गंधीवादी की प्रतिक्रिया है—अथवा छायावादी पलायनवादी है एसी धोषी राजनीतिक उक्तियाँ पर नहीं। आपने कब लिखा कि परिस्थितियाँ में लिखा किना लिखा—इस पर मेरे दूसरे माथी लिखेंगे। आपने क्या लिखा—यही मेरा विषय होगा।

आप वीणा का तारा का लिए नोमिसुए तुंगार का पठिन श्रवणा पर हाँ दृष्टि रगिए, लाह की दुःशा पर न आइय।

‘साहित्य’ सभी का है। इसलिये अलग रहने की बात किसी ‘साहित्या चाम’ की नहीं हो सकती। आपको तरह में भी साधारण व्यक्ति हूँ। फल इतना ही है कि आपकी तरह असाधारण व्यक्तियाँ की ओर स्नेह मेरा कम बढ़ता है। न असाधारण कोई कुछ मुझे नजर आता है, जब उत्कृष्ट और अपकृष्ट के दर्शन पर विचार करता हूँ।

कुछ काल बाद निश्चिन्त होकर मैं आपको अच्छी तरह लिखूंगा। आपके प्रश्नों के उत्तर दूंगा।

मैंने चाहा था, आपको नई हवा खिलाऊँ। कोशिश की थी। पर आपने एक स्थिति में दूसरी स्थिति की समझना चाहा। मेरी आदम किसी का बिगाड़ना नहीं। जब दद पदा होता है, तब हर आदमी दवा के लिए दौड़ता है। सोचकर मैं चुप हूँ गया।

आप रम सिद्ध ही नहीं, पाठ गीति और गति में भी अप्रतिभट हैं, गम्भीर और मधुर और उदात्त काव्य रचना में आज आपका कोई समकक्ष नहीं। आप महासत्त्व भी हैं, सबदनशील भी। आपको सामान्य गुणप्राप्तिमा व प्रति क्षमा-शील भी होना ही चाहिए।

२ मुझे मेरी गरीबी ही नई हवा खिला रही थी। जब साथी सागी बेरि पर बताने में लगे थे, मैं लिखना पटना छाड़कर नौकरी कर रहा था। नौकरी के थका देने वाले काम से छुट्टी मिलने पर मैं पल भर भी विश्राम नहीं करता था। उस देशी राज्य में महज खादी पहनने के कारण कबिबर बंद अली फातमी की लुदशा होती थी। अथक थम के अलावा मेरी नई जिंदगी ने वहाँ कुछ नहीं पाया था।

यों निराला का लिखा मैं पढ़ चुका था

“श्रीक सम्भना बहिमुख दश विजय-वामिनी स्वामिनी बनने की लालसा रखने वाली थी। अरस्तू की महाप्रतिभा महावीर सिकंदर को इसी तरह उन्नतना देती है। भारत के महानैतिन चाणक्य चालों से उसे मात देत हैं या नहीं यहाँ हम पढ़ नहीं कहेंगे। कहना यह है कि चाणक्य भारतीय साहित्य के कोई सर्वोत्तम विकसित रूप नहीं, परन्तु अरस्तू अपने साहित्य का है।

भारतीय साहित्यिक यान्त्रिक उन्नयन से समाज की यत्रणा का हा विस्तार देखन है। मम दानव बड़ा ही सुन्दर कारीगर था। पर भौतिक उन्नति करन वाला होने के कारण वह दानव कहलाया।

३८

भूसामण्टी, हाथीखाना,
छपनरु
८ १२ ३८

प्रिय आचार्य जानकीवल्लभ जी,

आपका पत्र अब तक निरुत्तर रहा। आपके प्रथम पत्र का उसी समय उत्तर लिखा था आपका नहीं मिला। यहा भी नहीं आया।

मैंने कुल्ली भाट सवा ती सफे की किताब पूरी कर दी। छपन को गङ्गा पुस्तकमाला में दी है। अगर वहाँ न छपेगी तो दूसरी जगह देखूंगा। 'माधुरी' में उसका प्रकाशन बंद करा दिया है।

आपकी किताब (रूप-अल्प) आरछा में पुरस्कृत हो भी सकती है। आपकी तरह, लेकिन, रूपों के अभाव में बहुतरे हैं।'

इधर मेरी तबियत अच्छी नहीं थी। खासी, बोंछार, जुकाम आदि कई व्याधियाँ थीं। दुबल बहुत हो गया हूँ। यों कुशल है। यहाँ अकेला रहता हूँ। महीने दो महीने में घर बंदूट दूँगा। बहू रामकृष्ण के यहाँ गई डेढ़ महीना हुआ। आप प्रमन होंगे।

आपका

सूर्यनान्त त्रिपाठी

१ 'रूप-अल्प' एक ऐसे कवि की रचना थी जो तब तक बिहार में न रहकर भी हिन्दी का कवि नहीं, बिहारी कवि था। जिसकी कोई पृष्ठभूमि न थी जिसके काव्य रस से आलोचक उमत्त न हुए थे, जिसकी प्रशस्ति किसी ने नहीं गाई थी। फिर भी उस विश्वास था, निष्पन्न समीक्षक उमकी ताजगी को प्राथमिकता देने। उस वक्त तक के मुन स्वर से उमकी टेर निराली थी। पर यह सब कुछ न हुआ। पद हि सवत्र गुणाधीयते पुरानी उक्ति हुई, बह अय अपना अर्थ जो चुकी है, —निराला ने सावधान कर दिया था।

मैंने आर्थिक उल्पीडनों से तग आकर पढ़ने की उत्कृष्ट अभिलाषा से यह असामयिक प्रयास किया था। किन्तु निराला की दृष्टि में यह सब बोल था। उनके अनुमार पुरस्कार मिलने पर अर्थ लोभ से लिखन की ओर प्रवृत्ति बढ़नी और मैं स्थायी और गम्भीर से हट कर आकषक और लाप्रिय की आर बंदू जाना।

मैंने प्रतियोगिता में पुस्तक नहीं भेजी।

लिखना पढ़ना आपका धम है और कोई धम मनुष्य के स्वभाव में घर कर लेता है, तब छूटता नहीं। लेहाजा क्या कहें ?

आपका

निराला

आप मुझ पर जो कुछ लिख रहे हैं मेरी राय में, अभी न लिखें। जिन्होंने मुझ पर लिखकर कृपा करने के लिये कहा है उन्हें भी मैं रोक दूंगा, जो यहाँ हैं, अत्र वाले दूर हैं और शायद वे जेनरल रूप से लिखेंगे अगर लिखेंगे।

पन्त जी 'रूपाभ' में शायद मुझ पर कुछ अनुकूल आलोचनाएँ लिखायेंगे। उन्हें एक स्कालर मिले हैं वे भर साहित्य के सबसे अच्छे जानकार हैं पन्त जी की धारणा जोर लिखना है। यहाँ के रामविलास जी को भी पन्त जी ने लिखा है आलोचना के लिये। रामविलास जी शायद आप पर नहीं लिखेंगे।

मैंने इधर कुछ गीत लिखे हैं। सीधे साधारण हैं। एक—

भेरे नयनों में हैंस दो, हर
घरिद झर ।

+

+

+

अपनापन झूला

प्राण-शयन झूला

बर्छी तुम बिनयन से सञ्चर

छामे घन अम्बर ।

—निराला

'अपजी-मादित्य का जो विकास बहिर्मुख होने का कारण हुआ भारतीय साहित्य का बड़ी अन्तमुख होकर हुआ था और इसी प्रकार फिर होगा।

'जपनी शक्ति का पता अपने ही भीतर है बाहर नहीं। इसलिए यही अन्तमुख होने की दिशा दी गई।'

—निराला

[भारतीय और अपजी मादित्य'
परबरी ३३]

३८

भूमामण्डो, हाथीखाना,

लखनऊ

८ १२-३८

प्रिय आचार्य जानकीवल्लभ जी,

आपका पत्र जब तक निरुत्तर रहा। आपके प्रथम पत्र का उसी समय उत्तर लिखा था। आपका नहीं मिला। यहाँ भी नहीं आया।

मैंने कुल्ली भाट' सवा सौ सफे की किताब पूरी कर दी। छपने को गङ्गा पुस्तकमाला में दी है। अगर वहाँ न छपगी तो दूसरी जगह देखूंगा। 'माधुरी' में उसका प्रकाशन बन करा दिया है।

आपकी किताब (रूप-अरूप) औरछा में पुरस्कृत हो भी सकती है। आपकी तरह, लेकिन, रूपों के अभाव में बहुतरे हैं।'

इधर मरी तबियत अच्छी नहीं थी। खासी, बोंघार, जुकाम आदि कई व्याधिया थी। दुबल घटत हो गया हूँ। यो कुशल है। यहाँ अकेला रहता हूँ। महीने दो महीने में घर बदल दूँगा। बहू रामकृष्ण के वहाँ गई डेढ महीना हुआ। आप प्रयत्न हाँगे।

आपका

सूय्यनाथ त्रिपाठी

१ 'रूप-अरूप' एक ऐसा कवि की रचना थी जो तब तक बिहार में न रहकर भी हिंदी का कवि नहीं, बिहारी कवि था। जिसकी कोई पठभूमि न थी, जिसके काव्य रस में आलोचक उमत्त न हुए थे, जिसकी प्रशस्ति किसी ने नहीं गाई थी। फिर भी उसे विष्वाय था, निष्पन्न समीक्षक उमकी ताजगी को प्रायश्चित्त देंगे। उस वक्त तक के सुन स्वर से उसकी टेर निराली थी। पर यह सब कुछ न हुआ। 'पद हि सवत्र गुणनिधीयते पुरानी उक्ति हुई वह अब अपना जय खो चुकी है,—निराला ने सावधान कर दिया था।

मैंने जायिक उत्पीडो से तग आकर पठन की उत्कट अभिलाषा से यह असामयिक प्रयास किया था। किंतु निराला की दृष्टि में यह सब झोल था। उनके अनुसार पुरस्कार मिलने पर अप लाभ से लिखने की आर प्रवृत्ति बल्नी और मैं स्थायी और गम्भीर से हट कर आकषक और लोप्रिय की ओर बढ़ जाता।

मैंने प्रतियागिता में पुस्तक नहीं भेजी।

लिखना पढ़ना आपका धम है, और कोई धम मनुष्य के स्वभाव में घर कर लेता है, तब छूटता नहीं। लेहाजा, क्या बहूँ ?

आपका
निराला

आप मुझ पर जो कुछ लिख रहे हैं मेरी राय में, अभी न लिखें। जिन्होंने मुझ पर लिखकर कृपा करने के लिये कहा है, उन्हें भी मैं रोक दूंगा, जो यहाँ हैं, अथवा बाले दूर हैं और शायद वे जेनरल रूप से लिखेंगे अगर लिखेंगे।

पन्त जी रूपाभ' में शायद मुझ पर कुछ अनुकूल आलोचनाएँ लिखायेंगे। उन्हें एक स्वकाल मिले हैं वे मेरे साहित्य के सबसे अच्छे जानकार हैं पन्त जी की धारणा और लिखना है। यहाँ के रामविलास जी को भी पन्त जी ने लिखा है आलोचना के लिये। रामविलास जी शायद आप पर नहीं लिखेंगे।

मैंने इधर कुछ गीत लिखे हैं। सीधे, साधारण हैं। एक—

मेरे नयनों में हँस दोँ हर
घारिद भर !

+ + +

अपनापन झूला
प्राण शयन झूला
बढीं तुम बितवन से सञ्चर
छाये घन अम्बर !

—निराला

‘अंग्रेजी साहित्य का जो विकास बहिर्मुख होने का कारण हुआ, भारतीय साहित्य का वहाँ अन्तर्मुख होकर हुआ था, और इसी प्रकार फिर होगा।

‘जपनी शक्ति का पता अपन ही भीतर है, बाहर नहीं। इसलिये यहाँ अन्तर्मुख होने की शिक्षा दी गई।”

—निराला
[भारतीय और अंग्रेजी साहित्य'
फरवरी ३३]

३८

भूमामण्डी, हाथीपाना,

लखनऊ

= १२ ३८

प्रिय आचार्य जानकीवल्लभ जी,

आपका पत्र अब तक निरंतर रहा। आपके प्रथम पत्र का उसी समय उत्तर लिखा था आपका नहीं मिला। यहाँ भी नहीं आया।

मैंने 'कुल्ली भाट' सवा सौ सफे की किताब पूरी कर दी। छपने की गङ्गा पुस्तकमाला में दी है। अगर वहाँ न छपेगी तो दूसरी जगह देखूंगा। 'माधुरी' में उसका प्रकाशन बंद करा दिया है।

आपकी किताब (रूप-अरूप) ओरछा में पुरस्कृत हो भी सकती है। आपकी तरह, लेकिन, रूपों के अभाव में बहूतेरे हैं।

इधर मरी तबियत अच्छी नहीं थी। खाँसी बोखार जुकाम आदि कई व्याधियाँ थीं। दुबल बहुत हो गया हूँ। यो कुशल है। यहाँ अकेला रहता हूँ। मनीने दो महीने में घर बदल दूँगा। बहू रामकृष्ण के वहाँ गई डेढ़ महीना हुआ। आप प्रयत्न होगे।

आपका

सूर्यवान्त त्रिपाठी

१ 'रूप-अरूप' एक ऐसे कवि की रचना थी जो तब तक बिहार में न रहकर भी हिंदी का कवि नहीं, बिहारी कवि था। जिसकी कोई पद्यभूमि न थी जिसके काव्य रस से आलोचक उन्मत्त न हुए थे, जिसकी प्रशस्ति किसी ने नहीं गाई थी। फिर भी उस विप्लव था, निराला ममीक्षक उसकी ताजगी को प्राथमिकता देंगे। उस वक्त तक के सुने स्वर से उसकी टेर निराली थी। पर यह सब कुछ न हुआ। 'पद हि सवत गुणनिधीयन' पुरानी उक्ति हुई, यह अब अपना अर्थ खो चुकी है,—निराला ने सावधान कर लिया था।

मैंने आर्थिक उत्पन्नो से तग आकर पढ़ने की उत्कट अभिलाषा से यह असामयिक प्रयास किया था। किंतु निराला की दृष्टि में यह सब यो था। उनके अनुसार पुरस्कार मिलने पर अथ-लोभ से विद्यन की ओर प्रवृत्ति बन्ती थीर मैं म्यामी और मम्भीर से हट कर आकपक और ओरप्रिय की ओर चढ़ जाता।

मैंने प्रतिपत्तिता में पुस्तक नहीं भेजी।

भसामण्डी, हायापाना,

लखनऊ

२० १२ ३८

प्रिय आचार्य जान नीवल्लम जी

आपका प्रिय पत्र मिला । बबिना बडी अच्छी लगी ।^१

आपने रायगढ़ छोड़ दिया, ठीक है जो पढ़ते है आत्मी जी की मांग क सामने लाचार हो जाता है, बाहरी जसी भी मांगे हा ।

मैं रोज एक किताब कयो नही लिख डालना, आप लोगों की ऐसी मांग का मन ही मन यही जवाब दिया करता था ।

त्याग भोग भी इसी तरह जी की मांग पूरी करना है, वस्तुत कुछ नही, दाशनिक महत्त्व इनका कमी कुछ नही रहा जो कुछ मैं समझा हूँ ।

छाडकर भी आदमी ग्रहण करता है ।

जाधुनिक कला का तो आधार ही यह है पहल जो कुछ ही क रूप मे दिखलाया जाता है वह ना के रूप म परिणत किया जाता है आपके यहाँ— तदेजति तनजति—यही है ।

-
- १ तन चला सग पर प्राण रहे जाते हैं !
 जिनको पाकर या बसुध मस्त हुआ म,
 उगत ही उगते देखो अस्त हुआ म,
 हूँ सौंप रहा निष्ठुर ! न इहें ठुकराना
 मेरे दिल के अरमान रहे जाते हैं !
 किससे डुराव लूगा स्मति चिह्न सभी स,
 कर बढ़ा कहूँगा भूल गए न अभी स !'
 —या साव रहा अभिशाप भरे आ तब तर
 —हे देव अमर वरदान रहे जाते हैं !
 आओ हम सब मिल आज एक स्वर गाएँ
 —रोते आएँ, पर गाते-गाते जाएँ !
 म चला मृत्यु को आँखों का आँसू बन,
 मेरे जीवन के गान रहे जाते हैं !

निराला के पत्र

सम्मति' में कभी कुछ नहीं देता। मैं तो अकबर की नौकरी बजाता हूँ। आप वह कहानी जानते होंगे।

कहते हैं, एक दफा अकबर ने वीरबल से पूछा — 'वीरन, क्या तुम्हें भी कदरू अच्छा लगता है, हमें बहुत पसंद है।'

वीरबल ने कहा— 'हाँ जहापनाह, कदरू का क्या कहना है। खाने में जसा नम बसा ही लजीज।'

अकबर ने कहा—

'लेकिन आलू बहुत अच्छा होता है।'

'हा खोदाबद', वीरबल ने कहा, 'आलू लामिसाल है।'

अकबर ने कहा—

'क्या जी, अभी तुम कदरू की तारीफ करते थे, अब आलू की करते हो।'

वीरबल ने कहा—

'गरीबपरवर, मैं न कदरू का नौकर हूँ, न आलू का। हुजूर को जो अच्छा लगता है, वह मुझे हुजूर जान से पसंद है।'

'कुल्लीभाट बनता विगडता कुछ तो हो ही गया है, पसलिक जसा कहे।

'गोरा' विवेचन प्रधान है जी ऊब जाता है, ठीक है।

'शुद्ध-शुद्ध'—सब मजाक है अब ससार में तेल लगाने के दिन नहीं रह हिंदोस्तान में हैं, लगाइये, पर मालिश अच्छी नहीं।

२ निघन का स्वाभिमान। रायगढ़ छोड़ तो दिया, किंतु कुरू क्या ? निराला को अभिभावक समझकर कुछ विकल्प लिख भेजे थे, उनकी सम्मति चाही थी।

३ जीवन में पहली बार इतने रूप मिने थे कि मैंने प्राय सम्पूर्ण रवींद्र साहित्य खरीद लिया था। पण्डित मुकुटधर पाण्डेय के सामने रायगढ़ नरेश ने मुझे—

'जब जरा गदन झुकाई देल ली।'

को ससृत पद्य में रूपान्तरित करने कहा। मैंने—

मरा जो कुछ होगा हाता । जिन् लिखना है और जो कुछ लिख जाना है, बिना भर भी लिखेंगे लिखा जायगा ।

यही है कि एक ममता होनी है, वह पाला गादिय । यन्नी मौलिक साहित्य पैदा करती है । बाकी मज पोछे लगे रहते हैं । मैं अपन मित्रों से यही कहता रहा हूँ । पर सब जगत् परिणाम उलटा मिला है । ईश्वरेच्छा जगा आप भर लिय लिखते है ।।।

अब चौथे होस्टेल में रहकर क्या कीजियगा ? मैंने सोचा यहाँ साहित्य साधना यानी कविता लिखन के त्रियार से शायद आय हा क्याकि बहुत सी कविताए यहाँ लिखी हैं यहाँ सुविधा होती हो । मैं जब कोई नया मरान

प्रतिधीवाभङ्ग नयनमुग्धमङ्ग जनयति के रूप में उस तत्क्षण अनूदित कर दिया । यह प्रथम मास्यत्कर था । उन्होंने पुनक्ति हाकर पूछा

कलकत्ता देखा है ?

या मैं ५० मुकुटधर पाण्डेय के साथ उसी गाडी से कलकत्ता गया था जिससे रायगढ नरेश जा रह थे किन्तु हमारी मुत्ताकात कलकत्ता पहुचन पर हुई थी । मैंने समझूच निपध सूचक सिर हिला दिया ।

उहोने कलकत्ता घूमन के लिए जा रपए लिए उनसे मैंने रवीन्द्र-साहित्य (बंगला और अंग्रेजी में) खरीद कर वही मुख प्राप्त किया जो गणेश जी ने राम नामाङ्कित भूमि की परित्रमा कर प्राप्त किया होगा ।

बंगला का नशा यो भी कम उमत्त करन वाला नहीं फिर मैं तो अभी अभी इक्कीसवें वष में प्रवेश कर रहा था । कालिदास के बाद रवीन्द्रनाथ— दो पाटन के बीच साबिक बचने का कोई उपाय न था ।

[वान पर्यासिह शर्मा पर ही नहीं समाप्त हा जाना कि सस्कृत प्राकृत के कलाकारो में कोई भी बिठारी जसा न हुआ । हिन्दी में यह परम्परा अभी तक बरकरार है ।

किसी तुलसी-जयन्ती में हिन्दी के एक बडे विद्वान् (१) ने मुझे भी गुरु गम्भीर स्वर में यह सीख दी थी कि सस्कृत में तुलसीदास के जाड का कोई कवि नहीं । मैंने यो हसकर ही हामी भरी थी

होता भी कसे ? हाँ नाना पुराण निगमागम यदि हिन्दी में लिखे गए होने तो मरा दावा है सस्कृत में भी (तुलसीदास जसा) काई न कोई कवि अवश्य पदा हो जाता ।

जो लडके नोट पढ कर इम्तहान पास करते हैं उनके जाग टेबल्ट की बडाई करना बकार है ।

४०

112 Maqbool Ganj

Lucknow

30 12 38

प्रिय जानकीवल्लभ जी

पत्र मिला । इम्तहान दे कर यहाँ आइये ।

यहाँ से लडके गये है आपसे मिले होंगे या मिलेंगे। तस्वीरें भेज रहा था फिर एक का निश्चय बदल गया फिर मेरी अनुपस्थिति में वह चला गया । खर एक दूसरी छोटी तस्वीर भेजता हूँ । यह मेरी अब तक की तस्वीरो में अच्छी मानी जाती है । बाकी यहाँ लीजियेगा ।

पैर का दद बढा है । आपका लेख माधुरी में ७/८ दिन में प्रकाशित, निकल जायगा । इम्तहान अच्छी तरह दीजिये ।

गुप्त जी (राष्ट्रकवि श्री मधिलीशरण गुप्त) ने कहा था—हम उनसे (आपसे) मिलेंगे उनका पता क्या है । मैंने कहा था—मैं राय कृष्णदास जी के वहा आपसे मिलने के लिए लिखूंगा, २७ फरवरी को अगर मित्र सके । उन्होंने कहा—नहीं तो हम मिलेंगे, मालूम होने पर, कहां हैं । इति ।

आपका
निराला

४१

भूसाभणी हाथीघाना लखनऊ

२५ ३ ३६

प्रिय आचार्य जानकीवल्लभ जी,

आपका पत्र प्रयाग में भी एक मुझे मिला था । मैं इन तिनों कुछ उलगा भी हूँ और कुछ उगातीन । उलगा इम्तिय कि मर पाग बहिष्मचन्द्र का पूरा मारिन्द हिन्ना अनुवाक व त्रिय आया है—एक दो उपराग मैं अनुवाति कर

भी चुका हूँ, उदासीन इसलिए कि फिज़ूल की दन्तनिषोढी अच्छी नहीं गती— मेरा अपना काम छपने को बहुत पडा हुआ है।

'तुलसीदास' और 'अनामिका' निकल गई। २०/२० प्रतिपात बात की बात में हर हो गई जो मुझे मिली थी, मेरे पास भी नहीं कोई। आपको फिर भेज सका तो भेजूंगा, हालांकि प्रतिया आप ही जैसे योग्य जना को देना चाहता था। वाजपेयी जी को भी नहीं भेज सका।

लखनऊ में दो तीन किताबें निकलने को हैं—कुल्लीभाट वगैरह उही के फेर में हैं।

लीटर से भी अभी वो किताबें निकलनी हैं जिनका रूपमा में छा चुका हूँ। एसी की अङ्कन उद्घन है। इसीलिय कल्कते स उधर नहीं जा सका, प्रयाग चला आया।

'चमेली' के बाद 'दिल्लेभुर वकरिहा' 'रूपाम' में मेरा निकलेगा इसी अङ्क से पढियगा यह ज्यादा अच्छी चीज है।

'चमेली' पर 'विशाल भारत' में खिलाफ जादोलन शुरू हो गया, अब तक आप पढ चुके होंगे।

क्षमा आदि सब अपशब्द हैं, इससे भले आदमी की तरह प्राञ्जल भाषा में माली देना अच्छा है।

आपकी पुस्तक (रूप-अरूप) के छपने की वानचीत वाजपेयी जी से सुनी थी। आपका पत्र भी देखा था, वाजपेयी (पण्डित नन्ददुलारे वाजपेयी) जी को दिया। उसके सम्बन्ध में क्या हो रहा है ?

अनवानेक कारणों से मैं आपलोगों से दूर रह गया हूँ, जिसे अमसृष्ट हो गया हूँ। आपका साथ कुछ दिन रह तो अच्छा है। आप अब तक आते या क्या करते हैं ? फिर कहीं जायेंगे ?

बहा, मैं अभी मानसिक रूप से स्वस्थ नहीं। प्राय दो-तीन महीने मुझे स्वस्थ हान में लग जायेंगे। काम सुधरा हो जाय, तब आराम की सांस की मोचूँ।

साहित्य में बहुत पिछड गया हूँ।

'पापल' महाशय की नमस्कार।

४२

भूसामण्डी, हाथीखाना,

लखनऊ

१६ ४ ३६

प्रिय जानकीवल्लभ जी,

उत्तर बहुत देर से दे रहा हूँ । आपका पत्र इस समय पास नहीं । पता लिखते वक्त खोजूंगा ।

आपका जॅप्रेजी का पर्चा अच्छा नहीं हुआ ध्यान से पता या देवा नहीं होगा । तैयारी एरु की सी सब की है ।

आजकल संस्कृत पढा रहे हैं ध्यान दे आता हांगा ।

'रुपाभ मेरे पास रह नहीं पाता । उसमे कि ही विष्णुस्वरूप जी ने (विशाल भारत के) आक्षेपों का जवाब दिया है । विशाल भारत में कुछ मुमकिन निकले ।

आपको जो लोग मेरा चेला समझते हैं वे गलती करत है ।'

और मय मुशकल है ।

इलाहाबाद से एक मासिक उच्छिद्यल निकला है रामविलास जी व कर्त्त लेख और कविनाएँ बहुत अच्छी अच्छी उसने अब तब व दो अद्भुत म निकल चुकी हैं । इति ।

जापना

गुप्तमान

४३

भनामण्टी, हाथीखाना, लखनऊ

३० ५ ३६

रात ६

७ ६ ३६ का प्रेषित

प्रियश्री जानकीवल्लभ जी,

आपका पत्र मिला ।

आपके पिछले पत्र का उत्तर नहीं दे सका । आपकी कविताएँ मुझे गहून अच्छी लगी ।

सुधार में कविता में नहीं करता या नहीं कर सकता । सुधार से कविता में सुधारक की छाप पड़ती है जो मुझे अभीष्ट नहीं ।

रचना में बहुत-सी बातें रहनी हैं, आप लोग जिस तरह प्रातः प्रातः की भिन्न-भिन्न सम्स्कृत का पत्रा लगाते हैं, उसी तरह हिन्दी का भी लगना है, सम्स्कृत दर्शन, सामाजिक विचार, साहित्यिक प्रभाव मानसिक स्थिति शिक्षा आदि बहुत-सी बातें रचना के हृदय में रहनी हैं—दश-बाल कलामोघ-समन्वित, प्रादग्भित्ता तो रहती ही है । मर सुधार न करने या न पान का यही कारण है ।

इसी बात सीप देन की, जो इस पत्र में आपन लिखी है सो, मैं खुद जब कि दूसरों को सीप नहीं ले सका तब आपको क्या सीप दूँ ?—अगर यह कोई सीप है तो यही देता हूँ ।

आपका प्रशस्त पुस्तक की वान पदमर खुशी हुई । आपन उप पत्र में 'दृष्टार' (श्री रामधारी सिंह दिनकर) की तारीफ लिखी थी, किताब मैं पढ़ी, पत्र पर बहुत दिनों का पत्रा हूँ हूँ करति याद आया, अब सोचता हूँ, अगर कोई मिहारी भाइ 'दकार' लिखत ।

यगालिया के पडोमी हान के कारण, आपन बिहारिया में आज की मात्रा अधिक है । मुझे मैं जान फूजना बुरी वान नहीं किन्तु जो किताबें उनक लिख क्या होगा ? क्या वे गुणगपाटा पमद करें ?

बाँकीपुर पठन में मरी अनामिका—तुलसीनाम नहीं मिली । बिहार में

मेरी किताबों की कम खपत है अर्थात् लोकप्रियता नहीं, यह मेरी कामियाबी है।

आपकी पुस्तक का निबलना जरूरी है। दो एक किताब निकल जाने पर फिर अडचन न होगी।

मेरा 'कुल्ली भाट' छप गया। चार छ दिन में निकल जायगा। जून में दो किताबें लीडर प्रेस में लगने वाली हैं। बद्धिमचंद्र का पूरा साहित्य अनुवाद के लिये मिला है। दो किताबें अनुवादित कर चुका हूँ, तीसरी कर रहा हूँ। कुल्ली भाट के बाद अब गया पुस्तकमाला मेरी लिखी ३००/३५० सफ़ी की महाभारत छापगी।

रूपाभ सुना, बन्द होनवाग है। इति।

आपका
निराला

४४

भूसामण्डी, हाथीखाना,
लखनऊ
१६२६०

प्रिय जानकीवल्लभ जी

आपका पत्र मिला। कुछ दिन हुए, पागल जी लखनऊ आय थे। अनामिका मैं उनसे सही दो है। उन्होंने आपको मचित नहीं किया। शायद इन्तिहान की बजह पुरगत नहीं मिली।

आपकी रचनाओं में (रूप अरूप के गाना में) कोई-कौड़ी बहुत सुन्दर बन पड़ी है। पागल जी में ध्यानचित हुई थी।

इधर दुर्गराज जी का कवयित्रा श्रीमती गावित्रा श्रीवास्तव बा० ए० ग शांता होन के निमन्त्रण में महाराजि मथिरीगरा जी पधारे हैं, कल मर यहाँ आय थे, आपकी किताब दयी समपन दयकर बहन लग अब आपका प्रणाम

होगी, फिर अपने पास भेजी प्रति की बातचीत करते रहे—बीमारी के कारण अभी पढ़ नहीं सके ।

मेरे सम्बन्ध में मेरी मर्द नहीं मिल सकती । 'एक सट्टिप्रा' वाला हाल मानता है, जसा समझ म आय, लिब्रिये, सत्र ठीक है । यो मिलने पर कह दे सकता है । कौन मायापच्ची करे ?

अभी तीन दिन में गुप्त जी स—'दूरान्यश्चत्रनिभस्य त'वी' श्लोक चल रहा है ।

गुप्त जी त कहा, तुम सूजे हो हठी हो, कालिदास का मतलब बड़े बड़े विद्वान नहीं समझा सके, मैं जा कुछ कहता हूँ वही सही है ।

मैंने मन म कहा या ता कालिदान मूख था या आप हैं, पण्डिता ममर्दान ता हैं नहीं एक तरफ से 'गवि हस्तिनि' नजर आते हैं ।

जो दूमरे की बात नहीं समझ सकता या जो भौगोलिक अण्डवण्ड वणन करता है, वही मख होगा ।

जहा के समुद्र का वणन है वहा वह 'अयश्चत्रनिभ' है ही नहीं ।^१

आजकल मैं सिर्फ मर्दिघर्षा मार रहा हूँ । जगह जगह में अभिनदन मित रहे हैं उ ह इकटठा करके रख रहा हूँ । एक इस पत्र के साथ भेजता हूँ ।^१

१ रूप-अरूप महाकवि निराला को ही समर्पित है ।

२ हे समुद्र, चिरकाल की तोमार माया ?
समुद्र कहिल, मोर अनन्त जिजासा !
किमोर स्तब्धता तब ओतो गिरिवर ?
हिमाद्रि कहिल, मोर चिरनिरुत्तर !

३

थी

अभिनदन पत्र

श्रीमान् पण्डित सूर्यकांत जी त्रिपाठी निराला' की सेवा म—

हिंदा के युगान्तरकारी कवि ।

आपने हिंदी कविता म नवीन प्राण प्रतिष्ठा की है । हमारा पुराना साहित्य अपने चरम विकास को पहुँच चुका था उसमें नये परिवर्तन करने और समाज के साथ उसे आगे बढ़ाने की आवश्यकता का आपने अनुभव किया था । साहित्य की प्रगति के लिए सामाजिक आदर्शों के प्रति और कविता की रुढ़ियों के प्रति आपने विद्रोह किया था । इसके लिए आपको महँगा सौदा करना पडा

इससे पहले जो कुछ लिखा है, उस पत्र पर आप चोटी बटा डालेंगे इस लिए नहीं भेजूंगा।

लीडर प्रेस से लेखों का एक सग्रह ३१०/१०० पृष्ठों का निकल रहा है कम्पोज्ड हो गया है छपना बाकी है नाम है प्रबन्ध प्रतिमा इसके बाद कहानियों का सग्रह लगेगा।

इण्डियन प्रेम से, आपको मालूम है बड्किम व दो अनुवाद निकल चुके हैं। मैं जब तक तीन और करके द चुका हूँ।

है। वर्षों तक आपने साहित्य और समाज के प्रतिक्रियावादियों का सामना किया है। हिन्दी की नवीन शक्ति को आपन पहचाना था उसन आपका नाथ नहीं छोडा। इसीलिए हमारा विश्वास है युग की नवीन प्रगतिशील शक्तियों को आप अपनी ओर खींच सके हैं। धीरे धीरे आप एक विद्रोही मात्र न रहकर साहित्य में नये युग का निर्माता और उसका नायक हुए हैं।

नवयुग के अद्रदूत !

आज आपकी बापी नवीन साहित्यिकों की बाणी है। आपने अपनी कविता में जो आजपूज और गम्भीर भावधारा प्रवाहित की है उसन नय साहित्यिकों में आत्मविश्वास पैदा किया है और उन्हें आग बढ़ने के लिए राह दिखाई है।

आपके साहित्य को पढ़कर हम हिन्दी पर अभिमान होता है आपको अपने बीच पाकर हम आप पर अभिमान होता है और हिन्दीभाषी होने के नाते हम अपने पर अभिमान होता है।

अनेक विपन्न परिस्थितियों में रहते हुए भी आपन एक योद्धा की भाँति साहित्य की संवा की है साहित्य के उद्यान को आपने अपने रक्त से सींचा है। त्याग निष्ठा तपस्या का आदेश आपन साहित्य में हमारे सामने रखा है।

हे तपस्वी !

इतने दिन साहित्य संवा करने पर भी आपका उत्साह अब भी अत्यन्त है आपकी क्षमता अब भी युवकों जैसी है। इसीलिए हम समझते हैं आप युग युग में युवकों के लिए एक चिरवर्तीय और अनुकरणीय आदर्श रहेंगे।

हम साहित्यप्रेमी जो आपकी अभ्यथना के लिए यहाँ पर एकत्र हैं अपनी भक्ति को प्रकट करने योग्य कुछ नहीं कर पायें—लाख घेप्टा करने पर भी नहीं कर सकते क्योंकि आपकी सेवा अति महान है उसके आगे जनता का सम्मान कितना भी बड़ा हो, तुच्छ ही होगा। आप चिरकाल तक हिन्दी और हिन्दुस्तान की इसी भाँति संवा करते रहें यही हमारी आंतरिक कामना है।

रविवार

११ फरवरी १९४० ई०

चौक लखनऊ

हम हैं

आपके स्नेहभाजन

दी वास्मिक सोशलस्टस

निराला के पत्र

आपकी बहन का समाचार बड़ा ही दुःखद है। लेकिन वीर तो वार झेल कर ही वीर और धैर्य रखता हुआ ही घोर होता है। मैं आपको किन सहानुभूतिसूचक शब्दों में धैर्य दू नहीं समझ पा रहा।

अध्ययन निष्फल नहीं होता, बन्नी उसका फल मिलता ही है, आपके पिताजी का हाल अवश्य ही बड़ा बुरा होगा। ईश्वर उह शांत करें। आप निकम्मे क्यों निकले ?—आप तो निकम्मेपन से बाहर निकल

गये हैं। बुद्धिभद्र मजे में हैं, रेडियो स्टेशन, लखनऊ, में काम करते हैं बाल साहित्य

बचटा लिख रह हैं।

न मिले पत्र में शायद मैंने देश की परिस्थिति की ओर आपका ध्यान खींचा था और लिखा था कि तब तक सस्कृत के कवियों से आधुनिक हिंदी कवियों की एक तुलनात्मक आलोचना २०० पृष्ठों तक की लिख डालिये पक्षपातरहित होकर, कोशिश करूँगा कि छप जाय और कुछ पारिधमिक आपको मिले। माधुरी के सम्पादक से पुरस्कार देने के लिये अनुरोध किया था।

मुझे आप लोगों के विवास से प्रमनना है। अगर मैं अपनी दुबलता के कारण कुछ कर नहीं सकूँगा तो मुझे अस्तोप कम से-कम नहीं रहेगा।

आपना
निराला

१ उनी समय मेरी छोटी बहन सुमित्रा का, प्राय बीस बरस की उमर में आरम्भिक निघन हुआ था। 'सुमित्रा की शेष स्मृति'—नामक शोकगीति (एलेजी) शिप्रा में सङ्कलित, उसी दुःखद घटना से सम्बद्ध है।

२ मेरे कथित लेखों में ऐसी तुलनात्मक आलोचना निराला देकर चुके थे। निराला की कायकला में तो सम्पूर्ण अनिश्चित बंगला और अंग्रेजी तक तुलनात्मक दृष्टि फगई गई थी। मैं ऐसी (निराला द्वारा प्रस्तावित जैसी) आलोचना अनायास लिख सकता था किंतु यत्न-तत्न कलात्मक अभिव्यक्तियों में भारवि, भवभूति की कोटि का कवि समझना दूसरी। अथ की वान और है। तब यह मेरे लिए असम्भव था।

मैं कर्षों बकार रहा, भूषों मरा, मगर आत्मा के प्रतिकूल यह अर्थ प्रद काय नहीं किया।

४५

भूताम-डी, हाथीपाना,

लखनऊ

१७ ६ ४०

प्रिय जानकीवल्लभ जी,

आपकी हृदय म बड़ी प्रतीक्षा थी। पत्र मिलने पर बड़ी खुशी हुई।

पहले आपके लेख के सम्बन्ध में लिख दूँ। पाण्डेय जी से मैंने बड़ी विनम्रता से कह दिया था कि आपको माधुरी से पुरस्कार अवश्य दिया जाय। लखनऊ मिलने पर सोचा भी कि एक दफा पूछू लेकिन इधर महीने भर से होती हुई तरह-तरह की शिकायतों के कारण यानी अस्वस्थता की वजह जाना नहीं हो सका। अब आपसे बच्चा चिट्ठा मालूम हुआ। वास्तव में हिन्दी के पत्र पत्रिकाओं के बड़े धुरे उसूल है। मैंने इसीलिए इनमें लिखना बंद कर दिया है। साहित्य संदेश जैसे बहुत से पत्रों को मारने पर भी मैं कुछ भेज नहीं सका।

पत्र जी हाँ बहुत आगे निकल गये हैं। उनकी युगवाणी और ग्राम्या आदि नई किताबों के अतिरिक्त पल्लविनी भी निकलने वाली है। लेकिन अभी मेरी मौलिक किताबों की एक तिहाई से कुछ ज्यादा है और अनुवादित मिलाने पर चौथाई भी नहीं पहुँचते। मरी प्रबन्ध प्रतिमा' निकल गई है।

मुझे बङ्किम का अनुवाद जो मिला था उसमें (१) देवी चौधरानी (२) कपालकुण्डला (३) आनन्दमठ (४) चन्द्रगोखर (५) कृष्णवान्त की विल, (६) रानी (७) दुर्गेशनादिनी (८) राघारानी (९) युगलाडगुरीय कर चुका हूँ, इण्डियन प्रेस के लिये। प्रथम तीन अनुवाद निकल चुके हैं बाकी साल भर में निकल जायेंगे। पाँच पुस्तकें और हैं, 'सीताराम' कर रहा हूँ।

बस अनुवाद करता हूँ और अंग्रेजी पढ़ता हूँ। अकेला हूँ अपने हाथ ठोकता खाता हूँ।

इधर वैंगला लिखना शुरू किया है। हिन्दी आर बाङला प्रबन्ध थोड़ा थोड़ा करके यहाँ की नई पत्रिका 'बदना' के तीन अंकों से लगातार निकल रहा है।

यहाँ के बड़-बड़ बंगाली विद्वानों का एक समूह उसका सम्पादक मण्डल है।

निराला के पत्र

डा० नदलाल चट्टोपाध्याय, एम० ए०, पी० एच० डी०, डी० लिट् ने आपुनिक हिंदी काव्य पर एक लेख लिखा था, वदना की पहली सध्या मे । प्रमाद, निराला, पन्त, महादेवी, वियोगी आदि सभी आये हैं । लेख प्रशमात्मक है । जरा वियोगी को बनाया है, चूकि उन्होंने अपने को कही रवीन्द्रनाथ से बढकर लिख दिया है ।

लेख का एक यह भी मतलब है कि हिंदी के कवि बंगला जानत हैं । मेरी काफी तारीफ है, साथ मेरे बगला नान का भी उल्लेख । लेख अच्छा है ।

श्री रामविलास पी० एच० डी० हो गये । अब डाक्टर रामविलास हैं । आप वहाँ क्या करते है, कैसे हैं, लिखें ।

वास्तव मे आप ही लोग हिंदी के आशा भरोना हैं । अधिक् योग्य जनों को बडा दुख है समाजवाद का इमोलिये प्रसार बढ रहा है । युद्ध का भीषण रूप सामने है । देखिये, क्या होता है ।

आपके गीत मुझे बहुत पसन्द हैं । मैं एक आलोचना लिखूगा । हिचक इस लिये धी और है कि पुस्तक मुझे समर्पित है ।

कहानिया का सग्रह (कानन) देखूगा । भूमिका लेखों के सग्रह (साहित्य-दशन) की लिखूगा ।

मैं २६ सितम्बर को काशी म प्रसाद,परिपद्' का समापतिव करूंगा । ११ अक्टोबर को दिल्ली के रेडियो स्टेशन म रात आठ बजे से ८५५ तक होनेवाले कवि सम्मेलन मे कविता पढूगा । २६ अक्टोबर को लखनऊ मे होने वाले कवि सम्मेलन मे कविता पढना अस्वीकृत किया क्योंकि ४/५ मिनट के लिये यहाँ वाले सिर्फ ४०) चालीस रुपये मुझे दे रहे थे, यो दूसरे यहा के कवि २०) मे जायेंगे । बाहर वाले २०) + सेकंड बलास एर्चा पायेंगे । कई बडे कवि आ रहे हैं ।

नया अभी विशेष कुछ नही लिखा । हिंदी की स्थिति बहुत नाजुब है । इत्यलम् ।

आपका
निराला

४६

भूसामाजी हाथीग्रामा,

लखनऊ

२४ ६ ४०

प्रिय जानकीवल्लभ जी,

आपका पत्र मिला २२ ६ वाला। आप वेग-तशास्त्री हो गय पढ़कर परम प्रमन्नता हुई।

जद्यपयन के समय घट्ट होना है वाग को इसका मुफ्त अवश्य मिलता है। फिर आप घाह्यण हैं, श्याय आपका आदेश है। ज्ञान से तो आप रिक्त नहीं ?

सम्भव है नाधुरी म अब पुरस्कार के लिए रपया बहुत थोडा निकलता हो। जाप अपनी सहज शिष्ट शली से लिख कर उनसे पुरस्कार निश्चित कर लीजिय, तब लिखिय।

'प्रबन्ध प्रतिमा आपनों में अभी गही भेज सक्ता, कुल पुस्तकें हाप से निकल चुकी हैं। अगर मगाने की जल्दी न हो तो कुछ ठहर जाइये। अनुवाद में भज दूगा जब दूसरी अनुवादित पुस्तकें छप जायेंगी, मुझे अनुवादक वाली प्रतिया मिलेंगी। दिल्ली से लौट कर 'प्रबन्ध प्रतिमा' भेजूगा, अगर वहाँ रेडियो प्रोग्राम अपसट न हो गया।

बादना सुन्दरबाग लखनऊ पता है। लेकिन बादना की अपनी प्रतिपां अपने लेख वाली बाद को भेजूगा।

बहुत उलझा हूँ। बहुत से काम करने है। बनारस और दिल्ली की तैयारी म हूँ। दिल्ली नई रचना भेजनी है।

घट तो भर ही रहा है।'

१ मैंने पत्र के साथ एक उसी समय का लिखा गीत भी भेजा था —

सब घट भर भर कर लौट चले,
म हू पय पर पछताता ही !
गत एक छडते ही जिनकी
वीणा के तार-तार टूटे
उनने ही, देखो, एक एक कर
सकल पारितोषिक लूटे,
हो गई विसर्जित आज समा,
अब यह, वह, सब तो चले गए,
सूना नभ लख, हू बिलख बिलख,
म नद नव तान सुनाता ही !

मैंन सालभर पहले एक रचना की थी—‘रानी और कानी’, ‘तरुण म छप चुकी है, आपने देखा होगा। सज याद नहीं, कुछ इस तरह है ---

रानी और कानी

माँ कहती थी उसकी रानी,
जसा था नाम,
लेकिन था उल्टा ही रूप,
चेन्नक् मुह-बाग, काली, नक्चिप्टी,
गजा सर, एक आँख कानी।

रानी अब हो गई सपनी,
चौरा बरतन करती,
घर बुहारती, काडती, कूटती, पीसती,
भरती थी घड़े घड़े पानी।

लेकिन माँ का दिल बड़ा रहा,
एक चोर घर में पठा रहा,
सोचती रही बहू दिन रात,
रानी की शादी की बात,
मन मसोस रहती
जब आ पड़ोस की कोई कहती—

“रानी ? औरत की जात,
व्याह भला कैसे हो ?
कानी जो है वह !”

कुछ छिप कर अग जग के दूग से
या निशि निशि भर चलते चलते,
पहुँचा उन तक उमन-उमन
जीवन रति के ढलते-ढलते

म चीख उठा बेकल, बेमुघ,
जिन जिन से बच पहुँचे आया
वह सब उनके उर-कण्ठ लगे,
म लडा जीइता नाता ही !

सुन कर रानी का बिल हिल गया,
 कपि सब अग,
 चाँद आँख से आँसू भी बह चले
 माँ के दुल्ल से,
 लेकिन यह चाँद आँख कानी
 ज्यों की त्यों रह गई रघती निगरानी।

४७

भूसामण्डी, हाथीखाना

लखनऊ

१६-१० ५०

प्रिय आचार्य जानकीवल्लभ जी,

आपका पत्र मिला। इसके पहले आपका दूसरा पत्र जिस दिन मुझे मिला था उसी दिन आपकी मेरे पहले पत्र का लिखा जवाब मिल जाना चाहिये था। पत्र लिख कर डाल रखा गया था, आपका पत्र न मिलने पर, पता भूल जाने की वजह। बाद को आपका पत्र (पुराना) मिला। वह पत्र मैंने भेज दिया।

वह लम्बा पत्र था। बहुत सी बातें थीं। पत्र में खुद पोस्ट करता हूँ। नहीं मिला आश्चर्य है। उसमें आपकी कहानियों की तारीफ थी। कहानियाँ मुझे बहुत पसन्द आईं।

इस समय मैं बहुत उलझन में हूँ। रामकृष्ण की स्त्री को (नहीं पढ़ा जाता) महीने से राजयन्त्रा है। आजकल मे समुराल, गंगा-तट भेज रहा हूँ, डाक्टरों की सगाह है, शूद्र वायु सेवन कराने की।

बिहारी कवि और लेखका का पता भेजिये जिनका जिनका मालूम हो। मैं रेडियो में दे दूँ। बुलाने के लिए भी कहूँ।

आप प्रसन्न होंगे।

आपका

निराला

भूमामांडी हाथीघाना

लखनऊ

२११४०

प्रिय आचार्य

दीपावली का सप्रम ।

आपका कानन मित्र । एक सन्निधि पत्नी । बहुत पसन्द आई । भाषा है जलवार हैं और बला भी है ।

पहन सोचा था आप जमा लिखा है कि कहानियाँ मिलि हैं बसा हो होगा लेकिन अस्लिप्त उल्टा दिखी । मत्र सन्निधि पत्नी । फिर राय दगा ।

२६ अक्टूबर को लखनऊ रेणियो से भी कवि सम्मान म मरी जावति हइ । सिन्धी स यहा अच्छा रहा । सिन्धी म मरा मत्र बठ गया था तुवाम था बहुत बिगडा नही पर लखनऊ वाग ज्याग अच्छा पटना रहा मत्र साफ रहन के कारण । रुपय भा इन गगा न मेरी माग के अनुसार कुछ घटाकर काफी दिय । दाना जग २००) म अरि रिया गया । मुना ह अभी हमरे कवि को रेणियावाला न रतना नही दिया ।

यहा एक दिन लखनऊ विश्वविद्यालय के एक एम० ए० मित्र हिन्दी के । यहा हिन्दी संस्कृत विभाग स मिली है संस्कृत के प्राफमर मिस्टर जय्यर हिन्दी विभाग के भी प्रधान हैं । सिन्धीवाल अध्यापक संस्कृतवागो के ही कमरे म बठत है । इसलिए बातचीत म संस्कृत वा न (अध्यापक) हिन्दीवालो को दयाये रहत ह— तनपवाह ज्याका पात ह और संस्कृत जानते हैं सल्लिए । संस्कृत के एक अध्यापक चाकटर हैं वे बहुत दृढत है । सिन्धी मे कुछ गही यह उनका प्रधान वाग्य है । मेरे पास आय हुए एम० ए० न कहा तो मैं न कहा

आचार्य जानकीवल्लभ युवक हैं संस्कृत हिन्दी दोनों के कवि और विद्वान हैं उनका लेखन और उस डाक्टर से उनकी बातचीत कराइये ।

उनकी उस समय अनुकूल दृष्टि थी । देखू क्या हाता है ।

आपका

निराला

इतने सिन्धी का लिखा पत्र पता न मित्रन से रक्खा रहा आज पत्र पता प्राप्त होने पर भजा—

निराला १४ ११ ४०

४६

भूसामण्टी, हाथोखाना,

लखनऊ

१९३४१

प्रियश्री जानकीवल्लभ जी,

आपका पत्र तथा सभापति पद से दिया भाषण मिला । भाषण गद्य में पद्य है ।^१ आधुनिक हिन्दी कविता भी बड़ी सुन्दर ।^२

वेदांत में जन्म जाचाय की परीक्षा देंगे, वही प्रसन्नता की बात है । आपका श्रम फल दे चका है ।

१ अष्टौ भारतीय स्तर पर यह मेरी प्रथम अध्यक्षाता थी । सन्त १९६७ (ई० ८१) में बनारस में टाउन हाल में फाल्गुन शुक्ल त्रयोदशी को यह सम्मेलन हुआ था । मैं दण्डी की शली में, ललित किन्तु लच्छेदार संस्कृत में अपना छपा हुआ भाषण पढ़ा था । उसमें आधुनिक पद्धति का एक गीत भी था मेरा— अधुना नयनयो न हि वारि । जिसे मैं राग विहाग में गाकर सुनाया था ।

भाषण की भाषा थी —

आशङ्कवादामक्तोऽपि साहित्यशुभ्रपाया विरक्तोऽस्मि सम्प्रति सुरसरस्वत्या इति हिन्दीमन्दिरद्वारि मे प्रतिक्रियाम्प्रेक्ष्य घणाविधूणितघोणाकोणाना नाप्रत्यक्षम् ।
स्वरेपरिवतनशीलता संसृजनानघनघक्षेत्राणा भवत्येव तावद्दुद्देगकरी युगानु गाना प्रत्यह प्रतिदिश नवनवप्रकाशोक्लामलीलालहरिकालालसाना माहशामतादृशा ह्यन, तनाऽह मप्रथयमाशासे, नवयवनपलाणुपुञ्जभ्रमणमिव क्षम्य स्यादप्रिय मत्यवमननीभरसर्गाधि मदनसंस्कृतमुखदुर्निगत हत वच ।

२ यह पीर पुरानी हो ।

मत रहूँ हाव, मैं, जग में मेरी एक कहानी हो !
मैं चलता चलूँ निरंतर अंतर में विश्वास भरे,
इन सूखी सूखी आँसों में तेरी हो प्यास भरे,
मत पहुँचूँ तुझ तक, पय में मेरी चरण निशानी हो !
दूँ लया आग अपने हाथों, मिट्टी का रोह जले,
पल भर प्रदीप में तेरे मेरा भी तो रनेह जले,
जल जाएँ मेरा सत्य, अमर मेरी नादानी हो !
वह काम कर्ह ही नहीं, न हो जिससे तेरी धर्वा,
यह बात सुनूँ ही नहीं, न हो जिसमें तेरी चर्वा,
जग उँगली उठा कहे कोई ऐसा अभिमानो हो !

—तीर-तरंग

मैं अपने मित्रों को विद्वान् देखना चाहता था, देख रहा हूँ। हिन्दी का अधिक से-अधिक अलग अलग विषय के विद्वान् सेवक चाहिए थे, मिलते जा रहे हैं। साहित्य सबकी लबर है, इसलिए सबकी श्रेष्ठता जरूरी।

मैं आपको 'प्रबन्ध प्रतिमा', बकिम के अनुवाद, बदना कुछ नहीं भेज सका। बदना में थोड़ा-थोड़ा ३ अकों में लिखकर लेख बद कर दिया था। मुमकिन फिर लिखूँ।

आपके कुल लेख मैंने नहीं पढ़े। आरती और वमत्ता गये पास नहीं आती। आकर बद हो गई, तत्काल लेख भेजने की पाबंदी पूरी नहीं की जा सकी।

दाशनिक हो, अदाशनिक चोट से सबकी तकलीफ होती है। बहू की मृत्यु की बड़ी कष्ट कथा है।'

मैंने अत्याधुनिक धारा और समाजवाद का इधर कुछ अध्ययन किया है कुछ लिख रहा हूँ।

किसी तरह दिन कट जाता है। इति।

आपका
निराला

३ सरोज के निधन के बाद फूलदुलारी की बारी आई। बेटी और बहू दाना चली गई।

इन दोनों (बेटी और बहू) के ब्याह में निराला ने ठोस सामाजिक क्रांति की थी। इनकी मृत्यु जैसे उसी क्रांति की मृत्यु थी। अब ग्रामीण रुढ़ियों को नए सिरे से प्रतिष्ठा बडेगी कि निराला के क्रांतिकारी कदम विफल रहे। मैं समझता हूँ निराला के अहं को कुछ इसी प्रकार की दुहरी दुश्चिन्ता से, दूनी पीडा सहनी पड़ी होगी।

मैंने विश्वकवि कालिदास के विश्वजनीन शब्द ही लिख भेजे थे

‘न प्रयत्नवच्छुचो यश वशिनामुत्तम गतुमहं सि
दुमसानुमता किमन्तर यदि यावै द्वितयेऽपि ते चला ?’

किंतु दाशनिक हो अदाशनिक चोट से सबकी तकलीफ होती है — लिखकर निराला ने कालिदास को ही नहा दुहराया था

अमितस्तमयोऽपि मादव

भजते कश्च यथा शरीरिणु ?

५०

C/o The leader, Allahabad

26 6-41

प्रियश्री जानकीवल्लभ जी,

आपका पत्र मिला। मैं कितन ही बार दिन म लाकर भी आपको नहीं लिख सका। कुवर चन्द्रप्रकाश मुच मिले थे। आपका सम्वाद उनसे कहते हुए मैंने कहा था, आपके जो १५) पुत्र पर बाकी हैं मैं जानकीवल्लभ जी को भेज दूंगा। अफसोस, इधर मुझे कभी कोई प्राप्ति नहीं हुई। दिल्ली वाले कविसम्मेलन का योत्ता आया। मुझे रेडियोवाले हिन्दुस्तान के फस्ट क्लास कलाकारों का वेस्ट करते हैं। फिर भी मुझे कुछ एतराज था। मेरी गत के मज़ूर नहीं कर सक। मैं दिल्ली नहीं गया। १६ जुलाई को लखनऊ रेडियो म कविसम्मेलन है। योत्ता आया था। मैं नहीं जा रहा। पहले भा लखनऊ वाता से आपको बुक करन के लिए कहा था, कठ एव चिटठी प्रोग्राम डाइरेक्टर का फिर लिखूंगा। कह नहीं सकता, लखनऊ स्टेशन बिहार के कवि को बुक कर सकता है या नहीं।

अपराजिता वाले बात एसी है कि जल्दी मे मुझे यात्र नहीं आया वाजपेयी जी का 'रूप-अरूप' की भूमिका लिखना। वह लघु भी मेरे मन के अनुकूल नहीं, मुझे फिर लिखना पड़ेगा जब किताब म दूंगा। यह किताब १०।१२ साहित्यिकों के नाम के शीपक स, व्यक्तिगत जीवन पर लिखा स्वेच है—उनका मुवपर छायापात इसम आपकी भी साहित्यिक और व्यक्तिगत रूपरेखा है। इसका हिसाब किताब बिलकुल नया है। तब वाजपेयीजी वाले लेख की नयी मूरत होगी। आपका और 'रूप-अरूप' का नाम भी जुड़ जायगा।

हम लोग पर की आपकी 'आरती म निबली आलोचना प्रथम श्रेणी की है।^१ आपके प्रति मेरे साहित्यिक विद्वानों की बहुत अच्छी धारणा है। एडवोकेट दयानन्द गुप्त, मुरादाबाद, नरेन्द्र वालेदु शमशेर, चन्द्रप्रकाश कुवर और अञ्चल क माथी, (अरुण) के साथ पढ़े अच्छे कवि, कहानी लेखक और आलोचक हैं, आपको बहुत पसन्द करते हैं सिफ आपकी कहानियाँ नहीं पढ़ी।

मैं अधूरी पडी चमेली और 'विल्लेमुर बकरिहा' के पीछे एक मूहत से पडा हूँ। अबके शामद लिख डालू। एक चीज इधर मा की लिखी है—

१ हिन्दी वाव्यालोचन का क्रमिक विकास

कुतुरमुत्ता"—४५० पङ्क्तियों की हास्यरस की कविता । पूरी हो चुकी है । जवान हिन्दुस्तानी है । मैं 'तुलसीदास' की कोटि को मानता हूँ । शुरू की प्राय १५० पङ्क्तियाँ मई के हस' म निकल चुकी हैं देख लीजियेगा । कुछ हास्यरस की चीजों की पूति म लगा हू । कुछ लिखा है ।

और सब कुशल ह । आप अच्छी तरह होंगे । आपके साथ रहने स मुझे भी बडे फायदे थे । मुमकिन, किसी समय यह इच्छा पूरी हो । नाम ठीक समय पर होता है । जवानी म कुछ झेलकर रहना बुरे वक्त काम देता है । आपकी सस्कृतज्ञता हिन्दी के लिए भूपण ही है उसकी एक सब् पूति ।^१ दूसर अधिकाश भी अगर आपके तरफ़ार नही तो इसस आपका कुछ नही विगडता अगर अत्पाश समझदार है ।

देख अपर्णा किस अध म अपना है ।^२

श्री जानकी वल्लभ शास्त्री, शास्त्राचार्य, हिन्दी के श्रेष्ठ कवि आलोचक और कहानी लेखक है । अपनी प्रतिभा, विद्वत्ता लेखन-कौशल और दिव्य व्यवहार से उन्होंने अनेक द्वार मुझपर अपनी गहरी छाप डाली है । हिन्दी के साहित्यिक उत्थान म बिहार की आधुनिक प्रतिभा को मानना पडता है । जानकी वल्लभ वहाँ के और समस्त हिन्दी भाषी प्रांतों के प्रतिभाशालियों म एक है । उनके सस्कृत और हिन्दी के भावपूर्ण ध्वन्यात्मक कलात्मक पद्य और आलोचनाएँ मैं पहले देख चुका था इधर 'कानन' म उनकी कहानियाँ देखी । कहानियों की भाषा मँजी हुई वाक्य-न्यास सज्जीतमय, वातचीत स्थल और घटनाओं का वर्णन उठान पूति और परिसमाप्ति की कलात्मकता लिए हुए ध्वनि और अलङ्कारों से सज्जित है । आनन्द लेने और सीखने की इसम बहुत सी सामग्री है । इति ।

सूयकान्त त्रिपाठी निराला

२ आमानमर्षण कर्त्वा प्रणव चात्तरारणाम्
पाननिमयनाभ्यासात् पाप दहति पण्डित ।

१ 'कानन' क बाद अपर्णा सन ४१ म प्रकाशित मरा दूसरा कहानी संग्रह है ।

५१

भूमामण्डी, हाथीखाना,

लखनऊ

२५ ७ ४१

प्रिय जानकीवल्लभ जी,

आपके दोना पत्र मिले, उत्तर म देर हुद ।

यहाँ १६ जुलाई, रेडियो कवि सम्मेलन म मुझे जाना ही पया । तत्र से यही हूँ ।

अभी महीन दो महीन मेरी अवस्था म तोप-जनक नही हागी । किताब आपको नही भेज सका ।

पाठक जी (प० वाचस्पति जी पाठक) से मेरे अच्छे व्यवहार नही । इस दफे में एक दूसरे मित्र ने यहाँ ठहरा था । दूसरी किताबा का इतजाम में दो महीने क बाद ही कर सकता हूँ ।

पाठक जी ने आपको पुस्तक लिखने क लिये कहा है तो आप उही से लिखा-पही कीगिये—अपन दूसर प्रकाशन के सम्यघ म भी ।

प्रमथ प्रतिमा उट्ट भेज देने के लिये लिखिये । मैं जयन्त अपनी उलझनो से छुट्टा नही पाता तत्र तक कुछ कर नही सका ।

यहाँ रेडियो म आपका नाम मने दिया है । पर कहते हैं अब प्रातवाला सवाल आ गया है । फिर भी एक तत्र है, बिहार म रेडियो स्टेशन अभी नही खुल ।

कुछ दिना बाद मैं अजी तरह आपके लिये सोच सकूगा । प्रसन हागे । इति ।

आपका

निराला

१ मैं मगर अपनी तरफ स यही सोचता था कि कोई मेरी बिना चप्पू की नाव को उमडत हुए नयन मन के समम पर ले आकर अश्वत्य' के तने स बस कर बाध देता है । स्पन्दा और आकाशा पूण होकर तप्त नही होती नई-नई सिखाजा म और और लहक उठती हैं ।

'न जातु काम कामानामयभोगेन शाम्यति
हविषा कृष्णवर्मण भूम एवाभिधधते ।'

—मनु

—अश्वत्थ खड़ा है आज भी !

जितने पौदे समसामयिक रहे इसके,
वह एक एक कर अब सब के सब खिसके !

वह जुही, माधवी, बेला की फुलवारो—
महमह करती बकुम कसर का बपारी,
जो बाल रसाल, तमाल तरुण थे घेरे,
हर पछी जिनकी डाल डाल से टेरे,
दंघे जो उधर इधर, न नजर फिर फेरे,
घर घर जिनकी थी चर्चा साक्ष सवेरे,
जल्दी जल्दी जो बढ़े, चढ़े मुर सिर पर,
मुरझा मुरझा कर मरे, अरे, गिर गिर कर !

कारण, वह एद न बढ़े थे, गए बढ़ाए,
सींचा करते माली खाली मूह बाए,
लग जाए डीठ न बन पशुओं की उन पर
घेरे जाते तीख काँटे चुन चुन कर,
पड़ जाए धूल न मुकुल फूल पर उनके—
मालिक रखवाली करते पक्के घुन के,
होता प्रचार था उनका प्रदर्शनी मे,
उनकी सुगन्ध उड़ती अम्बर भवनी मे,
अफसोस ! मौसमी हवा सग वे आए,
कुछ दिन इतरा इठला कर पल्टे जाए !

अश्वत्थ खड़ा है आज भी !

सह सकी न बदली बदली ऋतु की माघी,
प्रिय बाल बल्लरी बिछड़ी तर उर-याघी,
वे फौड जो सहते क्षमा के झोंके,
जो बीच-बीच जोते मृत्युञ्जय होके !
क्या कुद कुसुम आतप मे तप फलेगा ?
या लोघ्र विटप पावस मे हँस झलेगा ?
चाँदनी शरद की देख कनर हिले क्यों ?
सूख शिरीष की शिशिर-नुवार मिले क्यों ?
कोमल बदम्ब क्यों भला आग से खेले ?
क्या अमल कमल हेमन्त हिमानी झले ?

अश्वत्थ किन्तु आँधो, झझा था पवि क्या
वर्षा क्या हिम क्या आग उगलता रवि क्या,
सब सहता मुसका मुसका कर हँस हँस कर,
जब सब तरह कहते वाहि-वाहि बस-बस कर !

जब ओर-ओर पादप बन शोडा-वामन—
घसन-न जाते कम्पन-तन, ध्याकुल-मन

निराला के पत्र

तब और और अश्वत्य उठाता है तिर
 उयो स्वग धरा सम्मिलन साधना मे स्थिर ।
 सब फिसल गए स्वर्गीय सीढिया चढकर
 सब पिछड गए ऊपर उठ-उठ, बढ बढ कर ।
 अश्वत्य खडा है आज भी !

“मुह मे कोमल कोपल की सीटी ले लो,
 बालक हो ! आओ, घनी छाँह मे खेलो !”

“दुपहर मे, डालों मे झुक झूले डालो,
 लो, साँझ हुई, बालाओ, दीपक वालो !”

“साध्वी सुहागिनो ! रंगे सूत्र हँस बाँधो,
 कर प्रदक्षिणा, गाहस्थ्य-साधना साधो !”

“पशुओ को दोगे ? हरी पत्तिया तोडो,
 हो श्रात पयिक ? मत शीतल छाया छोडो !”

“गायें चरती हैं खालवाल, तुम आओ,
 भ्रम बिन्दु पोंछ, टुक बशी यहा बजाओ !”

“इधन की तुम्हें जरूरत ? डालें फाटो,
 मत रार बढाओ, भाग बराबर बाटो !”

“नटखट लडके ! हैं उधर घोंसले हर पग,
 हा, सँभल सँभल कर चढो, न हों पग डगमग !”

“भूखो, लघु लघु मीठे मीठे फल खाओ,
 कुछ भी न रोक, वह टहनी और झुकाओ !”

तब भी होता है क्या स्वार्थी मानव सा ?
 इससे जग बरते देव या कि दानव-सा !

इसका क्या अपना ? है सवत्य तुम्हारा,
 नर बढा स्वायवश, घटा, न जीता हारा !

अश्वत्य खडा है आज भी !

जगतो भी, क्यों भागे जाते जीवन से ?
 तन से मिलती है श्रान्ति ? शान्ति जड मन से ?

जीवन का अर्थ न आत्महनन हो सकता,
 रो धोकर कसे कोई दुख खो सकता ?

यह धयोबद्ध अश्वत्य कहे क्या तुमको ?
 शिशु हो तुम, इसके आगे नाचो ठुमको !

दिन बीते बीते कितने पक्ष महीने,
 देखे इसने जितने युग नहीं किसी ने !

इस दीघकालकाली जीवन ने जाना
 कसे जोकर पडता न कभी पछताना !

सबसे न दृठते, चुप होओ, मत चीखो !
 अश्वत्य-पदों के पास बठ कुछ सीधो—

मत डरो किसी से और न कभी डराओ
 सिर झुका झुका कर उन्नत हृदय बनाओ !
 जा एक बार आया वह फिर फिर आया,
 इसकी अचिंत्य पावन प्रशांत थी छाया !
 होता स्थिर मन ध्रम बटते छेन्ती माया
 सक्षिप्त मूल डालों न क्या फलाया !
 धरवत्य राडा है आज भी !

बिल्लेमुर बकरिहा' जीर 'कुकुरमुत्ता' पुस्तिकाएँ निकल चुकी है। 'अणिमा' एक दूसरा पद्य सग्रह जल्द निकलनेवाला है। इधर कुछ गीत लिखे हैं, 'देशदूत', 'अभ्युदय' आदि में निकल रहे हैं।

आपका नाम भारत के बड़े बड़े आदमियों के बानों तक मने पहुँचा दिया है जिनमें बिहार के भी प्रमुख राजनतिक हैं। अब स्वस्थ चित्त से सस्कृत की जाधी कम से कम अंग्रेजी की योग्यता भी प्राप्त कर लीजिए। सविशेष फिर।

आपका
निराला

मिट्टी नहीं हुई ? मत हो नभ तो आलाकित्त ।
यहाँ कम हुआ हवा हो गई अहा, सुगन्धित ।।
नई हो गई पुन, पुरानी अपनी सस्कृति ।
छामापथ सी नई बन गई ज्योतिमय सति ।।
नाडी ली है पकड ज्योति की क्या निदान है ।
आसमान में तभी हो रहा कीर्तियान है ।।
ज्योति जगाई है । मजार क्या भला किया है ।
कहता ही, ली इस मजार का दिया दिया है ।।

× × ×

लिवता जाता तेज तिमिर तनता क्या फेरा ।
अरे, सवेरा भी होगा या सदा अँधेरा ?
रहे अंधेरा ये समाधियाँ दित जाएंगी—
धास पात पर नवनम से कुछ लिख जाएंगी ।
कभी पढ़ेंगे लोग—न सब दिन अपढ़ रहेंगे
सब दिन गूँब ध्यया न सहेंगे, कभी कहेंगे—

अधकार का तना चंदोया या जनम पर
दीप उजगले जलते थे दल ऊपर ऊपर ।
जोवित्त जते हुए कीर्तों की ये समाधियाँ
दीप जलाना मना यहाँ उठतीं न आधियाँ ।

× + ×

दीप जगना अगर रस भर इयर न घाना ।
दीप दिताइर अधकार को क्या घमसाना ।।

५३

C/o Rai Bahadur S N Chaturvedi, M A

Daraganj, Allahabad

23 1 43

प्रियश्री आचार्य,

आपका पत्र तथा पुस्तक (अपर्णा) मिली। बड़ी प्रमत्नता हुई। बहुत सुन्दर प्रोजेक्ट लिखने हैं आप। All India Radio में मैंने आपकी सिफारिश भेज दी। एक कर्मचारी मुझमें बातचीत करने आये थे, वही के, उठ आपकी वह कहानी-पुस्तक दे ली। अब एक प्रति और मेरे पास भेजिए। तभी अच्छी तरह बुझ वह सकगा।

२३ कहानियाँ पढ़ी थी भाषा बहुत पसन्द आई, प्लाट भी अच्छे लगे। यहाँ के दो एक मित्रों ने पढ़ कर विताव की तारीफ की थी।^१

All India Radio, Lucknow के Director से आपकी सिफारिश President, All India Hindi Poets' Conference की हैसियत से कराई है, लिखित, खुद जवानी भी की है उनके कर्मचारी से और इस बार कवि-सम्मेलन में बुलाने के लिए कहा है। अब के नहीं, तो अगले दफे बुलाएँगे।

हम कवि-सम्मेलन, रेडियो, नहीं जायेंगे। जब बुलावा आय, हमे पहले लिख—क्या दे रहे हैं।

—निराला

१ 'मैंने शास्त्राचार्य पण्डित जानकीवल्लभ शास्त्री जी की किखी 'अपर्णा' पुस्तक देखी। कहानियाँ हैं, रोचक, सरल, वाच्यमयी।

मध्य में जानकीवल्लभ जी ने चार चाँद लगा दिये हैं। हिन्दी उनके हाथ में कली की तरह दल खोलती जा रही है।

पुस्तक भाव और भाषा—दोना की दृष्टि से यथेष्ट बन पड़ी है। इसका अधिक प्रचार हिन्दी के सँवरने का साधन होगा।'

—निराला

५४

भूसामन्दी, हाथीखाना, लखनऊ,

१३ ३ ४३

प्रिय आचार्य

आपका पत्र मिला । मैं बहुत चिन्तित था । बड़ी प्रसन्नता हुई ।

इधर विशेष काम मने नहीं किया । जी नहीं लगा । कुछ बड़ी बड़ी राज नीतिज्ञ मन्त्रियों में जावृत्तियाँ की जिनका नतीजा पर अच्छा रङ्ग रहा ।

वाल्मीकि रामायण पढ़ रहा हूँ बड़ी अच्छी लगी महाकवि की भाषा ।

दो किताबें निकल चुकी हैं — एक बिल्लसुर बकरिहा दो एक रोज मैं निकल जायगी कुकुरमुत्ता सगह भी प्रेस चला गया है । उक्त दो किताबों में चाबुक की प्रति मर पास है लेता जाऊँगा, बहुत अशुद्ध छपी है । सुकुल की 'दीवी' का प्रूफ मैं देवा था किताब अच्छी है पर प्रति मर पास नहीं ।

मैं बराबर सोचना रहा रुपये काफ़ी जा जाय तो आपको १०।१५ किताब एक साथ खरीद कर भेज दूँ पर प्राप्ति की जगह त्याग ही प्रबन्ध रहा ।

रडिया जाना भी बन्द कर लिया हालाँकि रडियो वाले मन लम्बा payment करते थे सम्मान भी काफी लिया था । इधर पुराने प्रकाशन मित्र भी मुह फेर चुके हैं ।

आप लिख रहे हैं पत्र कर खुशी हुई । आपसे मिल कर, बातचीत करके और प्रगल्भ हूँगा । मैं १५ को मुजफ्फरपुर पहुँचूँगा ।

उनकी (सुहृद् सघ की) वित्तपति में आपका नाम नहीं देलकर दुःख हुआ । मैं अपने भाषण में आपका उल्लेख करूँगा ।

भाषण सिर्फ विचार पर होगा सन्धि क्वाचित् मैं अपने विचार पूरी स्वतन्त्रता से अभी दे नहीं सकता ।

पना लगा कर मुझे मिलिय अवश्य ।

बकिाएँ तरंग और मनोरिणी हैं ।

मरा स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता । नमस्कार ।

आपका

निराला

अगर मुझे दर हूँ तो सम्मेलन में मिलिय,
स्त्रिन्त न परान्दिय यह लिया दीजिए ।

१ मैं गाऊँ तेरा मन्त्र समस्त, जग मेरी वाशा बटू बटू !
पाकर तारी ही स्वयं विरण गरा तग अपना पर तोसे

आए आह्वान जिधर से भी, उड़ उधर, निवृत्त तेरे डोले,
 कोई समझ या मत समझे, वह तेरी ही बोली बोले,
 बरसाए तेरी सुधा धार, जग उसकी पानी कहे, कहे ।
 आखें साधक हो पाकर तेरी आभा का आभास चरम,
 मेरा मन निश्चल, एकतान हो भूल दिशा आकाश परम
 हो मेरी कला वही, जिसमें हो तेरा निमत निवास स्वयम,
 म गढ़ू प्राण प्रतिमा तेरी, दुनिया पापाणी कहे, कहे !
 वह सुख न कभी भी मिले मुझे जिससे दुख ही होता दूना,
 जिससे कि भोगनों आँखें ही रहता अंतर भूना भूना,
 जो सत्य नहीं, वह मिट जाए मेरा घर रहे रहे सुना
 हो निशिदिन तेरा ध्यान विश्व मुझको अभिमानो कहे कहे ।
 इस जीवन मे जो मधुर और जो कटु, कषाय या तिक्क क्षार
 चादनी रात की सजल हूँसी, निजल कि अमा की अधु धार
 विर-अपित चरणों मे तेरे अंतर क्या, यदि पाया न प्यार
 म रहूँ राघना-स्त्रीन इमे दुनिया नादानो कहे कहे ।

—तीर-तरङ्ग

मधु मास न तुम पतवार हो !
 चौंकार हँसी की नहीं अरे तुम तो जासू की धार हो ।
 म तुम्हें समझना था साकी म तुम्हें बह रहा था हाला ।
 पर तुम युग युग की प्यास लिए हो मिट्टी का सूखा प्याला
 तुम क्षार क्षार हो चुके जीर म कहता था—जगार हो ।
 वो चमक तुम्हारे जलने की मने छवि का प्रभाव जाना,
 था देल न पाया घन प्रहार मुड़ते जाना स्वभाव माना
 तुम लोहे की जजोर, कहा मने—हीरे का हार हो ।
 धीं था राका की रूप राशि से अपन तम को माप रहा,
 इस अभिनव निजन प्रातर मे बठा विहाग आलाप रहा,
 तुम मृत्यु मृत्यु मने समझा—जीवन की शकार हो ।
 अपराध तुम्हारा नहीं कि तु था मेरी ही आँखों का भ्रम,
 धरने की भी क्या कहूँ सत्य से यही न हो परिचय का भ्रम,
 तुम धार चुभे मेरे दिल मे, मने समझा था—प्यार हो ।

—तीर तरंग

५५

C/o Prof Nanda Dularay Bajpeyi
Durgakunda, Benares

7 5-43

प्रिय आचार्य,

आपके पत्र और सूचनाएँ मिली । सम्मेलनो की आपसे शोभा बढ रही है, खुशी की पहली बात ।

विनोद जी (प० विनोदशङ्कर व्यास) के लिए वाजपेयी जी की माफत एक रचना भेज चुका हूँ, पर शायद अभी तक छपी नहीं । वह यहाँ मिलन के लिए प्रतिश्रुत थे, नहीं आ पाये । एक रोज मुझे बुलाया था मेरी पहुँच नहीं हो सकी । आपवाली आलोचना इसी कश मन्दा में दब सी गई । पर उसे 'संसार' में या किसी दूसरे पत्र में देकर ही, मुमकिन, यहाँ से दूसरी जगह के लिए चलू ।

सम्मेलन में १००) देकर बुलाया है । मेरी फी ५००) है मैं ३५०) तक सम्मेलन को छोड़ दगा लिखा है ।

प्रो० नलिन विलोचन शर्मा जी तो श्रेष्ठ साहित्यिक, परम मित्र है । मुझे भी बुलाया था । बिहार मुझे बुलायेगा तो अय-गौरव तो समझते ही है । इति ।'

आपका
निराला

प्रियवर,

आपके दोनो पत्र समय पर मिले थे । उत्तर में विलोचन के लिए क्षमा कीजिएगा ।

आपकी कविता आज में अब तक नहीं भेजी जा सकी । कोई लेने वाला आया ही नहीं । अब किसी दिन मैं ही दे आऊँगा ।

पुस्तकें पत्र ली होगी । हरिद्वार आप भी चलें तो अच्छा है ।

१ इस पत्र के शोभाश के रूप में वाजपेयी जी की निम्नलिखित पक्तियाँ हैं ।

मेरी पुस्तक पर यदि लिखें तो इस बार 'साहित्यदशान' की सी सम्मति ही न दें व्याख्या और विवचन भी करें।' शेष कुशल है।

आपका
नन्ददुलार वाजपेयी

० 'हिंदी साहित्य बीसवीं शताब्दी' के प्रकाशन के पूर्व मेरा 'साहित्यदशान' प्रकाशित हो गया था। वाजपेयी जी की यह व्यवस्थित समीक्षा पुस्तक पहले देखने को मिल गई होती तो मैं अपनी पुस्तक में चर्त्ता-सी चर्चा बदापि न करता। छिटफूट लेखों के आधार पर अपना ध्वस्त प्रकट कर दिया था। और क्या उपाय था? यही बात आचार्य हजारी प्रसाद जी द्विवेदा के साथ हुई। 'विशाल-भारत' में उनकी लिखी समीक्षाएँ प्रकाशित होनी थी। गीतिका की आलाचना पढ़ कर चकित रह गया था। वेद और भागवत में प्रायः प्रमुक्त 'नम्र' शब्द से वह अपरिचित थे। उन्होंने प्रसाद जी पर आक्षेप करने का साह्य किया था। मैं उनसे यारे में भी कुछ धीं ही सामान्य विरोध लिख दिया था।

तब मैं जानता था—आगे चलकर यही दोनों किनी दिन गोपस्थ आलोचक होंगे?

५६

Prof Nand Dularay Bajpeyi,

Durgakunda, Benares,

11 5 43

प्रिय आचार्य,

नमो नम ।

एक पत्र आपको लिख चुका हूँ । आपके पत्र और समाचार मिले ।

मैंने सम्मेलन का (१५०) खच मजूर कर लिया, भेजेंगे । आप अवश्य १५ की शाम या रात तक चले आइए । चिन्ता न कीजिए अगर उहनि खच दकर नहीं बुलाया या कारणवश आप तगदस्त हैं । वहाँ आपका परिचय बढ़ेगा । यहाँ रमेश (डा० रमेश चन्द्र मिश्र, जबलपुर) आदि से निश्चय कर लीजिएगा । विस्तार से इसीलिए नहीं लिख रहा । यहा हाल मालूम हो जाएँगे ।

हम भरसक १६ की सुबह वाली गाडी से रवाना होंगे । बाजपेयी जी चलेंगे । उन्हें विवाद के लिए बुलाया है, काव्य मे जीवन' पर बोलें । डयोडे का खच देंगे ।

डा० रामविलास को भी चलने के लिए लिखा है । वहा बहुतो से आपका परिचय हो जायगा । इति ।

आपका

निराला

१ परिचय के काल्पनिक स्वप्न सारी रात (१४ ५ ४३) खुली आँखो मे पख फडकाते रहे । पौ फटते फटते चेतना ने बड़ी सरलती से मुन्स प्रबोध' नामक एक कविता बसूली । मुर भी दाखिल हो गए कुछ रिजायत की तो मही कि भरवी गले लग गई ।

सब ठीकठाक हो चुकन पर महज पसे पर जान देनेवालो के हाथ आत्मा के न बिक सकने से मेरा जाना स्थगित हो गया ।

प्रबोध

जागो निद्रा तद्रा के कर बिके हुए बेमोल
उडे सुरभि सब आर भोर के तरसिज-सम्पुट खोल^१

गत प्रसाद की निशा दिशाए नवप्रकाश मे निखरीं
स्वण वण की सजग रश्मियाँ फूटीं, फलीं, बितरीं ।
हुआ बिलम्ब छंटा फुहरा, भास्वर स्वर नभ उनीत
प्रात वात के प्रथम परस से टपके द्रुम दल पीत ।

गज उठा आह्वान एक अण्णाम शिखर तक फैल
 रीमाञ्चित हो गई धरित्री, पुलक-प्रकम्पित शल,
 सर-सरिता-सागर में शत शत हिल्लोलित बल्लोल ।
 जागो निद्रा-तद्रा के कर बिके हुए बेमोल ॥

दो डग चले नहीं, माथे पर अमकण झलमल झलके,
 शिथिल हुआ उत्साह, छांह छुकर अल्साई पलकें,
 करवट भी बदली न, ली न तुमने तम मे अंगड़ाई,
 तब किरणों के तीर छोडती प्रगति चेतना आई ।
 देश-देश से उड़-उड़ कर, जुड़ जुड़ कर सल्लपातीत,
 चहक चहक विहगों ने गाए अगवानी के गीत ।
 केवल तुम्हीं लुके अंधियारे मे, साए मे अपने,
 डुबो रहे अभिनव भविष्य के रगबिरगो सपने ।

पोंछ रहे ठिठुरे हाथों से अश्रु टटोल-टटोल ।
 जागो निद्रा-तद्रा के कर बिके हुए बेमोल ॥

जागो जैसे गरल-बुझे वाणों से विद्या मृगेद्र,
 फन फलाए ध्याल-बूद लल चञ्चल चञ्जु खगेद्र ।
 जागो, आततापियों के सम्मुख ज्यों शतमुख फोध,
 अवमानित, घूमिल आत्मा मे ज्वलित अनल प्रतिशोध ।
 जागो पतझर के ममर मे ज्यों पल्लव की लाली,
 गुच्छ गुच्छ, तुम पुञ्ज-पुञ्ज हो, ढक लो सघन वनाली
 आँल मूद, घणक प्रकाश मे, बब तक पडे रहोगे ?
 वडवानलपायो, सुधा नहीं, क्षार ज्वार उगलोगे ?

खंडहर तो दो छोड, डोलते हैं मृगोल-खगोल ।
 जागो निद्रा-तद्रा के कर बिके हुए बेमोल !
 —अवति

५७

C/o Prof Nand Dularay Bajpeyi
Durgakunda Benares

1954

प्रिय आचार्य,

आप नहीं आय। अच्छा हुआ। हमारा जाना रद्द रखा। कई कारण आ गए। बाजपेयी जी जायाल प। वह भी नहीं आ सक। सम्मेलन में कुछ एंगी फूट आपकी धमाल्य पत्र रखा है। कुछ और भी बरी बातें हैं।

आपका बुलावा टायावानी है। वहाँ का है बंगला है, आपन नहीं गिया। मरी निराला रपय क हा कारण हा गानी है या नहीं यह बान नहा। गुप्त सध म मैं सिफ़ सच स्केर पला गया था।

आपस यह भी कहा है (५००) क एक आफर पर नहीं गया। अगर आपका मरा सम्मिलन होना उचित मालूम हो तो उन लोग का प्रियरण लिगिए या जनता की सभा होने पर रपय लकर चल आइम। उम सच म दोना आत्मी चल चलेंगे। इसम अधिन सङ्गठन शायद आप मुगस चाहा भी नहा। आपना आना मरे मनारजन का माधन होगा—सङ्गठन क श्योर सुनता रहूँगा। यहाँ क हालात भी आपको मालूम हो जाएँगे। तिन अपनी तरफ स निश्चिन कर लीजिए।

प्रसान हू। रमश का इम्तहान समाप्त हो गया। आपक वद कस रहे? बाजपेयी जी मजे म हैं। आपका समाचार मिलन पर मैं अपना दूनरा धायनम तयार करूँगा।

आपका

निराला

१ जीवन की दु खद स्मृतिया म एक यह भी है। मैंने मुजफ्फरपुर के एक सङ्घट के पण्डित क फेर म पडकर निराला जी को बुला देन का जिम्मा स लिया था।

मेरा पत्र पात ही निराला जी ने स्वीकृति भेज दी। मागव्यय भेज लिया गया। फिर उक्त पण्डित जी (श्री भवानीदत्त शर्मा) न तार द्वारा सूचित कर लिया कि सम्मेलन की तिथि बढा दी गई। निराला जी को गाडी से उतर जाना पडा।

२ सुहृद सध ने उनकी बडी उपेशा की थी। जयकिशोर बाबू साक्षी है इलाहाबाद लौटन क लिए उनके पास टिकट के भी पस न थे। हम दानो स वह पसे लेने को तयार न हुए। किसी तरह छपरा गए। वहा आचार्य शिवपूजन सहाय से कज लकर इलाहाबाद लौटे।

निराला के पत्र

५८

C/o Prof N D Bajpeyi,
Durgakunda,
Benares
21 5 43

प्रिय आचार्य,
आपका कोई पत्र नहीं आया, सवाद भी नहीं। आशा है आप प्रसन्न हैं।
अब तक आपका निश्चय हो चुका होता। शायद आपका निश्चय नहीं
हुआ। अब आप न आयें। कुछ भेजें भी नहीं।
- इधर मैंने कई नई रचनाएँ लिखी हैं।
विश्वविद्यालय के विद्यार्थी प्रायः सभी चले गए। गरमी अधिक पड़ रही
है। समाचार अब इन पत्रों पर न लिखिए। नए समाचार के लिए प्रतीक्षा
कीजिए। हमारा हाल बहुत अच्छा है। इति।

आपका
निराला

१ मैं तब तक मुजफ्फरपुर के प० भवानीदत्त शर्मा को निवृत्त से नहीं
जानता था। भारत की काव्य नाट्यकलाओं के हिमालय विन्ध्य जैसे निराला
और पृथ्वीराज के सम्बन्ध में जब मैं आत्मबल से बोलता था, मेरी सतत साधना
की एकांत अकिञ्चन स्थिति, कोरे करिपर बनाने वाली की नकली निपटता
और जहरीली विनम्रता से डंभे हुए ऐश्वय के मुकाबले मुझे झूठलाठी नजर
आती थी प्रायः श्राताओं की मुखमुद्रा गहरी रेखाओं से ढक जाती थी। एक
रोज ब्रह्मदेव शास्त्री के साथ दिल्ली में गाजियाबाद (शिवेन्द्रगुमार 'परिवर्तन' के
पहा) जाते समय बस के कुछ मुसाफिरो से गालियाँ भी सुननी पड़ी थी। मेरा
कुसूर भिन्न नहीं था कि ब्रह्मदेव जी से अभी अभी बलवत्ते में पृथ्वीराज के
साथ गुजारे हुए चन्द लम्हों की चर्चा कर रहा था।
कौन जाने पण्डित जी का उद्देश्य भी निराज को बुलाना न होकर मेरी
परीक्षा नैना ही रहा हो कि सबमुच ही मेरे लिख देने भर से निराला का
सकते हैं।

५६

C/o Prof Nand Dularey Bajpeyi
Durgakunda, Benares.

26 5 43

प्रिय आचाये,

वाजपेयी जी ने मनीआडर का नोचेवाला हिस्सा फाड़ डाला था, इसलिए मनीआडर लेना पडा। माना-जाना भी पड़ेगा।

२६ को यहाँ से रवाना हूँगा, जा गाड़ी मीठी आपक वहाँ जाती है उससे। स्टेशन पर आ जाइयेगा अगर यहाँ न आये—पत्र के कारण न पहुँचने का निश्चय हो और मनीआडर की रसीद जल्द न पहुँचने के कारण विचार ने पल्टा नहीं पाया।

आपकी आशानुसार' तैयारी छोड़ दी। यानी जो तैयारी की थी, उससे बाज आया।

१ अपनी ही भाव धारा को निराला अस्वीकृत करना चाह रहे थे। जब 'युगवाणी' निकली थी, वाजपेयी जी के स्वर में स्वर मिलाकर निराला जी भी उसकी गद्य-मकता की ओर संकत करत थे। अब कुरकुरमुत्ता और रानी और कानी ऐसी कविताओं की सफलता से प्रसन्न होकर वह छाया और रहस्य के निषेध में बहुत कुछ लिखना चाह रहे थे। मैंने विनम्र निवेदन किया था कि वे नई कविताएँ सुब लिखें, किन्तु उनकी अमरता 'राम की शक्तिपूजा' तुलसीदास' 'साराज-स्मृति'-ऐसी क्लासिक कृतियाँ पर ही प्रतिष्ठित होगी। वैसे कालजयी कृतित्व का विलोम होगा भी क्या? बूढ़े इतिहास निर्माताओं तक को शख मार कर उन अमर रचनाओं की बदौलत निराला की मौलिक प्रतिभा स्वीकारनी पड़ी।

निश्चय ही यह मेरा तात्कालिक विश्वास था। अब तो नए-से-नए समीक्षकों को आलोचना का मानदण्ड निर्धारित करने के क्रम में निराला की बहुमुखी मौलिकता को मानते देखकर अपने बाल-मुलभ उदगार पर हँसी आती है।

'दृष्टिकोण' में सम्पादकीय में लिखा था

"बिना प्रचार के बिना तुलकशाम और फतूर के सबकी दृष्टि में कलम की नोक पर सम्मान और श्रद्धा के पात्र निराला ही उतरे। उदाहरण के लिए निराला को छोड़कर दूसरे किसी कवि को आप सामने नहीं ला सकते, जिसके काव्य के प्रति सबकी समान उत्कण्ठा जाग्रत हो। उनके समानधर्माओं को ही ले लीजिए, वे प्रगतिवादी समालोचकों की कलम पर हृदयवादी तथा परम्परा की कतार में छड़े किये गए किन्तु मजाल नहीं कि निराला को वैसे विशेषण अथवा कतार में छड़ा करने की उहाने हिमाकत को हो ।"

ऐसे में मुझे महिममट्ट की याद आती है —

निराला के पत्र

एक रोज दिल में आया जो कुछ पद्य-साहित्य में लिखा है, उसका उल्टा लिख डालूँ। इति ।

आपका
निराला

“युक्तोऽयमात्मसदृशान् प्रति मे प्रयत्नो
नास्त्येव तज्जगति सवमनोहर यत्
केचिज्ज्वलति विरक्तत्यपरे निमील—
त्यन्ये यदभ्युदयमाजि जगत्प्रदोषे ।”

—व्यक्तिविवेक, प्र २ ।

५६

C/o Prof Nand Dularey Bajpey
Durgakunda Benares.

26 5 43

प्रिय आचाये,

बाजपेयी जी ने मनीआडर का नीचवाला हिस्सा पाट डाला था, इसलिए मनीआडर लेना पडा। आना-जाना भी पडेगा।

२६ को यहाँ से खाना होगा, जो गाड़ी सीधी आपके वहाँ जाती है उससे। स्टेशन पर आ जाइयेगा अगर यहाँ न आये—यत्र के कारण न पहुँचने का निश्चय हो और मनीआडर की रसीद जल्द न पहुँचने के कारण विचार न पटा नहीं छाया।

आपकी आज्ञानुसार^१ तयारी छोड दी। यानी जो तयारी की थी उसस बाज आया।

१ अपनी ही भाव धारा को निराला अस्वीकृत करना चाह रहे थे। जब 'युगवाणी' निकली थी, बाजपेयी जी के स्वर में स्वर मिलाकर निराला जी भी उसकी गद्यात्मकता की ओर संकेत करते थे। अब कुतुरमुत्ता और रानी और कानी ऐसी कविताओं की सफलता से प्रसन्न होकर वह छाया और रहस्य के निषेध में बहुत कुछ लिखना चाह रहे थे। मैंने विनम्र निवेदन किया था कि वे नई कविताएँ सब लिखें, किंतु उनकी अमरता राम की शक्तिपूजा 'तुलसीदास' 'सरोज-स्मृति' ऐसी क्लासिक कृतियों पर ही प्रतिष्ठित होगी। वैसे कालजयी कृतित्व का विलोम होगा भी क्या? बड़े इतिहास निर्माताओं तक को श्रम मार कर उन अमर रचनाओं की बंदोबस्त निराला की मौलिक प्रतिभा स्वीकारनी पड़ी।

निश्चय ही यह मेरा तात्कालिक विश्वास था। अब तो नए-स-नए समीक्षकों को आलोचना का मानदण्ड निर्धारित करने के नाम में निराला की बहुमुखी मौलिकता को मानते देखकर अपने बाल-मुलुभ उदगार पर हँसी आती है।

'दृष्टिकोण' में सम्पादकीय में लिखा था

"बिना प्रचार के बिना तूलकलाम और फतूर के, सबकी दृष्टि में कलम की नोक पर सम्मान और श्रद्धा के पान्न निराला ही उतरे। उदाहरण के लिए निराला को छोड़कर दूसरे किसी कवि को आप सामने नहीं ला सकते, जिसके काव्य के प्रति सबकी समान उत्कण्ठा जाग्रत हो। उनके समानधर्माओं को ही ले लीजिए वे प्रगतिवादी समालोचकों की कलम पर रुढ़िवादी तथा परम्परा की कतार में खड़े किये गए, किंतु मजाल नहीं कि निराला को वैसे विशेषण अथवा कतार में खड़ा करने की उन्हांन हिमाकत की हो।

ऐसे में मुझे महिममट्ट की याद आती है —

निराला के पत्र

६०

C/o Prof 'N' D Bajpey,
Durgakunda,
(Benares)
31 5 43

प्रियश्री आचार्य,

मैं शनिवार को गाड़ी पर चढ़ गया था, उस समय आपका तार लेकर बाजपेयी जी का भेजा हुआ एक आदमी पहुँचा। तार में लिखा है Date extended see letter। पत्र अभी तक आपका नहीं मिला।

रहस्य कुछ समझ में नहीं आ रहा। अब आपकी दूसरी तारीख पर हमारा जाना गरमूमरिन है। २३ दिन में यहाँ से सब लोग चल जायेंगे।

बरसात में या पूजा के समय हम आपके वहाँ आयेंगे अगर सही सलामत रहे। जनता तथा स्थानीय जनो को आवृत्ति सुना देंगे।

इस प्रसंग में हम बड़ा कष्ट उठाना पड़ा। स्टेशन से गाड़ी से फिर वापस आये।

आप चिन्ता न कीजिये। चुपचाप अपना काम कीजिए। यह सब धीरे धीरे समझ में आयेगा।^१

आपका
निराला

१ सौ बात की एक बात, मेरी समय पर पत्थर पड़ गए। खाक कुछ पल्ले न पड़ा अब तक। हाँ, जिन महान गुणों ने निराला को सरनाम किया उन्हें कौन हँसी में उड़ा सकता है?

“देख रहे चाँदनी?—दूध की धुली चाँदनी।
क्या कहते हो,—लागती सीठी मंदिर, मादनी?
तो देखो, वह ठोस भूमि पर उतर चुकी है,
कटक, जुड़कर, घँसकर, फिर फिर उभर चुकी है।
देखो सर को, सरि को, फल्लोलित सागर को,
देखो मिट्टी को, जीवन-आगर गागर को।
पर ऊपर क्या?—ऊँचचेतना? क्या हठ ठानो?
भकुटि कुटिल कर आँख मूढ़ लोगो सच मानो।

म कलक से मरा, शय में रहता आया,
नक्षत्रों के तट प्लावित कर रहता आया,
अध प्रहार अमा का गुमसुम सहता आया,

कुछ दिनों में बताऊँगा । आइएगा, फिर यही से मुजफ्फरपुर चला जायगा ।

ममूरी कविसम्मेलन से रुपये आये थे, नहीं लिए, नहीं गया ।

शरच्चन्द्र-उनकी पाटों से मेरी बातचीत हुई थी, जब मेरा प्राथमिक जीवन था, कभी लिखूँगा ।

काशी से लिखा हमारा पत्र मिला होगा कि मुजफ्फरपुर चलते वक्त क्या आपत्त रही । आपका पत्र मिला था ।

आपका

निराला

६१

112, Maqboolganj

Lucknow

21 6 43

प्रिय आचार्य,

इस समय हम लखनऊ में हैं। आपके वहाँ (मुजफ्फरपुर के सुप्रसिद्ध साहू परिवार में) प्रसिद्ध बंगला औपन्यासिक शरच्चन्द्र थे। श्रीमान महादेव जी सेठी के यहाँ उनकी पहले की लिखी, तारुण्य की, कोई किताब रह गई है—वह छोड़ गये थे, जो अब नहीं मिलती। वह बनेली (राज्य, भागलपुर) में भी नौकरी कर चुके हैं। आप जानते हैं।

इधर प्रसन्न रहता हूँ। यहाँ भी पानी बरसा है। अणिमा अब निकल ही रही है। १०० सफे की पुस्तिका है। एक उपयास इसी लगाव लिख डालना चाहता हूँ।

अभी काशी फिर जाऊँगा। डा० रामविलास के छोटे भाई रामस्वरूप एम्० ए० का ब्याह है, बारात में।

१ श्री इलाचन्द्र जोशी ने लिखा है

एक दिन पिता से शरत की अनबन हो गई और वह घर छोड़ कर नागा सयासियाँ के साथ मुजफ्फरपुर चले गए। मुजफ्फरपुर में शरतचन्द्र एक बहुत अच्छे गायक के रूप में प्रसिद्ध हो गए। महादेव साहू नाम के एक बहुत बड़े जमींदार भी उनकी संगीत-कला पर मग्ध हो गए और उन्होंने शरत को अपने पास बुला लिया।

शरतचन्द्र के कुछ जीवनी-लेखकों का कहना है कि शरतचन्द्र के 'श्रीकान्त' नामक उपन्यास में जिस राजकुमार की चर्चा आई है, जिसके साथ 'श्रीकान्त' की घनिष्ठ मित्रता हो गई थी, वह यही महादेव साहू हैं।

—शरतचन्द्र ध्वनि और कलाकार
पृ० १६०

मैं मनु १६ के अन्त में पहली बार मुजफ्फरपुर आया था। तब भी यह घटना दो पौड़ी पुरानी थी। फिर भी मुना या कल्पिता—न्यू विद्यार्थ म जा चन्द्रावती, कथावती आदि बना अभिनेत्रियों काम करती थीं। व मुजफ्फरपुर के महादेव बाबू से अनुबन्ध किसी बंगाली नगरी-गायिका की ही सन्तानें थीं। चन्द्रावती न तो शरत के भी कई चित्रों में काम किया था। एम लोग भी हैं जो कहते हैं श्रीकान्त को राजकुमारी ही चन्द्रावती की माँ थी। ऐस कीबद उदा एने वालों को कोई क्या कने ?

६३

युग मन्दिर,

उनाव

१७ ए ४३

प्रियश्री आचाय,

आपकी पुस्तक 'साहित्य-दर्शन' मिली। साद्यन्त पढ़ूंगा। आपकी शैली मुझे प्रिय है। पुस्तक आपकी आज ही मिली।

आपके लिए मैं प्रयत्न करूँगा। रेडियो में नहीं जाता। दूसरे की राय पर शायद वे लोग कम ध्यान देते हैं अगर वह गैरसरकारी है। अन्यत्र देखूंगा।

मेरी सिकारिश को आर्थिक मसले पर कोमल नहीं, आपको मालूम है।

'अणिमा' दुर्भाग्य से अब तक दफ्तरी के यहाँ से नहीं निकली। छप चुकी है। सुना है कोई दुघटना उसके यहाँ हो गई है। दो चार रोज़ में आ जायगी।

उपयास काफी रोचक है। यही प्रधान गुण है। यह जीवनचरित जैसा नहीं, सालहो आने उपयास है। इधर अरसे स लिखना बन्द है। जल्द प्रेस जानेवाला है। शली मीठी, निरलकार। घटनाया का चमत्कार।

दातो म (?) योजोट नाम की दवा के प्रयोग का यह फल हुआ है कि उसके बहने से होठ और ठोड़ी का एक हिस्सा जल गया है।

भवानीदत्त जी स कह दें, इसीलिए गमन नहीं हो सकता। मुखारविन्द भस्म हो गया है।

आपके मित्र भट्टाचाय (देवेन्द्रनाथ भट्टाचाय) ने एक पत्र लिखा था, उनका पता खो गया है उह फिर पत्र भेजन के लिए लिख दें। खुद भी पता दे सकत है।

आपके 'तीरन्तरंग' के प्रकाशन की और रुपया की बातचीत करके जल्द आपको लिखूंगा। आगा है, वही कामयाबी हो जायगी।

आपका

"निराला"

ज़रूरी —

चौधरी राजेन्द्रनाथ जी कहते हैं कि
अक्टूबर के अंत तक १००) भेजेंगे।
किताब भेजें।

—नि०

६२

Yugmandir,

Unao

28 8 43

प्रिय आचार्य,

आपको लिखा, लेकिन कोई उत्तर आपका नहीं आया। समझ में नहीं आता कि आपका हाल क्या है।

आप लीगा में बीन-बीन क्लब-क्लब वाले वक्तव्य-सम्मेलन में गये, वहाँ बसा रहा, पुरस्कार कि-हूँ मिला और आजकल क्या लिख रहे हैं सूचित कीजिएगा।

आपका निबंधोंवाला सप्ताह निकल गया होगा पर मिला नहीं। इधर क्या लिख रहे हैं ?

मेरी 'अणिमा' निकल गई। उत्तर मिलने पर भेजूंगा।

एक उपन्यास प्रेस जानेवाला है 'चोटी की पकड़'। २५० ३०० सफो का है। अभी पूरा नहीं हुआ।

मैं सम्मेलन जाना एक तरह छोड़ दिया है। कई अच्छे निमन्त्रण आये, नहीं गया। उपन्यास पूरा कर रहा हूँ। सीधी भाषा में है। अभी तक अच्छा चला, आगे की नहीं मालूम। उतर जायगा। बिनेगा अच्छा। घटना प्रधान है।

आपके वेदा का क्या हुआ ?^१ अब क्या समाचार हैं ? डा० रामविलास आगरे के किसी राजपूत कॉलेज के अंग्रेजी विभाग के प्रधान हैं।

अच्छी तरह होंगे आप। मेरे कई दाँत हिल गये हैं दद रहा, जपड़वाना चाहता हूँ।

आपका

—निराला,

युगमन्दिर

१ वेदान्त ने नाक में सुतली पिरो दी थी, अब वेदा के कोलू में डाल कर नाकाम जिदगी को पेरना चाह रहा था।

६३

गुग मन्दिर,
उनाम
१७ ६ ४३

प्रियथी आचार्य,

आपकी पुस्तक 'साहित्य-दशन' मिली। साद्यन्त पढ़ूंगा। आपकी टैली मुझे प्रिय है। पुस्तक आपकी आज ही मिली।

आपके लिए मैं प्रयत्न करूंगा। रेडियो में नहीं जाता। दूसरे की राय पर शायद के योग कम ध्यान दत हैं अगर वह गैरसरकारी है। अन्यत्र देखूंगा।

मेरी सिकारिश की आर्थिक मसले पर कीमत नहीं, आपकी मालूम है।

'अणिमा दुभाग्य से अब तक दफ्तरी के यहाँ से नहीं निकली। छप चुकी है। सुना है, कोई दुघटना उसके यहाँ हो गई है। दो-चार रोज़ म आ जायगी।

उपयास काफी रोचक है। यही प्रधान गुण है। यह जीवनचरित-जैसा नहीं, सोलहो आन उपयास है। इधर अरसे से लिखना बंद है। जल्द प्रेस जानेवाला है। शली मीठी निरलकार। घटनाओं का चमत्कार।

दाता म (?) याज्ञोत्थाम की दवा के प्रयोगका यह फल हुआ है कि उसके वहन से होठ और ठोड़ी का एक हिस्सा जल गया है।

भवानीदत्त जी से कह दें, इन्हींलिए गमन नहीं हो सकता। मुखारविन्द भस्म हो गया है।

आपके मित्र भट्टाचार्य (देवेन्द्रनाथ भट्टाचार्य) ने एक पत्र लिखा था, उनका पता खो गया है उन्हें फिर पत्र भेजन के लिए लिख दें। खुद भी पता दे सकते हैं।

आपके 'तीर-तरंग' के प्रकाशन की ओर रपया की बातचीत करके जल्द आपको लिखूंगा। आशा है, कही कामयाबी हो जायगी।

आपका
'निराला'

जरूरी —

चौधरी राजेन्द्रनाथ जी कहते हैं कि
अक्टोबर के अंत तक (१००) भेजेंगे।
किताब भेजें।

—नि०

६४

C/o Pdt Bhagwati Pd. Bajpeyi,
Daraganj Allahabad
23 10-43

प्रिय जानकीवल्लभ जी,

शायद १०।११ नवम्बर को प्रयाग की नुमाइश में कवि सम्मेलन होने वाला है।

आपको ६५) भेज कर बुलायेंगे। हम रहेंगे। आइये।^१

८।६ को मुशायरा है। हम यही हैं।

—निराला

१ और इधर मैं लिख रहा था —

हैं खड़ा सूनी डगर में।

आत्म विस्मृत हो रहा जैसे —

तुझे ही याद कर म॥

एक झोका घूलि घूँसत वायु का छू देह जाता,

और, पछी एक ऊपर से दिखाता नेह गाता,

दिल रहा दयनीय कसा

इस अबुस धूमिल प्रहर में।

घुप खड़ा तेरी डगर में॥

घत्स उत्सुक धेनुओं का मुन रहा सक्कण रँभाना,

देखता हूँ, गहि जनों का तीव्र-पद गह लौट जाना,

लग रहा कितना अकेला

आज अपनी ही नजर में ?

क्यों खड़ा सूनी डगर में ?

सोचता हूँ साँझ ही जातो पहुँचते सिन्धु-तट तक,

क्या कमी भी पत्र पाऊँगा न म तेरे निकट तक,

लहर कर से कौन इगित—

कर बुलाना है भँवर म ?

हाय ! म अब तक डगर में !

—तीर-तरङ्ग । ६

निराला के पत्र

६५

C/o Pdt Bhagawati Pd Bajpeyi,
Daragunj, Allahabad
2 11 43

प्रिय आचाय,
आपका हाल और रुपये ५ से पहले भेजने की बातचीत पत्रवास्तु जी से
कह दी ।
अगर भेजें तो आयें । कह दिया कि ६५) भेजें, चाहें तो तार का खच
काट लें ।

आपका
निराला

१ केवल निराला की सिफारिश पर मुझ जैसे अनात-कुल शील को पैसे
देकर कहा कौन बुलाता । रायगढ़ (राजदरवार) छोड़ने के बाद से गवनमट
संस्कृत कॉलेज की नौकरी मिलन तक का, छह-आठ वर्षों का लम्बा अर्सा
भयानक मुफलिसी म गुजरा । एक ओर निराला की मुताल्लस कोशिश, दूसरी
ओर मेरी हरबदम नाकामयाबी । और इसी उमस में एक दिन यह 'वन-सुमन'
खिला था—

विजय वन का सुमन हूँ मैं सुरभि अपनी संजोए,
अमर के गान से अनजान प्राणों को भिगोए ।
रहूँ, रोता ? अरे, मेरे रुदन का अर्थ ही क्या ?
— विवशा मुसकान मुद्रा खया है ध्यय ही क्या ?
रहूँ गाता ? समझता कौन मेरा मौन सजन,
न मेरे नाद में बादल, न विद्युत, वज्र-गजन ।
कि पारावार सा होता न हा हाकार मेरा,
न दुजय ज्वार सा उद्दाम, उमद प्यार मेरा ।

सजल कसी अतलता में हृदय घट हूँ डुबोए ।
विजय वन का सुमन हूँ मैं सुरभि अपनी संजोए ।।
सिसकती गंध रघों में, पवन निस्पंद क्यों है ?
मंदिर मकरंद घुलता मंद प्रतिदल बंद क्यों है ?
समझता हूँ कि वन उपवन रहे हैं शीम क्योंकर,
—कि मुरझाए कुसुम बितने प्रथम आमोद छोकर,
—मुकुल मसले गए कसे अबल दल डठलो पर ।
—गए धर या उडे नम के प्रलय भरते परों पर ।
उमगो को रहा दुलरा न कोई रग खोए ।
विजय वन का सुमन हूँ मैं सुरभि अपनी संजोए ।।

इकाई की मूल्य-विज्ञान—पटे खाइ कहीं की,
 कि जोते 'हाँ', सुनिश्चित हार हो जाए 'नहीं' की।
 समन्वय द्वन्द्व का—सगति अपेक्षित दुःख सुख की।
 न हो मन प्राण में जब तक, छूले छाली न मूल्य की।
 विषम समवेदनाओं की न कोई तान तोड़े—
 चढ़ाने जो कहे सिर झट झपट गरदन मरोड़।
 —छगाने जो कहे उर से सई कीई सुभोए।
 विज्ञान धन का सुमन हूँ मैं सुरभि अपनी सजोए।।

वन-सुमन अवतिका

C/o B P Vajpeyi,
Daraganj, Allahabad
2 12 43

मैं आकाश,
मैं यहाँ हूँ। चौधरी साहब (कवयित्री सुमित्राकुमारी सिंहा के पति चौधरी राजेन्द्र शङ्कर) यहाँ आये थे। मैंने १००) तत्काल आपको भेजने के लिए कह दिया था।' उन्होंने भेज दिये होंगे। खबर नहीं मिली।
आपकी पुस्तक (तीर-तरङ्ग) मैंने नहीं देखी, पर उसे भी प्रेस में दे देने के लिए कह दिया था।
अभी तक हवा खाता रहा। जल्द समाचार दीजिए।

आपका
निराला

मौत का एक दिन मज्जमन है
नींद क्यों रात भर नहीं आती !
—प्रालिख

मुर-तके एक दिन मुताइन है,
नींद मिनसार भर नहीं आई।'
—निराला

१ नहीं, मेरे पाग कभी कोई सौ ६० किमी ने नहीं भेजे थे।
२ बीग बरस पहले भी निराला ने मूरतन जी के एक प्रमिद—वृष्ण माहात्म्य के पद का गाय अपना 'वृष्ण महात्म'।' प्रशंसित कराया था
गोरी बौहन सों सग गोरी ब्रज-चरितान।
गले लगायो प्रेम सों श्याम कामतनु बाहू ॥
श्याम कामतनु बाहू हय भौरि मे पायो।
गिली कमलिनो हरवि अक भरि उर धटायो ॥
प अक ऐसो हाल कि 'बाने हाय पगारे।
धला भर भी प्रेम लेन 'गोतल' सों हारे ॥

६७

C/o Pdt Bhagavati Prasad Vajpey
Daraganj Allahabad

प्रिय आचार्य

आपका पत्र मिला। मेरे पत्र का उल्लेख आपने नहीं किया मिला या नहीं।

गया में मैंने कहा था कि आपको मैं लिख चुका हूँ। उसमें मैंने अधिकार के न विकने की बात स्पष्ट कर दी थी। यहाँ से चौधरी साहब को एक पत्र मैंने (वहाँ से लौट कर) फिर लिखा। रुपये १००) अग्रिम रायल्टी के तौर जल्द भेज देने और किताब प्रेस क सिपूद कर देने पर जोर दिया। दुख है अभी तक उनका उत्तर नहीं मिला। मैंने यह भी लिखा था कि किताब मेरे पास भेज दीजिए अगर न छापना चाह मैं यहाँ कोई प्रबन्ध कर दूंगा। समझ में नहीं आता, उनके भौन का क्या अर्थ है। छापेंगे अवश्य नहीं तो वापस कर देते। मुमकिन मरे यहाँ रुक जाने से स्नेह कोप हुआ हो।

आपको यहाँ के कवि सम्मेलना में बुलान का अवश्य प्रबन्ध करूंगा। और भी देखता हूँ अगर कुछ कर सकूँ। आपकी पुस्तक जल्द मिलेगी, आगा है। हाँ टाकायप न करें मैं फागुन में खच भेज कर एक बार आपसे बुलाऊंगा, उस समय साथ लेत आयें।

इधर मेरा काम ढीला है। थोड़ा ही थोड़ा लिख पाता हूँ। फारसी बहो पर कुछ गीत लिखे हैं—गजलें। अभी बहुत अच्छा नहीं बन पड़ता।

संस्कृत शब्दों से, जैसे—

‘असम्भो ही गई धीना विमास वज्रता या,
अमिय शरण नव जीवन-समास वज्रता या।’

हिन्दी से जस—

“हसा क तार के होते हैं ये घटार के दिन,
गने के शर के होने हैं ये घटार के दिन।”

आपका साहित्यिक बाप स्तुत्य है। थोड़े समय में आपने बहुत बाप किया। प्रो० शिवपूजन साहाय जी ने आपकी कई पुस्तकों का उल्लेख आठे प्रया की सूची में किया है।

हम तो थोड़ा ही करन अगस्त हा बा अरिभ समय स्पर्धा प्रनिराध में पार हा गया। अकला दम ! आगा नया जीवन मिलना है।

अभी यहाँ बड़े दिना में डा० रामविलास आये थे। आधुनिकों में बड़ा नाम कर रहे हैं। यू० पी० के प्रगतिशील-लेखक सङ्घ के सेक्रेटरी हैं। लखनऊ में भी उनका व्याख्यान हुआ, हम लोगो ने यहाँ भी कराया। एक घण्टे तक खूब बोले। साथ ५० गङ्गाप्रसाद मिश्र एम० ए० थे। दिल्ली में टाक थी, डा० रामविलास गये।

मेरा एक व्याख्याता श्रीमती महादेवी जी की महिमा विद्यापीठ में हो चुका है दो घंटे का, एक फिर होनेवाला है।—आधुनिक साहित्य पर फिर होगा। क्योंकि सक्षेप निकालने में भी मुझे कई घंटे आवश्यक हो गये। फिर विश्वविद्यालय में भी होगा।

प्रसन हैं। रगना नहाता हूँ, भली तरह रहता हूँ, वाघव्य मानेवाला है— तयार हो रहा हूँ। साधारण जन का असाधारणत्व कहीं तक पहुँचेगा।^१

कवि लोग खूब लिखते हैं। तुलसीदास सब के सिरमौर।

पुश्कल-पत्र दीजियेगा। अच्छे होंगे।

आपका

निराला

पुन —

आप 'वदाचाम' में बैठनवाले थे, क्या हुआ ? अभी तक इसका समाचार नहीं मिला, अरसा हुआ।

—नि०

^१ जहाँ तक बाल्मीकि व्यास मूरदास-नुसीनास पहुँच सके। हमारा दश गटे और टगोर-ऐसो की भी समृद्ध प्रतिभा स पृथक् प्रकाशित श्रद्धि सिद्धि से कभी अपनी परम्परा का भूँठ नहीं उजागता।

फिर किमन अपरा' मिरजी है उगकी दृष्टि निचम ही 'परा' तक पहुँच चुकी है। परा के प्रत्यय के त्रिना अपरा की अनुभूति असम्भव है।

६८

दारामत्र, प्रयाग

१३२८४

प्रियवर आपाप

आपका वृथापन मिला । प्रसन्नता हुई ।

आप यहाँ प्रभावशाली धारिता का माप रहा है मय भी मधुरभावा व्यवहारकुशल है, बार्द जगद मिल जाती चाहिए थी । विभिन्न हास्य गार्ह्य लिखा रहत ।

सही लिखा है आपने, विद्या की परीक्षा से तीररी की परीक्षा और कति है । देविए, क्या गुजरती है गिरमने लि पर ।

‘चौधरी जो ने आये ही दाम भोज ।—अरध तजहि सुध सरबन जाना ।

बल उनका सत आया है तीरा महीन के बा—मुमिता जो क गिरु हुआ है १३ को यानी आज आ रहे हैं अब तज लिख नही सर तीर-तरङ्ग प्रम चली गई आदि आदि ।

यहाँ मजान यह हुआ है जब उट्टनि गत का जवाब नही दिया मैंन चोटी की पकड दूसरे क हवाले की—गात फाम छप चुक है ।

पता नही यह हाल मालूम करने क्या रख लें कही आपक बाकी पचास पर न पानी फेर दें ।’

मैं काँटा’—एक वृत्त काव्य सग्रह तयार कर रहा हू । आधुनिक तज है ।

चीजें लोगो को कम पसन्द आ रही हैं । इसको मैं उनका तयार न हुआ सस्कार समझता हूँ ।

यह मराला के जलावा है । देशदूत म रचनाए निकल रही हैं । जसे—

सत्य

तबला दोनो हाथ आपा हथियार,
दरबारी धीर राग गाया गया ।

× × ×

कद पातपोट की नहीं तो कभी
देस आधा छाली हो गया होता ।
देविका रानी धीर उदय शहर के
वीछे लगे लोग चले गये होते ।

काँटा

मुहोमुह रहे
एक पेठ पर दो डालों के काँटे जसे
अपने दिल की कली तोलते हुए ।

< × ×

गुल खिला,
आप आँध का काँटा हो गई ।

—निराला

‘उपा का दो रचनाएँ भेजी हैं। चिन्ता न कीजिए। यहाँ से भी उप-
छपान का प्रबंध हो सकता है।

तीन महीन किन्हीं तरह बोल जाइये। मुझे अँगरेजी में उपवास लिखने का
प्रोत्साहन मिला है। रुपये इसी तरह मिलेंगे।

तीन महीने बाद यहाँ आइये। मुझे सस्वृत पढाइये। मेरे साथ रहिये।

मेरा जगला उपवास अँगरेजी का होगा। इति।

—निराला

१ यही तो हुआ। ‘तीर-तरङ्ग’ छपा। बकीर राजेन्द्र शङ्कर जी उन्होंने
उमड़ी बहूत प्रतिष्ठा देवी। किन्तु पसा एक भी नहीं लिया। माहित्य-माधना
मे दन वर्षों में कब-चार सौ रुपए मिले थे—एक माल म चालीस रुपए।

मन '३५ म '४४ तक म केवल एक निबंध—‘भीरा और महादेवी’ पर
प० शान्तिप्रिय जी द्विवेदी ने १५) रु० भेजे थे। कानन (पूरी पुस्तक) के लिए
डेढ़ सौ पुस्तक भण्डार और अपूर्णा के लिए सौ ६० प० रामरहित मिश्र और
गाथा के लिए सौ ६० मुक्त जी ने दिए थे।

२ काँटा का ही परिवर्तित नाम ‘नय पत्तो’ है।

६६

दारागज, इलाहाबाद

१६ २ ४४

प्रिय आचार्य

आपका काड मिला। पत्र का उत्तर लिख कर रख दिया था। भेजा जा रहा है। असामयिक हो गया है।

आपकी बीमारी के समाचार से वज्रपात हुआ।^१

जसा लिखा है चौधरी जी आये थे हमन रुपये भेज देने क लिए कहा है। आज फिर तार कर रहे हैं कि तार से भेज दें।

आपके एकाएक अस्वस्थ होने का कारण नहीं मालूम, आपने नहा लिखा। परिश्रम—लेखन अध्ययन और चिन्ता होगा। धय से रहिए।

विश्वास है जल्द अच्छे हो जाइएगा।

आपके पिताजी को नमस्कार।

—निराला

१ पत्र की बीमारी का हाल सुनकर निराला कस बचन हो गए थे, महाश्वी और त्रिनन ही दूसरो न इस पर क्या कुछ नहीं लिखा, किन्तु मुग जसे एक अत्यन्त सुच्छ व्यक्ति के लिए भी वह कल्याण उम्मी भानि कल्याण हुआ था यह उनक ताबडनोड भेजे गये बचे-भूचे पत्रा से मालूम होगा। आये से अधिक पत्र तो भरे घाट स लग होने के कारण नायब हो गए।

बेड वय तक मैं बालाजार के चक्कर म रहा। तीन-तीन बार रिज्ज निचा था।

प्रिय श्री आचार्य

आपका काह मिल था । फिर समाचार नहीं मिले ।

बल १० श्री नारायण जी चतुर्वेदी से आपकी बानचीन सुनी । पूछने पर मालूम हुआ आपने मुजफ्फरपुर के कवि-सम्मेलन में कविता पढ़ी ।

वे पहले बड़े प्रशंसक थे, लेकिन प्रकाशक की दी आपकी 'गाथा' से आये हैं, उमकी निन्दा करते थे' इस स्कूल के तरफदार नहीं ।

१ ऊँच नीच सुनने का साहस बटोर कर ही मैंने शांत शीतल सरोवर में ककड़ फेंका था । 'गाथा में एमे अनेक अश्लील (?) अंश हैं जिन पर न एक कहीं न दस मुनू का मुहावरा नहीं लागू होता । आश्चर्य है तो यही कि राष्ट्रकवि था मँथिलीशरण गुप्त को गाथा' बहद पसंद आई थी—मेरे गीतो, प्रगीतो और महाकाव्य से भी बड़कर ।

"मार गया पर काठ, पहुँच आँगन में जो कुछ देखा ।
तू नगी थी नहा रही, धुन पर पड़ते ही दृष्टि—
पडे सौ घडे पानी फ, ज्यों बघी न सूखी सृष्टि,
वह तेरी तसवीर तिकुड कर बनी एक ही रेखा ।
सय हो कविता की, यी तेरी भरी बनक की गगर,
फुफकारें थे सलिल बिटु बघा, केन उगलते फनघर ।
बद नहीं, हों अघ नयन से तेरा सुवमा लेखा ।
वह तेरी तसवीर तिकुड कर बनी एक थी रेखा ! !

—दो अंघों

आँधे भुँह आकाश गिरे, यह रसा रसातल जाए ।
गगनम्पनी शीश झुका ले तुहिन गरीर हिमालय ! !
ढक से पुन विध्य रवि शशि का, हो जाए सय तममय ।
दावानल नागरिक सभ्यता में सटसा लग जाए ।

मानवता—यह अहंकार हुंकार जले घू घू कर ।
माँ थी सिया रही चिटिया का बच्चा तन छू-छू कर ।
—'जा, सो जा उनके सग उनका हृदय न दुपाने पाए ।
ला देंगे साडी, तेरा तन किसी तरह ढक जाए । !
'किसी तरह ढक जाए ।'—प्रतिध्वनि हुई अशब्द गगन में ! !
किसी तरह ढक जाए ।'—आँधों पर थी पडी अंधेरी ।
किसी तरह ढक जाए ।'— भरती धूल राख की डेरी ।
'किसी तरह ढक जाए ।'— वह वह गई पवन निजन में ।

उनसे लेकर किताब देखी। वास्तव में अपूर्व है। प्रो० श्री नलिनबिलोचन जी ने आपका लिए (?) लिखा है श्री प्रफुल्लचन्द्र जी ने भी सुन्दर लिखा है।

आप, सत्य होता तो सूचना देने कि ३०) चौधरी जी ने भेज दिये आपके पास। मैंने बाकी पूरे के लिए लिखा था। किताब सचमुच ही प्रेस में है। मुद्रक कहते थे। देखा जाय, कब तक निकलती है। पुस्तक की भूमिका सावभूमि हो, आपका पीटन है।

एक जमाव मेरठ में साहित्यिका का होने वाला है। अज्ञेय करते हैं आप जानते हैं। कई पत्र मरे पास आय। एक जनेय का भी आया है। मजेदार है। व इग समय आसाम में है फौज के ऊँचे पद के एक बड़ कमचारी। दिल्ली से नगद जी आय था। मिन थे। चलने का अनुरोध कर गये हैं। आपने लिए कठ लिख रहा हूँ कि बुगएँ।

महादबी जी माधनलाल जी तथा जीर कई लेखक बगाल जा रहे हैं लोगों की स्थिति का निरीक्षण करना। मरे भी जाने की बात है। अमृत बाजार में प्रमुख स्थान है। एक समय कच्चा पड़ रहा है जी।

बाकी की पकड़ उपजाय प्राय तयार है। काँटा प्रेस जान वाला है। बड़ा सफ़्त है। कुछ रचनाएँ इधर 'देशदूत' में निकली हैं आपका दया होगा। ताराफ लोग कम करते हैं। उच्चारण की गड़बड़ी होनी है। गजल की थोड़ी सी तारीफ।

जगा नलिनबिलोचन जी लिखते हैं, आर्टिस्ट वगैरह को पढ़ लीजिए। आधुनिकता में निबन्ध हो जायेंगे।

मैं एप्रिल के दूसरे मन्थान आगरे जाऊंगा। गुरुनाम जी की जगहें देखनी हैं। 'सुत्तमी' नाम जमी चीज लिखना चाहता हूँ। विचार कई लिखने का था, है भी आपका मामू है 'गाथा मरी घी'।

किमी तरह दर जाए ! — भारत भारत की यह माता !

किमी तरह दर जाए ! — जय है भारत भाग्य विधाता !

किमी तरह दर जाए ! — कौश कहीं की रोने घर में ?

किमी तरह दर जाए ! — बह बह गईं पवन निजान में !

— श्री श्री

निराला के पत्र

बच्छे हो गये, सबसे प्यारी की बात है। इरादा क्या है, सूचित कीजिएगा।
आपके पिता जी हा तो मेरा प्रणाम कहिएगा। अभी लिखने पढ़ने की
अधिव मिहनत हानिकर होगी।

लिखा है या नहीं, नहीं मायूम, इसी उपन्यास के बाद मेरा अँगरेजी
उपयास निकलेगा। वसन्त के अन्त से लिखना शुरू करेंगे।

पाली मौख रहा हूँ। माय अँगरेजी भी। वामचलाऊ सस्कृत कुछ तेज कर
रहा हूँ। उम्र से कमजोरी आती है।

अपना और 'अल्का' के बाद अपराजिता' निराला का तीसरा उपयास
होना, किन्तु निराला ने बताया था यह नाम अञ्चल जी ने अपने काव्य यकलन
के लिए ले लिया तो उन्होंने अपने उपयास का नाम बदलकर 'प्रभावती' कर
दिया। अपराजिता नाम रहने दिया गया होता तो निरुपमा का नाम भी अनु
पमा होता।

निराला को अन्तराणामनारोऽस्मि' का अद्भुत आग्रह था। अनामिका और
अपरा नाम भी उन्नी और सकेत करते हैं।

फिर उच्छटखल का बहुत विनापन हुआ। यह नाम श्री नरोत्तमप्रसाद
नागर को पसंद आ गया।

प्रसाद वितरण की क्लार में मैं भी था। जब निराला ने गाया' नहीं
लिखी तब मैंने यह नाम हथिया लिया। वस नाम ही गोपाल भाइ रवीन्द्रनाथ
कसे हो सकता था ?

रही बात यह कि 'गाया' नाम निराला का था। इम सदर्भ में
श्री जगदीशचन्द्र जी मायूर के शब्द याद आ गए

'जानकीवल्लभ जी उन दो चार भाग्यवान व्यक्तियों में रहे जिन पर
निराला जी की दृष्टि गजावलीकन करते करते टिक गई।

चमत्कारपूर्ण दृष्टि थी वह क्योंकि उसने जानकीवल्लभ जी की अविनतित
प्रतिभा को ऐसा आमंत्रण दिया कि तब से वाल्क्य की चेतना और अमि-
ध्यञ्जना जीवन की दारुण विभीषिकाओं के बावजूद, बराबर सत्रिय और
सजग रही है।

निराला ने हिंदी-संसार को अनेक उपहार दिए। जानकीवल्लभ जी की
प्रतिभा का प्रस्फुटन भी उनका एक अनमोल उपहार ही है।

दूर-दूर के कई बुलावे आये जैसे एक हैदराबाद से । इन्कार कर दिया ।
काम बहुत है । दाम भी मनमाना लेता हूँ ।

कुशल है । गङ्गा-स्नान गङ्गा-जल-पान चला जा रहा है ।

सस्नेह

—निराला

आपकी किताब चन्द्रमुखी जी से मिली ।

'अत्युन्नतिस्फोटितकञ्चुकानि यन्ध्यानि ।

—नि०

७१

दारागञ्ज, इलाहाबाद

१४-३-४४

प्रिय आचार्य,

मारफत की चिट्ठी सीधी नहीं आती। पत्र हस्तगत हुआ।

मैं किराये के मकान में रहता हूँ। आपको कल-ग़रसों एक दीय पत्र भेज चुका हूँ।

'गाथा' मिल गई। बहुत सुंदर लिखा है आपने। एक मेरी नई रचना*— शोपक पाँचक है—

बीठ बेंधी, अँघेरा उजाला हुआ।
 सँघो का डेला शकर पाला हुआ ॥ १ ॥
 राह अपनी लगे, नेता काम आया।
 हाथ मुहर है, मगर छदाम आया ॥ २ ॥
 आदमी हमारा तभी हारा है।
 दूसरे के हाथ जब उतारा है ॥ ३ ॥
 राह का लगान घर ने दिया।^१
 पानी रास्ता हमारा बंद किया ॥ ४ ॥
 माल हाट में है, मगर भाव नहीं।
 जैसे लड़ने को छोड़े,^२ दाव नहीं ॥ ५ ॥

हमने अँगरेजी उपन्यास का छाका तैयार कर लिया। अगर अडचन न हुई तो इस माल निकल जायगा।

'किं सव्यने सुमनसा मनसापि ग'घ'—याद करके अँगरेजी पटना छोड़ देना चाहता हूँ।— 'माधु चाचाय सम्बरो।'

आप अच्छे हाँ गये, प्रसन्नता है। शक्ति जन्म आ जामगी।

आपका

निराला

* दूसरी बार फिर निराला ने इसे अलग कागज पर लिख कर भेजा था। सशोधन इस प्रकार है—

१ राह अपनी ली कि नेता काम आया।

२ राह का लगान घर से लिया।

३ लड़ने को छोड़े, मगर दाव नहीं।

७२

आचाय,

पत्र हस्तगत हुआ ।

'गाथा' साद्यत मुझे बहुत पसन्द आई । उसकी शली जसो सीधी और साधारण लगती है, दरअस्त बसी नहीं । बड़ी ठोस है । समधिगत जन ही ऐसा लिख सकते हैं । घणन बड़ी तीखी घोट करने वाले हैं । सही मानो म आधुनिक । युवतिया के चित्र बड़े गहरे रंग-वाले, ऐसे ही स्थानों के, लोग व वयान । श्री नलिन किराचन जी ने सुदर लिखा है, ढग भा मजा । मैं अलग से लिखूंगा सम्बादपत्र म ।

महादजीजी को (तीर-तरङ्ग) अवश्य समपण कीजिए । आजकल बीमार हैं । उही स अधिक बातचीत होती है । बङ्गाल जानेवाली हैं । पता नही क्या हो ।

चौधरी की कितानें कई प्रेस म ह । एक मुद्दत से मुन रहा हूँ । जवाब के निमी का नही देने । मतलब वही जानें । जवाब न देने के पीछे एक कितान गवा बठे । चोटी की पत्र उही के यहाँ लिखी गई थी, अब छप दूसरे के यहाँ रही है । हम पर सुमित्रा जी स लडाई हो गई । कुछ लोग कहते हैं सुमित्रा जी अधिक बुद्धिमती हैं कुछ कहते हैं, चौधरी साहब ।

मेरठ को मैंने लिख दिया है । देखा जाय क्या करते हैं । जग बुलायें छब भेजें मुझे लिखिए । ईस्टर म हैं । इति ।

दारागज प्रयाग

१७ ३ ४४

रान ६

आपना

सूयकांत त्रिपाठी

निराला

भूक यहाँ दाना है

इसीलिए शीन है बीयाना है ।

—निराला

निराला के पत्र

७३

दारागज,
इलाहाबाद
१४६४४

प्रिय आचार्य,

आपकी कृपाय छप कर भूमिका के लिए भ्रा गई ।

मैं मानसिक बहुत खिन्न था, इसलिए कुछ देर कर दी । चौधरी का कोई उत्तर भी नहीं मिलता ।

जल्द एक भूमिका लिख डालने वाला हूँ । बड़ी विद्वत्तापूर्ण लिखूंगा^१, इस विचार से और देर कर दी ।

आपका
निराला

आपका पत्र अनाहूत नहीं आता ।

मैं भी अब बस करता हूँ । प्रसन हूँगे । इति ।

लौची के मजे होंगे और आम के ।

—नि

^१ यह बड़ी विद्वत्तापूर्ण भूमिका कभी नहीं लिखी गई । तीर तरङ्ग की छोटी मूखतापूर्ण भूमिका मैंने स्वयं ही लिख ली थी ।

७४

Daraganj,

Allahabad

30 | 45

प्रियवर,

आपका पत्र मिला । आप इतने अस्वस्थ हैं यह चिन्ताजनक है । Change की जगह आपने लिये प्रयाग भी है और सब जगहों से अच्छी ।

चन्द्रमुखी जी के लडका हुआ है । छ दिन का हो गया । हमारे यहाँ भी ठहरने की दिक्कत नहीं होगी ।

इस समय चन्द्रमुखी जी अपनी बड़ी बहन के मकान में हैं, दारागज में ही । कुशल है ।

कोई बसा अधिवेशन न हुआ तो यही रहेंगे । गये तो दो दिन को । यही रहिए । इति ।

आपका

निराला

याद है चन्द्रमुखी जी से
कुछ ऐसी बर्बा मुनी थी ।

७५

Daraganj Allahabad

15 5 45

प्रिय शास्त्री जी,

मैं लखनऊ उनाव वादि की तरफ गया था, इसलिए उत्तर नहीं लिखा जा सका ।

इस समय आप छुट्टियां में घर होंगे । फिर भी लिख रहा हूँ ।

महादेवी जी आपको जानती हैं । मैं और जिन वर दूंगा ।

लिख देना बड़ी बात नहीं गोकि उनकी आपें आजकल विगड रही हैं, टिकेट कर देंगी ।

उनमे आप खुद भी मिल सकते हैं मेरे साथ भी चल सकते हैं । शिप्रा की पत्तियाँ अच्छी हैं ।^१

एक अरमे बाद इलाहाबाद आया । प्रसन्न हूँ ।

मेरी ५ किताबें छप चुकी हैं Out होनी ही हैं । ४ और छप रही हैं । आपकी प्रसन्नता चाहिए । इनमे ४ किताबें दूसरे संस्करण वाली हैं, एक सवन्न अपनी रचनाआ का ४ नई ।

आपका
निराला

१ मेघ, द्रुत बन, जाओ मेरे कालिदास के देश,
 कहना हतभागो कविता का व्यय शब्द-सदेश
 "मुझे मृत्यु के लिए छोड़ कैसे तुम स्वर्ग तिघारे,
 म मन मारे तारे गिनती, तोड़ रहे तुम तारे !
 युग सत्त्व क्यों से बड़ी करती रही प्रतीक्षा,
 मेरी हुई अमरता की तुम लेते निष्ठुर परीक्षा !
 कहीं स्वर्ग से मुदर अपनी भूमि बनाने का अत,
 और कहीं तुम कारित कहीं की देण हुए प्रतिभा हत !
 अनासक्त कवि, भोग-नामना से भूले निर्माण,
 देत्र शान्ति की रचना भूले रचना का निर्वाण !
 पुण्याजित पा लाक गए तुम ज-मभूमि को भूल,
 सौ-दरयोवासक, मुदरता की अब उठती धूल !
 आज रामगिरि के आघम की धौड़ी छाती धीर—
 धूम्रपान चन्ते उत्सास-सो बहती जग्न समीर !
 पद्मरोप सर सरि सिक्तामय बूल बबूल-हरे हैं
 पाण्डुवदन षोडशियाँ पनघट स्वापद विह्व मरे हैं !
 मानव के मानस क रस का द्योत गया है मूष
 माय 'विपासा क्षाम-कण्ठ' है, चाया जलती मूष !
 गया शील, शालीनता गर्, हृदय स्वाय से अघ,
 प्रेम घना व्ययहार कना दुःपान, योन सम्बन्ध !
 इत गनि से पल रहा ज्यशी क अ धयण का भ्रम
 पर पुरुषका का न गगन घन भेदी कहीं पराक्रम !

पहुँच गया दुप्यत स्वर्ग जिस पावन परम प्रणय से,
 मानव आज घणा करता मुत सतनिमय परिणय से ।
 प्रेम हुआ पर्याय पाप का पुण्य साधना स्वाय,
 मधुशाला-आलाप आज चिंतन करना परमाय ।
 भूति राशि मे सत्य अनल-रुण सा है गया छिपाया,
 गलहस्तित शिव विश्वविजयिनी केवल मुदर माया ।
 यत्र चेतना मात्र फूकते मानव जड-सा मुनता,
 क्या परतत्र तत्र 'भूतो' का ?—तर फिर फिर सिर धुनता ।
 सब कुछ सुलभ हुआ जड युग में, भूयो का क्या मान ?
 दुलभ सबे, तुम्हारा केवल प्राण विमोहन गान ।
 रक्त पिपासा । मानव प्यासा मानव के शाणित का
 वद्ध धरित्री भोग रोग, जीष्य जन यौवन हित का ।
 आज वय्य गजन मे बजती भ्रमन चन की बशी
 वक् वकियो का पक्ष प्रबल उड गए हस औ हसी ।
 बादल मे विजली क्या, पानी मे है घघकी आग,
 क्षमा के झोंकों मे जलता स्नेह विहोन विराग ।
 धरु शक्र धनु तना, ज्वनि का थरथर जजर गात,
 बरस रही हैं लाल लाल बूदें, कसी बरसात ।
 निरपराध सिर काट रक्त के अश्रु बहाती अंसि है,
 लिखे विश्व इतिहास नया, प्रस्तुत ब्रह्मानिक मसि है ।
 स्वणप्रभू भू कृपक रो रहे हैं दाने दाने को,
 धमिक नारिया देह दिखाती देह छिपा पाने को ।
 युवती मा की सूखी छाती चूस शात शिशु होता
 देती फाड कलेजा धरती आसमान है रोता ।
 दूढ़ निकालो मुपमा, कवि ओ आद्य सट्टि के छप्टा
 देखो अपनी मातृममि की वशा, क्रांत के द्रष्टा ।
 उतरो भू पर ऊपर है क्या ?—हृदयहीन बह व्योम,
 जननी जमममि की लज्जा दिखलाते रवि-सोम ।
 ठुकरा दो जो मत्त बनाती तुम्हें स्वर्ग की हाला,
 पियो शक कवि लिए खडी म हालाहल का प्याला ।
 अक्षर-ब्रह्म, विश्व याकुल है ग्रहण करो अवतार,
 श्यामा माँ के वक्ष स्थल मे नवल दुग्ध सघार ।
 आओ, ङिड मण्डल प्रसन हो शीतल-मद मुगध—
 रह रह बहै समीरण फिर फिर सदानन्द, स्वच्छन्द ।
 दबी ओ मानुषी आपदाएँ टल जायँ अनत
 तुम आओ उजडे उपवन म आए अमर वसत ।
 द्वेष-दग्म से झुलसे प्राणा को दो प्रमल गात,
 दु प दय जजर शरीर को अक्षय यौवन दान ।

‘बरो शम्भु १ तु रहीं कुमारी’—रघो सती मौ नारी,
 सिंगु मृगेन्द्र के दन्तपरीक्षक निमय पद-सचारी ।
 रघु-ना घोर, राम-सा घबो तिरजो मुर-सेनानी,
 गुन जिनकी हुंकार बिनत हो अमुक महा-अभिमापी !
 नियति नियम से परे अरे, तुम निरय अनापन मन मे,
 स्वर भरते हो नित्य नित्य नय-नयन आहृत ‘यत्’ में ।
 हो विभेद क्यों ? स्वयं घरिबो गने मिले सान-द
 रघो रघो बधि, एक बार फिर महाप्रान्ता छन्द ।

+ +

दपनो सार्वत्रि—गुर दुत्तम मानवना का हृद् मूल
 जय तत्र तत्र वं तत्र न तत्र है एक बार ही भूल
 बहलाओ जो रही महीनत की पीड़य डारो है
 शास्त्र पापम अमरभारतो जयनक गरी गारो है
 आओ तमी—अमी ही से गुज्र जगिन, गौह मुगय
 स्वयंदा से मूल गुहरे है तिया व। भोगय ।

७६

Daraganj

Allahabad

23 5 45

प्रिय आचार्य

पत्र प्राप्त हुआ। शिप्रा मिली। अच्छा काम हुआ आपका। रसगङ्गाघर खरीदेंगे। एक पास है।

लडकी फेल हो गई। पढाई अच्छी न की होगी।

हमारी किताबें भी निकल रही है, छप रही है। बागज की महँगाई के कारण पहले पहल बेचने की फिक्र म होने हैं प्रकाशक, लेखक की प्रतिभा देने की फिक्र म बाद।

कुशल है। एक पत्र लिखा। उसका जिक्र नहीं किया।^१

हाँ दिल्ली में पागल जी मिले थे। प्रस्तान थे। पागलपन की शिवायत घर भर को है।

महादेवी जी को खुद लिखिए। वे आपको जानती ही हैं।

कुछ बाद आपकी रचनाएँ छापने की सोचेंगे। भारती मंदिर से क्या मिलता है? बाकी समाचार लिख। अब तो वहाँ सपरिवार रहते होंगे?

आपकी रचनाएँ जति सुन्दर हैं जसी आपकी तारीफ।^१

—निराला

१ क्या जिक्र करता? मैं तो उन दिना बायरन पड रहा था

Son of Earth^१

I know thee and the Powers which give thee power^१

I know thee for a man of many thoughts

And deeds of good and ill extreme in both

Fatal and fated in thy sufferings

२ बादलों से उलझ बादल स मुलझ,

ताड की आड स चाँद क्या शक्तिता।

म न हूँगा यहाँ कह रहा नम यही,

म न हूँगा कहीं? भूमि कहती 'नहीं',

निराला के पत्र

तुम हवा में दवानल वृथा टाकता !
 ताड़ की आड़ से चाँद क्या झाँकता ! !
 जीतने का क्लृप्त, वेदना हार की,
 क्या क्या स्वप्न से भिन्न सत्तार की ?
 बद तुम घाव में क्यों वृथा टाँकता !
 ताड़ की आड़ से चाँद क्या झाँकता ! !
 रग आया नहीं, रश्मि छाया घुली,
 रेख खुलती नहीं तूलिका यो तुली !
 शून्य तुम, चित्र मैं क्यों वृथा आँकता !
 ताड़ की आड़ से चाँद क्या झाँकता ! !

—अवन्तिका

× ×
 गागर भरने की बेला होले बीती जाती है !
 क्यों मूल चूक हो जाती चिर परिचित व्यापारों में,
 दिन दिन भर उलझी रहती सब दिन इन घर-द्वारों में,
 वैसे तो डुपहर ही से उत्सुकता उजसाती है !
 लगता, गागर भरने की बेला बीती जाती है ! !
 औरों की देखादेखी जब-तक रहती अलसाती
 सौरभ मीनी स्मृतियों की धारा में बहती जाती,
 सहसा रागिनी रँगोली यमती झटका खाती है !
 लगता गागर भरने की बेला बीती जाती है ! !
 ज्यों ज्यों दिन ढलता जाता औ' राध्या घिरती आती,
 ह्यों ह्यों पनघट पर कसी ह बवाबदी मच जाती !
 जल्दी जल्दी में गागर गागर से टक्कराती है !
 रोती गागर कहती लो, बेला बीती जाती है ! !
 हो गई देर हो अपनी गागर भरनी ही होगी,
 भरघट-पनघट की दूरी पूरी करनी ही होगी
 उज्ज्वल जल की कलकल धुन सुन मति-गति मदमाती है !
 रोती गागर भरने की बेला बीती जाती है ! !

—'सुरमरि'

रैत पर जो लिख रहा म, धार उसकी भेट देगी,
फिर किनारे पर खड़ी दुनिया, कही तो, क्या कहेगी ?

झुक गया, झम मे न फूला

रुक गया, पर पय न भूला,—

—यह कहानी जो बही, मेरी निशानी क्या रहेगी ?

धार पर जाँचें गडा दुनिया कही फिर क्या कहेगी ?

सजल बादल बन न पाया

म गगन से छन न पाया

अश्रु — फुहियो के लिए क्या भूमि लू लपटें सहेगी ?

बाद बादल के जली बिजली कड़क कर क्या कहेगी !

—दब यह चुप लिय रहा म

गद में क्या दिख रहा म ?

यह कसक बन गान तेरे प्राण में लुब छुप रहेगी ?

म मुनूपा ही नहीं फिर दूर दुनिया क्या कहेगी ?

प्रिय आचार्य

पत्र आया। समाचार अवगत हुए।

महादेवी जी पहाड हैं रामगढ। रामगिरि की याद आती है। उल्टा
हिसाब है।

आपसे चौधरी मिले थे, मुझसे कहा था।

आप खूब लिख रहे हैं। अच्छे होकर लिखिए।

हर पत्र में आपकी रचना पाने के बाद कुछ लिखते हैं आप विनापन में
ला सकते हैं। पर आपकी कुछ आदत ऐसी है। विनय आवश्यक नहीं।^१

शिप्रा मुझको बहुत पसन्द आई। यहा काफी पढी गई। अब आप
प्रसिद्ध हैं।

हम प्रूफ देखने में रहते हैं। चार कितायें निकल गई। छ छापखाने में
हैं। चार इधर की हैं मौलिक, एक अनुवाद पांच पुन संस्करण वाली, एक
सग्रह। पानी पडने पर चमेली को पूरा करूँगा।

इधर कुछ-कुछ कविता-कविता लिखते हैं। एक यह है—(फफलुन,
पन्नुन ४)

छूँ के झोंको झूलते हुए थे जो हरा दोंगरा उहाँ पर गिरा,
उहाँ बीजों के नये पर लगे, उहाँ पौधों से नया रस मिरा।

×

×

×

१ गाथा पर सम्मति प्रकाशकीय प्रेरणा से विनय के लिए मांगी थी।
निराला ने जवाब में बरारी डाँट पिलाई।

यह टटनी से हवा की छड़छाड़ है मगर
 विल कर सुगंध से किसी का दिल बहल गया ।^१

गया म प्रवाघ करा रह है । मुलाएँ तो आइएगा । इस समय यहाँ साथ
 एक रिगघ रवाएर, लघनऊ मूनिवसिटी रहते हैं—निलोकी नाय दीगित ।

मुसल है । उत्तर लिचिएगा । इति ।

आपका
 निराला

२ छामोश फतह पाने को रोका नहीं रका
 मुश्किल तमाम जिंदगी का जब सहल गया ।
 मने बला की पाटी ली है शेर के लिये,
 दुनिया के गोल-दाजों को देखा, बहल गया ।

Daraganj,
Allahabad
7-7 45

प्रियवर,

आपके यहाँ वाला कविसम्मेलन पडा है। आयोजन कराइए। फीस पूरी नहीं, तो जाने लायक दिलाने की बातचीत कीजिए वहा ता अच्छे-अच्छे आदमी हैं। काय प्रेमी भी होंगे।

लिखने के साथ सघटन भी रहना चाहिए। माहिय अप्रचार के कारण लौगा व विचार में उतरा रहता है।¹

आपका 'चिमटा' अच्छा रहा। इति।

—निराला

१ प्रचार और विनयित से पृथक् रहकर अखण्ड साधना का सतत उपदेश निराला मूल गए थे शायद। मैं मगर सरापा अपनी खामोश आवाज में डूबा रहा

‘गिन गिन पर रखे धरती पर ,

अलल बछडा बना रहा,

अमचूर हो गया !

उजड़ बिघरों की पुरनम खामोशी में बेनिशां छो गया ।

—खामोश आवाज

कभी-कभी वह का विस्फोट जो ही जानता है, अपने कानों को कैसा खगता था, पर विद्वान की जातिवादी राजनीति का शिकार हो कर धायल आत्मा को महलान के भ्रम में बधता था

लोग कहते हैं, कहीं पर क्या कहेंगे ?

डूबने वाले कभी तिनके गहेंगे ?

माहना है चाहता, तू तो अतन्ता

सतह पर निरते हुए घब कर रहेंगे !

मत्पु की गहरादियों में से निरलना

अंधिया में दीप का क्या सरल चलना ?

शुष्क इंधन को जलाती आग है जो,
 है न उसका काम जल के बीच जलना !
 वे दिया सकते विह्वल—बाँटों भरा तू,
 वे सिखा सकते हुलस—जीवित भरा तू,
 भेद यह भी पर तुझे मालूम है क्या—
 चिर तरुण ऋजुतर, नहीं कुचित जरा तू !
 जीण पट को फाड़ कर सीता नहीं है !
 तू सहज जीवन, महज जीता नहीं है ! !

+ + +
 लोग वे जो कुछ कहेंगे, तू सुनेगा ?
 मुखर जड पर मौन चेतन सिर धुनेगा ?
 व्यय की बीछार है, झड़ियाँ लगी हैं,
 तू दकेगा ? और उड़ते कण चुनेगा ?
 तप्त है तू बिंदु यह पीता नहीं है !
 बिंदुओं पर तू अरे, जीता नहीं है ! !

× × ×
 नास्ति हैं वे, अस्ति से टकरा रहे हैं,
 घमक तेजस्वी फलक, यह शाण घषण !
 तू स्वयं है ज्ञान, कुछ गीता नहीं है !
 आज मरता और कल जीता नहीं है ! !
 तू जिघर से जायगा, वह राह होगी,
 चाहता जो तू, सही वह चाह होगी
 मानदण्ड यही, विकल्प विकार औ सब
 तू जहाँ घम जायगा, वह चाह होगी !
 रस सिरजता है विकल पीता नहीं है !
 दे रहा जीवन, महज जीता नहीं है ! !

निराला के पत्र

७६

Durganj,
Allahabad
11 8 45

आचार्य,

आपका पत्र मिला। समाचार से चिन्ता बढी।
हम अपनी शक्ति भर तैयार हैं। हताश न हो। तयलीफो को धय से
बेलना पडता है। हमारे लायक सेवा लिखें। अथवा न करें और न
समझें।

हम ५ ६ दिन के लिए आगरा, दिल्ली, मेरठ, मुरादाबाद जा रहे हैं।
आने पर समाचार आ जाएगा, आशा है। इति।

आपका
निराला

- १ सुरेर गुरु दाओ गो सुरेर दीक्षा—
मोरा सुरेर बाङ्गाल एइ आमादेर भिक्षा।
तोमार सुरे भरिये नियो चित्त
यात्र येयाय वेसुर बाजे नित्य
कोलाहलेर वेगे घुण्डि उठे जेने,
नियो तुमि आमार वीणाय स इखानेइ परीक्षा ॥
- २ मेरी ज्वाल लाल स्वर्णम इस पर काली छाया न करो।
बादल, तुम मेरे नभ मे घिर घिर फिर फिर आया न करो ॥
धू धू कर जल रहीं चिताए साधों की, अरमानों की
यह उजाड बस्ती है कुछ मस्तानों की बीयानों की—
मिटों न मिट चुकने पर भी जिनकी ऊँची ऊँची लपटें
और अभी तो शेष सभी है आहुतियाँ इन प्राणों की।
हैंस हैंस कर जलने वाला पर आँसू बरसाया न करो।
बादल, तुम सून नभ मे आँसू भर भर आया न करो ॥
देखीं तुमने ज्योति कभी ओ अधकार लाने वालो ?
माप सके नभ की असीमता एगे अग-जग छाने वालो ?
ज्योति जगाते जो जल-जल कर उनकी दृढ़ता जानी है—
ओ पल भर बिरकर फिर तनिक हवा में उड़ जाने वालो।
भ मिटने की साथ लिए मुझपर ममता मापा न करो।
बादल, जइ जीवन लेकर चेतन नभ मे आया न करो ॥

—नेपगीत

८०

Daraganj
Allahabad
20-8 45

प्रिय आचार्य

आपका पत्र हस्तगत हुआ कि थागरा दिल्ली मेरठ के लिए रवाना हुआ। तत्काल उत्तर नहीं लिख सका।

बड़ी चिन्ता थी। बुखार अब कमा है, इलाज फायदा पहुँचा रहा है या नहीं, लिखने लिखाने की कृपा करें।^१

यहाँ ऐसी हालत में आना दुश्वार होगा। कुशल है। पानी अच्छा बरस रहा है।

हंस कुमार जी से मेरठ में मुलाकात हुई थी। कश्मीर जाते हुए रुके थे। ५०) मिल गये।

१ रुक गईं नाव जिस ठौर स्वयं

माझी उसको मत्स्यघार न कह !

बायर जो घटे आह भरे

तूफानों की परवाह करे !

हाँ तट तक जो पहुँचा न सका

चाहे तू उसको ज्वार न कह !

कोई तम की कह घम, सपना,

दू दे आलोक-लोक अपना

तब सिधु पार जाने वाले की

निष्ठुर तू बेचार न कह !

— तीरतरङ्ग' में सम्मि

+

+

दुख की समुद्र बनाओ गाओ !

काली घग्ग छटेगी कसे ?

रिमन्तिम रिमन्तिम स्वर बरसाओ !

निराला के पत्र

काम शुरू करने वाला हूँ। पानी छूब बरस रहा है। कई महीनों से पड़ा है।

आपका स्वास्थ्य समाचार जल्द अपेक्षित है। मेरठ कालिज में अच्छा रहा।

आपका
निराला

कौन सुने कहना की वाणी ?
दीन दगों के आँसू पानी !
पर अगीत सगीत अभी भी,—

इसका लयमय भेद बताओ !
असह सहो दड प्राण बनाओ,
अश्रुकणों को गान बनाओ,
जब सुप छिटके चन्द्रकिरण बन
सजल-नयन झुक, धूप हो जाओ !

— उत्पललल' में संकलित

प्रियवर,
 आप पहुँच गये होंगे। प्रसन्नता होगी।
 डा० रामविलास ने एव फोटो भेजा है, हम दोनों हैं उसमें। बड़ा अच्छा
 गया है।
 हमारी अलग निवाली जा सकती है। देने का विचार है कहीं।
 आपके बाबूजी को प्रणाम। लडकी (शैलबाला) को स्नेह।

आपका
 निराला

१ प्राय एक सप्ताह दारागज में रहकर मुजफ्फरपुर लौट आया था।
 स्वयं निराग के अतिरिक्त क्वथिली सुधा सपरिवार, कला मन्दिर वाले श्री
 उमाशङ्कर सिंह आदि कोई डेढ़ दर्जन आदमी स्टेशन तक पहुँचाने आए और
 मुझे गाड़ी में बैठाकर वापस हुए थे। मैं गुनगुना रहा था —

क्या वह भी जरमान तुम्हारा ?
 जो मेरे नयनों के सपने,
 जो मेरे प्राणों के अपने
 दे-दे कर अभिराप चले सब,—

क्या वह भी घरदान तुम्हारा ?
 जुली हवा में पर फलाता
 मुक्त मिहग नम चढ़ कर गाना,
 पर जो जकड़ा हृदय-वध में —

क्या वह भी निर्माण तुम्हारा ?
 बादल देख हृदय भर आया,
 'दो दो-मूँद', वहा, डुलराया,
 पर पपीहरे ने जो पाया —

क्या वह भी पापाण तुम्हारा ?
 नीरव तम, निरीय की बेला
 मर पय पर म छडा अवेला
 सिसक सिसक कर रोता है, जो —
 क्या वह भी प्रिय मान तुम्हारा ?

—'तीर-तरङ्ग

८३

दारागज, इलाहाबाद,

२१ ६ ४५,

प्रिय आचार्य,

पत्र आया। तस्वीर पूजा की सुट्टियां म ले जाइए। यहाँ स्वास्थ्य सुधर जायगा।

मौसम यह इलाहाबाद का अच्छा समझा जाता है। कुशल है। इति।

आपका

निराला

१ बन्ना धौंसला पिछडा पछी ।

अब अनन्त से कौन मिलाए

जिससे तू छुद बिछडा पछी ।

सुखद स्वप्न लख किसी सुदिन का

धुन चुन पल छिन तिनका तिनका

रहा मूल से दूर दूर

पर डाल पात तो झगडा पछी ।

जनि जले तब विफल न इधन,

मुक्ति कम का मम, न बधन,

उडा हाथ जो सबसे आगे,

वह अपने से पिछडा पछी ।

निराला के पत्र

८४

Daraganj,
Allahabad
9 10-45

प्रिय आचार्य

पत्र मिला। बीमारी अत्यन्त चिंता जनक हुई। आशा है, अच्छा इलाज
फायदा पहुँचायेगा।

समाचार किसी से लिखा कर भेजिए। जो लगा है। अधिक चिन्ता न
कीजिए। ईश्वर पार लगायेंगे।

यहाँ के लोगों में बीमारी की चिन्ता है। जो अडचन हो लिखिएगा।

सस्नेह
निराला

१ ईश्वर सज्जी भाव तब मेरे भी मस्तिष्क में मँडलाते ही रहने थे—

‘प्यास तुम्हारी कण्ठ-कण्ठ में,
रूप तुम्हारा नयन-नयन में।

प्राण पतग प्रथम मद-माते
मँडलाते कामना-अनल पर,

ऊँच श्यास से लपट उठाते
धुम्र जाते विश्वास अटल कर

मान भरा बलिदान ध्येय है
उच्च लक्ष्य का पथ घँसा-सा,—

यही रास्य जागरित दिवा था,
यही स्वप्न नित रास गयन में।

प्यास तुम्हारी कण्ठ-कण्ठ में
रूप तुम्हारा नयन नयन में ॥

अमिष्यस्मिन् जोदन है जितनी

मरण उसी सती की सिंहुडन ।
 पावस जिसका श्याम वण है,
 शरद उसी का निमल वपण ! ।
 जाने कसे दष्टि उलसती,
 स्पष्ट सष्टि के ताने-बाने,
 चित्रपटी की रेख देख पडती विचित्र
 धर-त-तु धयन मे ।
 प्यास तुम्हारी कण्ठ-कण्ठ मे
 रूप तुम्हारा नयन-नयन मे ! ।
 व्याप्त किए छावापथिबी को
 देव ! तुम्हारा सु-दर मन्दिर !
 जिसके धातापन से क्षम क्षण
 छनतीं पवन तरंगों शिरशिर ! ।
 सूध-चन्द्र दिपते भतद्र हैं,
 ज्योतिमय ! जखण्ड दीपक से,
 पूजा-अर्चा की चिर चर्चा
 कुञ्ज कुञ्ज के कुसुम चयन मे !
 प्यास तुम्हारी कण्ठ-कण्ठ मे
 रूप तुम्हारा नयन नयन मे ! ।

निराला के पत्र

८५

Daraganj,
Allahabad
23-10 45

प्रियवर,

पत्र लिखाया हुआ मिला ।
प्रयाग आने की खबर से प्रसन्नता हुई । अभी तब प्रतीक्षा थी । अब
लिखते हैं ।'

बीमारी के इलाज के लिए आ सकते हैं । यहाँ कुछ अधिक अच्छी व्यवस्था-
अवस्था रह सकती है । मुधा जी के यहाँ से भोजन पक कर आया करेगा,
डाक्टर इलाज करेगा ।

वहाँ की नोकरी में छुट्टी आदि की व्यवस्था कीजिएगा आप ।

—निराला

१ जीवन की यह चाह नहीं है ।
रुक रुक कर जो सास निकलती,
उसमें उर की आह नहीं है !!
कैसे पिक की तान सुनाऊँ ?
कैसे मधुर गान म गाऊँ ?
मेरी आँखों से न अश्रु अब,
मेरे दिल में दाह नहीं है ।
सुख आती गुलाब के बन थी,
यह डुबलता मेरे मन की,
यों फूलों का मोह न मुझको
शूलों को परबाह नहीं है ।
हँस हँस कर सताप लिपा है
सुख भी दुख की माप लगा है,
सुख सरिता में डूब न पाया
दुख का सिंघु अयाह नहीं है ।
लौट लौट कर आना पड़ता,
स्नेह नहीं, यह मेरी जड़ता
अब जाना जिससे जाता था
यह मजिल की राह नहीं है ।

—शिखा

८६

Daraganj

Allahabad

12 11-45

प्रियतर,

आपका पत्र मिला । आपकी बीमारी अदोसे की है ।^१अब क्या कर रहे है, क्या इलाज हो रहा है लिखने की
कीजिए ।

मैं भी इधर पीड़ित था । अभी कम अच्छा हूँ । इति ।

१ उही तिनो मैंन सबसे अधिक अवसाद-पूण गीत रि

(१)

वह मेरा अन्तिम प्रस्ताव था !

भेज भेज सन्देश सुरभि वा,
दूर दूर मल्यानिल द्वारा,
पात बाँध आते भीरों के
गुन गुन स्वर से सुखे पुकारा

१.

।

यह

तिमिर निमि-

टिम टिम

तू दिखलाता

या जपन यह

भंडलाता भंडलाता कोई शलम
 द्वार तक तेरे आया,
 काँप गया था तिमिर गोह का,
 शलम द्वार पर जब जलता था,
 तुझसे मिलने को निममत्तम,
 वह मेरा अन्तिम प्रयास था ।

—तीर-तरंग

(२)

मेरी, सागर के बीच, तूरी !
 है दूर यहा से नील गगन,
 है दूर यहा से भूमि हरी !
 म जग के मग से छुग हुआ,
 असहाय अक्किञ्चन, लुटा हुआ,
 मेरा अन्तर सूना-सूना,
 है मेरी आँखें भरी भरी !
 घुमड़ी काली-काली बदली,
 भर तिमिर, तुपार यपार चलो,
 बचता हूँ एक भँवर से जब
 घिर आती लहरी पर लहरी !

+

मत मिलें मुझे मोती दाने
 मेरा श्रम कोई मत जाने
 पर बीच सिंघ से लोट चलूँ
 कसे लेकर सूनी गगरी !

+

—तीर-तरंग

८७

Daraganj
Allahabad
26 11 45

प्रिय आशाय,

आपका पत्र मिला । आप कुछ स्वच्छ स्वस्थ हैं पढ़कर बहुत प्रसन्न हुआ ।

कालाजार बुरी बीमारी है । अपना बड़ा बस नहीं । सुनकर रह जाना है । ईश्वर आपको प्रसन्न करें, प्राथना करता हूँ ।^१

१ लो, जा रहा पतझार है ।

तरु-पत्र थर थर कर उठे,
घन धाग मर मर कर उठे
यह तो छुरी की धार उर—

पर चल रही, न बयार है !

कसी अंधेरी रात है,
हर चरण पर आघात है
जीवित शयों का स्वग ! क्या—

सचमुच यही ससार है !

×

×

ससार पारावार है,
जिसकी प्रखरतर धार है,
मने तरी दी खोल,

चरे हाथ मे पतवार है !

—'तीर-तरन'

निराला के पत्र

मेरा लिखना पढ़ना बहुत ढीला है। आपत्तियां प्रबल हैं। एक तरह
बीमारी ही है। चलता जा रहा है।
'अपरा' निकलने पर है। 'वेला' प्रेस गई।

आपका
निराला

२ कसो उदासी छा रही !

मीठे जहर के तीर ले,
मीठी कसक ले, पीर ले,

पछवा हवा है आ रही !

कसो उदासी छा रही !!

पय जिंदगी का घोर है,
दिखता न ओर, न छोर है,

यों सौम चलती जा रही !

कसो उदासी छा रही !!

पूले घमन से रुठ कर,
बड़ी विजन में, टूठ पर,—

है एक बुलबुल गा रही !

कसो उदासी छा रही !!

८८

दारागज, प्रयाग

६ १२ ४५

गजल

छला गया, किरनो का प्रकाश कसे करे ?

द्विरज नहीं रज से रजत हास कसे करे ?

×

×

धुराई छोड, किसी को भलाई कर या न कर

जमीं रहने दे जा रहने दे जान रहने दे ।

प्रिय आचार्य,

पत्र मिला । प्रतीक्षा है, जब तद्वियत हो समय हो चले आइय ।

सयम स रहना आवश्यक है । जकेले और जी ऊबता होगा । काम से निवृत्त होकर लिखूंगा, सोचा था, इसलिये देर हुई ।

सुधा जी प्रसन्न हैं । सुना है, भवान बदला है । इधर भेरा जाना नहीं हुआ ।

कालाजार के लिए साधारण विनोद जोर सेवा जरूरी है । समाचार दीजिएगा ।

सस्नेह—

निराला

८९

Daraganj

Allahabad

28 12 45

आचार्य,

एक फाम नया छपा बर भेज चुका हूँ । एक चिट साम है जिमम लिखा है बाबूजी म (१०००) एक हजार रुपए जल्द भेजने के लिए कटिएगा, हिमात्र फिर करेंगे । अब आप पत्र पात ही अपनी तस्वीर दला' म जान के लिए

भ्रमण । ८० गीत छप चुके । पूरी किताब में बाकी देखिएगा या बाकी फाम फिर भेज दोगे तो एत किताब काम चलाने के लिए बंधा ले सकेंगे । जबाब अगर दें ता बापनी डाक से सूचित कीजिए । जल्दत आ पडी है ।

'चोटी की पकड़' और 'बाले कारनामे' दो उपयास छप रहे हैं । जनवरी में आखीर तक निकल जायेंगे, अलग-अलग प्रकाशना से । 'नये पत्ते' आधुनिक भाववाले पद्यों का संग्रह 'बिला' के बाद उमी प्रेम से छपना शुरू होगा ।

कुशल है । स्वास्थ्य के लिए जाड़े भर धामोश रहिए । गरमिया में बलिए कश्मार ही आया जाय ।

आपका
निराला

६०

Daraganj
Allahabad
4 2 46

प्रिय आचार्य,

'बिला' के पूरे फाम ६१ गीतों के भूमिका बसाय भेज चुके हैं । किताब भी बंध गई । किसी किसी को उपहार दिया जा चुका । अभी पूरी प्रतियाँ नहीं मिली ।

एक हप्ता में २ प्रतियाँ प्रकाशक से भेजने के लिए कहेंगे । तस्वीर हमारे पास रखी है । आकर ले जाइएगा ।

नव पत्ते का छपना जारी है । प्रसन होंगे । यहाँ कुशल है ।

उपयास भी दो छप रहे हैं । बडी उल्लस है । अपना अज तब निवृत्ती है । जून तक निश्चिन्त हो तो हा । बडा जमाव है । इति ।

आपका
निराला

६१

Daraganj

Allahabad

7 2 46

प्रिय आचार्य,

तुम्हारा पत्र नहीं मिला। यहाँ से २/३ जा चुके। बला का पूरा साज गया। किताब बाजार में निकल गई। प्रकाशक से दो प्रतिया भेजने के लिए कहा है। तुम्हारा पता लिखा दिया है।

'शिञ्जनी' का साज पुस्तक कर रहे हैं। साहित्यकार ससद की तरफ से प्रेम जाने वाला है। महादेवी पत्र के मेरे २५/२५ गीत है, मेरे बिलकुल नये। 'नये पत्ते' के दो फर्में छप चुके, जहाँ से 'बेला' निकली। 'काले कारनामे और 'चोटी' की पकड देख रहे हैं।

'कुकुरमुत्ता' सशोधित निकल रहा है। छप चुका है। भेजेंगे।

—निराला

६२

Daraganj

Allahabad

28 2 46

प्रिय आचार्य,

बड़ा दुःख हुआ यह पढ़कर कि फिर बीमार पड़े। इस समय क्या हाल है, लिखाइएगा।

पुस्तकों का पासल लौट आया है मुना है। मैंने समझा लिया है कि वे अस्वस्थ हैं।

क्या इन्ज हो रहा है? पूर्ण विराम आवश्यक जान पड़ता है। मैं भी दुबल हो रहा हूँ। उन जिना अस्वस्थ था।

काम बहुत है। अप्रैल के मध्य तक आ सकूंगा। अभी यही उम्मान है। इति।

आपका

निराला

दारागज, इलाहाबाद

२७ ३ ४६

प्रिय आचार्य,

समय पर उत्तर नहीं जा सका। बीमारी मुन-मुनकर अनायास निराशा
बनाती रही। पत्र लिखा पड़ा रह गया।

अपने पत्रों भेजने हैं। 'पकड़' भी निकल गई। ३/४ दिन में भेजेंगे। दूसरा
खण्ड प्रेस जान का है।

अप्रलभ देने चलने का विचार है। इति।

सस्नेह

निराला

६४

१ ४ ४६

जहाँ तक याद है, एक पत्र लिख चुके हैं। यह लिखा पड़ा था, भेज देते
हैं। अपने समाचार खण्ड लिखना-लिखाना। चिन्ता है। इलाज हो रहा है या
नहीं लिखना।

—नि०

६५

Daraganj,

Allahabad

16 3 46

प्रिय आचार्य,

पत्र मिला। पढ़ कर बड़ा दुख है।

समय, इलाज आवश्यक है काम कम। जहाँ तक संपत्ति। पूरा अवकाश
भी ले सकते हैं।

होली का नमस्कार । कितारें इधर वाली होली के दाद भेजी जायगी ।
आधे अप्रैल तक हम मिलेंगे ।

—निराला

६६

Daraganj

Allahabad

19 5 46

प्रियवर

अस्वस्थता के कारण उत्तर नहा जा सका ।

कितारें निकल रही हैं निकल चुकी है दो और । एक माय चार पाच भेज
देंगे ऐसी जल्दबाजी क्या है ?

आप अच्छे हैं खुशी की बात है । समय से रहिएगा तो सँभल जाइएगा ।
बहुत अस्तव्यस्त होंगे तो आक्रमण तीव्र होगा ।

सुधा जी प्रसन्न हैं । क्वचित् चर्चा करती हैं ।

गरमी का प्रकाश है । काम करते पसीना निकलने लगा है । पर गद्दा
नहान का सुख शिमल म भी नहीं ।

क्वार का दशमी विजया तक फुरमन होगी, काम को ढरें पर ले आऊँगा ।
बुजल नामी हूँ । इति ।

मस्तक

निराला

निराला के पत्र

६७

C/o Pdt Ram Krishna Tripathi
Sangeet Visharad
Dalmau,
Rai Bareilly
3 6 46

प्रिय आचार्य,

समय पर उत्तर नहीं जा सका। १५ दिन से हम यहाँ हैं, रामकृष्ण के
मामा बीमार हैं सख्त।

किताबें तीन निकल चुकी हैं, बाकी भी निकल जायें तो भेजवायें।
पानी गिरने तक दो-तीन और निकलने वाली हैं।

आप प्रसन्न होंगे। काम इस समय बढ़ है। यहाँ आम काफी हैं।

आपका
निराला

६६

Daraganj,
Allahabad
27 8 47

प्रियवर,

हमने प० गङ्गाधर शास्त्री के मुख आपके सम्बन्ध दुस्सवाद^१ सुना । ईश्वर आपको धय दे ।

हम २०/३० रोज के अदर आज ही डल्मऊ जा रहे हैं । अगली दूसरो तक लोटेंगे ।

कुशल है, अपने स्वास्थ्य की ओर ध्यान दीजिए । हो तो यहा चले आइए ।
इति ।

आपका
निराला

१ शाल की माँ के स्वगवास का दुस्सवाद ।

१००

C/o Poet Sudha,
109/218, Ramkrishna Nagar,
Cawnpore
9 11 47

श्री आचार्य,

प्रिय शास्त्री जी,

एक अरसा हुआ, कुछ लिखकर सूचित नहीं कर सके ।

गङ्गाधर जो शास्त्री से सुना था, आपकी अर्द्धाङ्गिनी (देवी चन्द्रकला) का देहांत हो गया है । इस फालिज का क्या इलाज ?

इस पर आपने, सुना, काम बढा दिया¹, गो कि तदुस्ती के लिए मना किया कि दम का दापरा पार न कीजिएगा ।

सुना है, सख्त बीमार हैं ।

अफसोस ! हम भी मर कर बचे । बहुत संभाली थी तदुस्ती, फिर चूहे हा गये ।

वे तस्वीरें ही रह गई हैं । आगे जो कुछ हो ।

हाल भी मिलना मुहाल था । ईश्वर की इच्छा और अच्छे इलाज से नीरोग हा । यहाँ मिलने आये ।

—निराला

१ आधुनिक हिन्दी कविता को निराला की देन नामक पुस्तक के लिखने का काम । यह अब तक अप्रकाशित है । ज्यो-ज्यो मुझे अपने जीवन से निराशा होती जाती थी, बार-बार बीमार होत रहने के कारण, त्यो-त्यो में श्रम बढाता जाता था ।

१०१

Dalmau

Rai Bareilly

22 11 47

प्रियवर,

कानपुर म पत्र मिला । फिर यहा चले आये । ८/१० दिन कम से कम रहगे । साहित्यिक अधूरा काम पूरा करना है ।

आपका काम बडा है, खच लम्बा आवश्यक होगा ही ।^१ सबसे अधिक यह दवा विपत्ति हमारी भावना को विचलित करती है । फिर सविस्तार लिखेंगे ।

शायद यह सम्वाद हमने लिखा है पिछले पत्र म कि तुलसीदास की रामायण का खडी बोली मे छन्द भावानुकूल अनुवाद कर रहे हैं ।

शुरू का विनयखण्ड जा प्राय ४ फाम का हागा, कथारम्भ से पहले तक का, राष्ट्रभाषा विद्यालय गायघाट काशी का दिया है । जनकपुर दशन, वाटिकागमन खण्ड महादेवी जी को साहित्यकार ससद से छपाने के लिए । विचार पाठय करने का है । दोना खण्डो को । बिन्ने अच्छी होगी ।

अनुवाद सफल है । गोस्वामी जी की साहित्यिक प्रतिभा का यथाशक्ति स्थापन किये रहने का प्रयत्न किया गया है ।

आपका

निराला

१ निराला के विराट साहित्यिक स्वरूप को देखते हुए मुने अपनी ढाई तीन सौ पृष्ठो की पुस्तक न रची । मैंने महाकवि निराला नामक सहस्र पृष्ठो के एक विशाल समीक्षात्मक ग्रंथ की रूपरेखा तयार कर ली । तीन खण्ड किए—आधुनिक हिंदी कविता को निराला की दन नामक अपने मौलिक विवेचन को (प्रथम) पस्तावना खण्ड म रखा, (दूसरे) आलोचना-खण्ड म हिंदी के प्रतिनिधि आलोचको से प्रयत्न करके लिखाए हुए निबंधो को और (तीसरे) उपसंहार खण्ड मे स्वयं निराला के लिखे पुस्तक रूप म अप्रकाशित प्राय दो दर्जन लेखो को प्रबंध प्रतीक नाम से संकलित किया । इस विशाल ग्रंथ के प्राय ८ सौ पृष्ठ छप चुके थे । दन अध्यवसाय क दुराद अंत की पूरी जानकारी के लिए पण्डित स्मृति क वातायन गानकीवल्लभ शास्त्री, पृष्ठ २७/२८ लोहभारती प्रकाशन, इलाहाबाद ।

१०२

राष्ट्रभाषा विद्यालय,
बनारस
२२ १२ ५७

प्रियवर,

एक अरमा फिर हुआ, हमन पत्र स सम्बाद नही मगाया ।

आपके त्रारिवारिक जीवन की सदा चिन्ता रही जब से यहाँ के लोगों से आपकी पत्नी का वियोग मुना ।'

हम भात्वना क्या द ? यही कहने हैं कि जहा तक सम्भव है, दीपकाल तक विश्राम कीजिए ।

पत्र जल्द दीजिएगा । हम आपसे मिलना भी चाहते हैं , मगर एक सुअवसर ही स मिलना सम्भव है ।

हम तुलसीदास जी को रामायण का आधुनिक हिन्दी मे रूपान्तर कर रहे हैं । दा पुस्तिकाएँ इसी की निकल रही हैं, एक यहा से विनय खण्ड शुरू मे पावती विवाह हा जान तक हमरा साहित्यनार ससद से फुलवाडी-खण्ड ।

तुलसी की छन्द रचना पद्धति आदि यथासाध्य रक्खी गई है । देखना हा तो बडे तिन स आइए, नही तो किताबें यथा समय भेज ली जायेंगी । विनय-खण्ड छप रहा है । दो नाम कम्पोज्ड हो चुक हैं ।

—विराला

१ दही चन्द्रकला मे मन'२८ स मेरा दादा विवाह हुआ था । मैं बारह वर्ष का था वह चौदह पन्द्रह की । ब्याह के बाद वह अट्टारह उनीस वर्ष जीवित रही । मैं पढ़ना और जीविका के लिए जगह जगह की यात्रा छानता रहा । लयी दर्पण बेचरु की प्रीमारी स वह चत्र बसी ।

अट्टारह-उनीस वर्षों स हम अट्टारह उनीस तिन भी साथ न रहे । सगी गणना मर उगी कष्ट विप्लव जीवन के पत्थर पर उगी हुई दूय हैं ।

गुप्त —

अगर आवें तो सूचना दे दें और अती छगी यही गुप्त व काम
लाय आवें ।

दुग नाम के बाबू हम अपने, बर्द होने व, मगार भमना व यान्त नियाता
पाहो है जितना उन्ग अभी ता तहीं किया ।

बाबू आप जान हैं हम भारता म सदा पुरान विगगयन्त है और एर
अरम से ।

एहन म ब्यागान भी घेंगरेजी म निया है और घटा बा ।

यही कविताएँ मुनाई हैं गानुबा ससार व गभी प्रधान गगरा म ।

आपना
सूचना

२ मेरी शादी के मौके पर निराला जी आए थे तो लगभग एक सप्ताह
यहाँ रहे थे । मुजफ्फरपुर के रईसे आजम बाबू उमाशङ्कर प्रसाद को अपने
इस विश्वभ्रमण का वृत्तान्त कभी हिन्दी और कभी अंगरेजी म सुनाने लगे तो
कोलम्बस को कोसो पीछे छोड़ दिया—सिलसिलेवार 'पोरे, सनसनी सेर
घटनाएँ—बाबू साहब साँस साँघ कर सुनते रह गए थे ।

निराला के पत्र

१०३

The Rashtra Bhasha Vidyalaya
Gaya Ghat
Benares
3 1 48

प्रिय आचार्य,

नये साल का नमस्कार । शैल को स्नेह ।
पत्र आया । आपको मिहनत न करने के लिए ही कहा था, आपने नहीं
माना । अधिक इस पर और क्या ?

हम दरकिनार हैं । कारण हैं । कुश्नी का खाता भी पेश करना है ।
अभी तक तो किताब लिखी नहीं, कुछ लोगो ने थोड़ा बहुत लिखा है ।
बहुत तरह की सोच कर चुप हो रहता हूँ ।

आपकी किताब छन फाड हो रही है ।^१ रुपये सेठों से मिल सकते हैं ।
आपको इशारे काफी न्यि गये हैं । उनका भला उनको गुणग्राम समझाने से
सुझाया न होगा । वे दूरन्देश हैं । चिन्ता न कीजिए, बय घीरे घीरे आ
जायगा और काफी ।

मैं तो इधर पढता ही रहा । इसीलिए कुछ गठे मुँह उखाडने की सूची ।
काम चल रहा है ।

यहाँ अच्छा है । जाडा अधिक हो गया ।
मिलने जल्द या देर से । रामायण का अनुवाद दिखाना है ।
अगले काम भी सँवारने हैं जल्द फिर । यहाँ महीने भर हूँ ।

सस्नेह
निराला

१ 'महाकवि निराला नामक विशा समीक्षात्मक ग्रन्थ, जिसका एक
हल्का सा आभास मनु ६३ म मेरे द्वारा सम्पादित प्रकाशित—महाकवि
निराला—में प्राप्त हो सकता है ।

१०४

The Rashtra Bhasha Vidyalaya
Gai Ghat
Benares
20148

आचाय,

पत्र आया। रामायण के छपे दो फाम बुकपोस्ट स भेज निय, मिल होगे।

जुकाम से पछवारे भर शिकस्ती रही। अब कुछ अच्छा है। काम बढ़ है। बल-बरसो से शुरू होगा। ३/४या फाम चल रहा है।

यह किताब, बहुत दस-बारह फाम की होगी। फुमत हो या एक-दो दिन की छुट्टी मिले, १०/१५ दिन में, चले आइए।

अनुवाद कैसा लगा, लिखिए, छापने का विचार है साथ साथ।

और भी अधिकारी रहेंगे। नलिन विलोचन जी पटना कॉलेज में हैं, नजदीक हुए।

कुछ फुरसत होने पर बिहार में मित्रों से घूमकर मिलने की इच्छा है। बाकी कुशल है।

फिर आवश्यक बातचीत आ जायगी जैसे एक एक साहित्य के नक्षत्र आ जाते हैं।

शल को स्नेह, नमस्कार। इति।

शुभपी

सूय्यकांत त्रिपाठी
निराला

निराला के पत्र

१०५

राष्ट्रभाषा विद्यालय,
गायघाट काशी
आपाठ बंदी २५ ६ ४८

प्रिय आचार्य,

हम सकुशल काशी पहुंच गये।^१ रास्ते में साधारण कष्ट रहा।

एक सप्ताह सम्मेलन को दिया है काव्य का।

यहाँ तीन दिन से जल गिर रहा है। गंगा में बाढ़ आ गई है।

आम खब रहे, काशी के लेंगड़े। जाडो में अमरूद थे।

तुलसी अनुवाद का कवर छपने को रहा है। बुबुरमुत्ता सशोधित अब फाम
रूप छपने को है। एक कहानियों का सप्ताह भी साय निकलेगा। फिर और
और।

आजकल में बाहर चलने की तर रहे हैं। ठण्डक हो गई है। काम करने
को है, इसलिए विचार होता है यही से कर लें। रुकाव हो जायगा।

आपके पिताजी को नमस्कार। बाबू साहब (बाबू उमाशंकर प्रसाद) को
स्नेह, आपकी पत्नी को भी।

बेटी (शैल) को प्यार।

सस्नेह
निराला

१ देवी चंद्रकला के स्वगवासके एक वर्ष बाद १४ जून '४८ को छाया मेरी
सगिनी बनी। इसी अवसर पर निराला छाया के लिए बहुमूल्य उपहार लेकर
मेरे यहाँ (मुजफ्फरपुर) आए थे। उनसे साथ काशी, राष्ट्रभाषा विद्यालय के
मेहरोत्रा जी भी थे। कई दिनों बाद काशी लौटे थे।
२ सन् २८ में बाल विवाह और सन् '४८ में बद्ध विवाह। मेरे अन
व्याहे मन को दो-दो बेमेल ब्याहा से ताल-मेरु बठाना पडा।

१०६

The Leader Press,
Allahabad
13 49

प्रियवर,

चिरकाल पश्चात पत्र प्राप्त हुआ । देशदूत और साप्ताहिक भारत क गीत भी देखे होंगे ।^१

आपका तार नहीं मिला या न दिया गया होगा । कारण हैं ।

हम अब भी पूर्ण स्वस्थ नहीं उँगलियों मे सूजन है । सर पर अब दो बड़े चिह्न हैं ।^२

एक गीत भेजते हैं—

आपका
निराला

गीत

मन मधु बन आली, आली !

ईरण तन की, ज्योति तपन की

गगन घटा काली-काली !

—नि०

१ 'रचना की श्रुति बनी बनी तुम
श्रुति के नयन नवीन बनीं तुम !

—उस जमाने का सर्वश्रेष्ठ गीत था । यह प्रयाग के सगम में प्रकाशित हुआ था । जाने क्यों, यह अचना आराधना में संकलित न हुआ । निराला ने भी अत्यंत कहीं इसकी सविशेष चर्चा नहीं की ।

२ मैं उन व्रण चिह्नो पर दो मौलिमालाएँ अर्पित करता हूँ —

(१)

जीवन ज्योति जले !

अधिर तिमिर आलोक-लोक को

पल छिन भी न छले !

शूल न हूले फूल-नात मे,

सुरभि न भूले महाबात में,

पडे पडाव हके टुक,

पथी आगे और चले !
 जीवन ज्योति जले ! !
 चाव घटे मत बीच बाट में,
 मात्र गिरे मत उठी हाट में,
 मत कौड़ी के मोल बिके मणि,—
 दिनमणि ढले, ढले !
 जीवन ज्योति जले ! !
 मानदण्ड मत बने प्राण ही,
 व्यापक लक्ष्य, कि आसमान ही,
 आत्मा की प्रतिमा गढ़ने,
 कचन-तन तपे, गले !
 जीवन-ज्योति जले ! !

—‘उत्पलदल’

(२)

साध्यतारा क्यों निहारा जायगा !
 और मुझसे मन न मारा जायगा ! !
 बिकल पीर निकल पड़ी उर चीर कर,
 चाहती रुकना नहीं इस तीर पर,
 भेद यो, मालूम है पर पार का
 धार से कटता किनारा जायगा !
 चाँदनी छिटके घिरे तम-तोम या,
 श्वेत श्याम बितान यह कोई नया ?
 लोल लहरों से ठने न बदाबदी,
 पथन पर जमकर विचारा जायगा !
 म न आत्मा का हनन कर हूँ जिया
 ओ, न मने अमृत बहकर पिय पिया
 प्राण गान अभी चढ़ें भी तो गगन,
 फिर गगन मू पर उतारा जायगा !

—‘उत्पलदल’

१०३

श्रीरक्ष

द्वय

२३-१-११

श्रीरक्ष

एक शीत' शरणा के लिए आये हैं अतः विदायें विना को लिए आये
देखने को मिलेगा।

एक शरणा में एक विदायें हैं। एक-दो।

बाकी एक - एक ही है। एक

—विराट

१०८

श्रीरक्ष द्वय

द्वय

२३-१-११

श्रीरक्ष द्वय

एक शरणा में एक विदायें हैं। एक-दो।
एक शरणा में एक विदायें हैं। एक-दो।

एक शरणा में एक विदायें हैं। एक-दो।

एक शरणा में एक विदायें हैं। एक-दो।
एक शरणा में एक विदायें हैं। एक-दो।

१ शरणा में एक विदायें हैं।
दुर्लभता उगा उगा।

२ छाये छाये काये काये,
सहजत आये सज्जते।

—विराट

१ कनकता शरणा में विराट का जयश्री-ममारेण आवाजित हुआ था।
महाश्री श्री का अद्यतता में भी आवाज भी लिया था, काश्याउ भी।

दुर्लभता में मरी अन्य शरणा में विराट का सम्मान
दिया गया। यही फिर भी एक अन्वया भाषण दिया था।

निराला के पत्र

कलकत्ता हम सादी पोशाक से गये। अब भी वैसे ही हैं। इसलिए आपको लिख रहे हैं।

हम तो एक साधारण आदमी हैं। हमारे साथ वाले भी ऐसे ही। हम भीतरी हाल नहीं मगव सके।

रामकृष्ण ऐसे न थे, नहीं मालूम, सही क्या है। हमारी दृष्टि में आप कम ही।

आपका

निराला

स्कूल के मास्ट्रो ने निराला को एक बटुआ सौ सवा सौ रुपयों का भेंट किया जो अष्टम्य होने के नाते मेरे हाथ में दिया गया। मैंने उस उमी समय निराला की ओर बढ़ा दिया। निराला ने लेने से इन्कार किया

‘तुम रखो। मैं क्या कहूँगा?’

मैंने कहा “रामकृष्ण को दे दूँगे।”

तो बोझे—

‘और तुम कौन हो?’

मैं क्या कहना, चुपचाप बटुआ रख लिया। योगायोग ऐसा कि उसके बाद मुझे मुजफ्फरपुर लौट आना पड़ा। छाया जी की भयानक बुद्धि में (डा० दुर्गा प्रसाद नन्दे के विश्वगत आश्वासन पर) बहीश छोड़कर, निराला के उत्सव के उरसाह से ही केवल दो दिनों के लिए, कलकत्ता गया था।

फिर क्या बकौल आचाय परमानन्द गर्मा में वे सौ एक रुपए नहीं, किमी प्रेत के मुह से दाँत निकालकर चला आया था। उन्हें भी मित्रता का मूल्य चुकाना पड़ा। निराला के गण ने काफी लानत मलामत की। एक दिन फँजाबाद से भाई रामकृष्ण त्रिपाठी का एक बड़ा ही कठोर पत्र मिला कि ‘मैं जो रुपया लेकर भाग गया था, वह भले भले न लोग दूँगा तो वह मुकद्दमा दायर करके बसूल लूँगे।’

भैया तो होश फाँटना हो गया। जितनी भर कागो की सेज सोया, यह भैया तो होश फाँटना हो गया। जितनी भर कागो की सेज सोया, यह

‘नन्वेसर कागो ले भागा वाला गुण होता तो हरी भरी उम्र, देखते देखते, कपो गाव पुद हो जाती।

अब कही निराला के माये का घाव फूटा। मुना या अपरा’ पर जो उन्हें पारितोषिक मिला था उम उहॉन नहीं लिया था। स्व० मुञ्जी नवजादिक लाल श्रीवास्तव की विधवा के नाम उत्सव कर दिया था। इस आराम दान की छीय स्वजनों ने उनकी खोगनी से निकाली थी। निराला न मुहें दबकर घोपटी खोन्ने वालो का बिस्सा मुनाया था।

घटराग न फँगाया गया होता तो मैं कहने ही मट से रुपय निकालकर दे देता। अब बस, इस बदन हूँ नजारे की सूचना भर निराला को दे दी थी।

१०६

दारागंज,
प्रयाग
१५ १ ५७

प्रियवर,

आपका पत्र मिला । ३ पुस्तकें भी मिलीं । मैं प्रमत्त हूँ । पढ़ूँगा ।

डाक्टराने से अब प्रायः सरोकार नहीं रहता ।

विश्वविद्यालय वाद विवाद प्रतियोगिता का आप लोगो का हक म अच्छा फल होगा, आशा है ।

आपका
निराला

Daraganj Allahabad
24-4 61

Acharya Janaki Vallabha Shastri now a days is one of the foremost bards from Bihar in Hindi Literature He has a musical voice to render services in Hindi poetical field and attain success among flowers and buds casting scents un parallel from their composition Recently the famous poet Janaki Vallabh, equally a critic novelist essayist and short story writer has contributed to Hindi a number of books of different valour and fragrance and embellished well the variety of mother language

—Nirala

तयो, चि ताधारा और पापाणी ।

मगलमय हो सु दरतर जो ।

चिमय गिरा अय रस बरसे—

घनानन्दमय अन्तर स्वर जो ।

पनघट पर घट रहे न रोता,

प्रीति न हो प्रभुता की शोभा,

नीति आचरण की परिणीता

पावन हो मनभावन बर जो ।

शूल मोल को मिले अतल बल,

नीलकण्ठ को सघन गगन तल,

मानस के निमित्त हो चचल—

कदम भीत समुज्ज्वल पर जो ।

—उत्पलदल



